ईश्वरचन्द्र



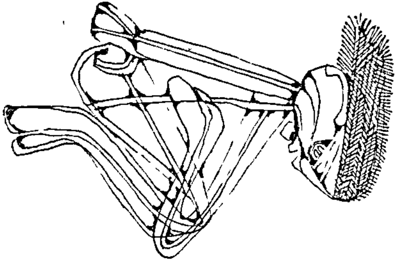
अन्दर का बौनापन

मूल्य : बारह रुपये / प्रथम संस्करण : जुलाई १९७९ / आवरण : ज्योतिकुमार /
प्रकाशक : पराग प्रकाशन, ३/११४ कर्ण गली, विश्वासनगर, शाहदरा
दिल्ली ११००३२ / मुद्रक : भारती प्रिंटर्स, दिल्ली ११००३२

ANDAR KA BONAPAN (*Short Stories*) Ishwar Chander



क्रम



अन्दर का बौनाप

दो ढाई घंटे पहले तार मिल गया था।

मैं, मेरी बीवी और मेरे बच्चे—सब खुश हो रहे थे कि आज टिक्कू आयेगा। मुझे अपने भाई के मिलने की खुशी थी, तो मेरी बीवी को मेरे भाई की बीवी से मिलने की। और बच्चे तो शायद सबों के आने से खुश थे। *वे खड़े-खड़े आपस मे फुसफुसा रहे थे। कोई कहता—'अक्लजी मोटे* हो गये होंगे' तो दूसरा कहता—'आंटी कैसी होगी ?. हमने तो देखी नही...' तब फिर जैसे उसके उत्तर मे कोई कहता—'विलायत की मेम होगी। अरे, बहुत गोरी-गोरी होती है विलायत की मेम।'

और इधर मैं था कि ट्रेन के लिए बार-बार दूर तक झांककर देखता, कि कही गाडी आती दिखायी दे जाए। वैसे कोई खास बात नहीं थी, लेकिन थोडा थक गया था मैं। गाडी का समय निकल चुका था, लेकिन गाडी अभी तक प्लेटफॉर्म पर नहीं आयी थी। और न ही ऐसा लग रहा था कि गाडी लेट है।

वैसे टिक्कू ने पालम आने के लिए लिखा था। लेकिन मैं ही जान-बूझकर नहीं गया। कुछ विशेष तो होता नहीं वहा। अदर तो कस्टमवाले एक-एक पेटी को खोल-खोलकर देखते हैं, और हम बुद्धू बने बाहर, काच के पीछे से झाकते रहते हैं।

तो उसी कारण मैंने अपने मौसाजी को लिख दिया था कि आप वहा

दिल्ली मे रहते है। टिक्कू को रिसीव करने आप ही पालम चले जाए। और फिर जिस गाडी से टिक्कू और उसके बीवी-बच्चे यहा के लिए रवाना हो, उसकी सूचना तार द्वारा मुझ तक पहुचा दें।

दो-ढाई घटे पहले तार मिल गया था।

तब वही स्टेशन पर खडे-खडे मैने अपनी बीवी से पूछा, "टिक्कू की बीवी से कैसे मिलोगी?"

बीवी ने एक बार आश्चर्य से मेरी तरफ देखा, फिर बोली, "मिलने से आपका क्या मतलब है?"

मैने कहा, "वो वो ऐसा है कि उसे गले मिलोगी, या विदेशी ढग से हाथ मिलाकर ही उसका अभिनदन करोगी?"

तब बीवी बोली, "क्यो? मेरे पैर नही छुएगी वह?"

मै बोला "क्या पता? शायद नही भी छुए। आजकल अपने इधर की छोकरिया ही पैर नही छूती, तो वह विदेशी लडकी क्या छुएगी!"

बीवी भी शायद मेरी राय से सहमत थी, इसलिए चुप हो गयी।

असल मे हुआ ऐसा था कि टिक्कू के रिश्ते के लिए, यहा हमने एक आदमी से बात करीब-करीब तय भी कर ली थी। तब टिक्कू को हमने सूचित किया था, तो जवाब मे लौटती डाक से उसकी चिट्ठी आ गयी थी कि हम लोग ऐसे ही जल्दी मे बात पक्की न करें। वह जब स्वदेश लौटेगा, तब सब तय कर लेंगे।

उन दिनो मुझे तो कोई शक नही हुआ था, लेकिन मेरी बीवी को कुछ-कुछ सदेह हो गया कि कही बाबू ने वही कोई लडकी पसद तो नहीं कर ली है!

मेरी बीवी टिक्कू को 'बाबू' के नाम से ही पुकारती है। हम लोगो ने जब शादी की थी, तब टिक्कू आठवी मे ही तो पढता था। उन्हीं दिनों, जब वह दसवी क्लास मे आया था, तब स्कूल की किसी लडकी के साथ चल रहे अपने रोमांस के छिटपुट किस्से वह अपनी भाभी को बता दिया करता था। कभी कभी शायद अपनी भाभी से वह कोई राय भी ले लिया करता था।

शायद टिक्कू की उन दिनो की बातों से, या उसके रोमांटिक स्वभाव

के आधार पर ही, उसकी भाभी के मन मे ऐसा सदेह उठा होगा कि बाबू ने वही कोई लडकी पसद तो नही कर ली है !

तभी फिर एक दिन हम दोनो को बडा धक्का-सा लगा, जब हमारे पास टिक्कू का एक औपचारिक-सा पत्र आया, कि उसने वही एक विदेशी लडकी से शादी कर ली है।

तब हम दोनो को लगा था कि आज अगर माजी और बाबूजी जिंदा होते, तो शायद ऐसा नही होता। या उनके जिंदा रहते हुए टिक्कू को शायद ऐसा कुछ करने की हिम्मत ही नही होती।

हमे भी बुरा तो लगा था, लेकिन कर क्या सकते थे। वैसे कोई खास बात तो नही थी। पर शर्म इसलिए आ रही थी कि उन लोगो को हम क्या जवाब देंगे, जिनसे हमने रिश्ता करीब-करीब तय कर लिया था।

फिर नहले पर दहला और—कि शादी को अभी छह महीने ही मुश्किल से बीते होगे कि टिक्कू की एक चिट्ठी आयी कि उसके घर मे लडकी ने जन्म लिया है। साथ मे उसने स्पष्टीकरण के बतौर यह भी लिख दिया था कि हम लोग हैरान न हो। शादी से पहले ही हमारे भावनात्मक सबध हो गये थे। और जब कुछ छिपाना बाकी नही रहा था, तो शादी करनी ही पड गयी थी।

इस बात को हम लोगो ने अपने तक ही रखा था। लोग सुनते, तो क्या कहते ? और फिर घर मे एक जवान बहन भी है। उस पर इस बात का क्या असर होता ? यही सोचकर हम लोग इस बात को पी गये थे।

फिर दो साल बाद एक चिट्ठी और आयी थी कि अबकी बार टिक्कू के घर मे एक लडके ने जन्म लिया है।

तब, उन दिनो एक-दो बार हमने टिक्कू को लिखा था कि अपने पूरे परिवार का एक फोटो हमे भेज दे। लेकिन हर बार उसका यही उत्तर आता कि यह जल्दी ही बीवी-बच्चो के साथ स्वदेश लौटेगा। तब हम सब एक-दूसरे से मिल लेंगे।

तब के बाद, अब जाकर टिक्कू अपने देश लौट रहा था।

गाडी आयी, तो सब लोग चौकन्ने हो गये। मैंने बच्चों को थोडा पीछे हटने

के लिए इशारा किया। इजिन जब हम लोगो के बिलकुल करीब से गुजरा, तो मैंने अपनी बीवी के चेहरे की तरफ देखा। लगा, उसकी आखो म एक अजीब-सी चमक आ गयी थी।

तभी हम लोगो ने देखा कि फर्स्ट क्लास के एक डिब्बे के द्वार पर टिक्कू खडा था। गाडी रुकी भी न थी कि उससे पहले ही हम लोगो ने एक-दो बार हाथ हिला दिये। हमारा छोटू मास्टर तो तालिया बजा-बजाकर हसने लगा, "अकल आ गयें ! अकल आ गये !" ~

गाडी रुकी, तो हम लोग भागे-भागे उस डिब्बे की तरफ गये, जहा द्वार पर टिक्कू खडा था। उसे देखकर, मुझे अपने बच्चो की फुसफुसाहट याद हो आयी। टिक्कू सच मे, पहले से काफी मोटा हो गया था।

टिक्कू अब तक नीचे उतर आया था। पहले तो वह गले-वले नही मिला। हमे देखकर थोडा मुसकराया, फिर 'कुली-कुली' चिल्लाने लगा। कुली आया, तो उसे सामान वगैरह के सबध म कुछ कहकर वह मेरी तरफ बढ आया। मेरे गले लगने के बाद वह अपनी भाभी की तरफ बढ गया। अपनी भाभी के उसने पैर छुए तो नही, लेकिन उसी अदाज मे थोडा झुका जरूर, जैसे उसके पैर छू रहा हो।

फिर उसने मेरे बच्चो के सिर पर हाथ फेरकर उन्हे एक-एक बार चूम लिया।

तभी हम लोगो की नजर डिब्बे से उतरती एक नीग्रो लडकी पर गयी। पीछे-पीछे दो बच्चे भी उतर आये।

नीग्रो लडकी को देखकर हम लोग चौंक-से गये। लेकिन फिर जल्दी ही हमने अपने आपको सभाल लिया, कि हमारे चौंक जाने का टिक्कू को कोई आभास न हो। उधर फिर अपने बच्चो की तरफ देखने से मुझे लगा कि मेरे बच्चो का भी वह सपना बिखर गया होगा, कि विलायत की मेम तो गोरी-गोरी होती है।

तभी टिक्कू ने पहले उस नीग्रो लडकी को इशारे से बुलाकर वही की भाषा मे कुछ कहा, जिससे लगा कि टिक्कू उसे हम लोगो का परिचय दे रहा है। तब वह नीग्रो लडकी मुसकरायी। उसके दात कोई ज्यादा सफेद नही थे, लेकिन उसके काले चेहरे के मुकाबले दात कुछ सफेद-से लग रहे

थे। होठ उसके बहुत मोटे-मोटे थे। बाल भी बहुत अधिक घुघराले और छोटे-छोटे-से थे। ऐसा लग रहा था, जैसे कई दिनो से उसने बालो का तेल-वेल नही लगाया है।

मैं अभी ऐसी फालतू की बातें ही सोच रहा था कि लडकी ने अपना हाथ आगे बढा दिया। मैंने उससे हाथ मिलाया। फिर वह मेरी बीवी की तरफ बढ गयी। बीवी को शायद उससे हाथ मिलाना कुछ अजीब-सा लगा, तो उसने बस जैसे हाथ उसके हाथ से छुआकर ही हटा लिया।

कुली जब सामान उठाने लगा, तो हम चोर निगाहो से टिक्कू के दोनो बच्चो की तरफ देखने लगे। हमने देखा लडकी काली काली-सी है। शायद मा पर गयी है। लेकिन लडका तो ऐसा लग रहा था जैसे टिक्कू ही हो। उसे देखकर मुझे बचपन के वे दिन याद हो आये, जब मैं टिक्कू को गोद मे लेकर खेल खिलाया करता था। वह लडका तब मुझे जैसे बचपन-वाला टिक्कू ही लगा। सिर्फ रग उसका काला था।

सामान बहुत था। बाहर आकर हमने टैक्सी कर ली। जब टैक्सी चली, तो टिक्कू की नीग्रो बीवी बार-बार झाककर बाहर देखने लगी। उसके चेहरे से लगा कि हमारा शहर शायद उसे खास अच्छा नही लग रहा है। लेकिन मेरी बीवी का ध्यान उन लोगो के सामान पर लगा हुआ था कि पता नही टिक्कू विलायत से क्या-क्या लाया है! या फिर रह-रहकर वह टिक्कू की बीवी की लुगी की तरफ देख रही थी, जो उस नीग्रो लडकी को बिलकुल ही अच्छी नही लग रही थी।

तभी टिक्कू ने पूछा, "सिंधु कैसी है, दादा .! बडी हो गयी होगी अब तो ?"

मुझे लगा कि टिक्कू ने महज कुछ बोलने के लिए ही औपचारिक-सा सवाल पूछ लिया है। अब शायद यह भी पूछेगा कि उसकी कहीं बात-बात चलायी या नही! इसलिए मैं बोला—"हा! बडी तो हो गयी है। एक-दो घर भी ध्यान मे हैं। अब तुम आ गये हो, तो कहीं न कहीं तय कर लेंगे।"

वैसे, यह सच भी था कि हमारी बहन अब काफी बडी दीखने लगी थी। पिताजी अगर आज जिंदा होते, तो वह यह कभी गवारा नही करते

कि इतनी बड़ी लडकी अभी तक घर पर ही बैठी रहे।

टिक्कू फिर बोला, "दादा! आजकल ये कस्टमवाले बहुत तंग करने लगे हैं। एक-एक चीज को ऐसे देखते हैं, जैसे हमारे पास कोई चोरी का माल हो! और फिर अच्छा हुआ कि मैं सामान कोई ज्यादा नही लाया।"

मैंने भी महज उत्तर देने के लिए कह दिया—"हाऽऽऽऽ! सुना है कि वे आजकल बहुत स्ट्रिक्ट हो गये हैं।"

तब मुझे लगा कि इस बात की अभी कोई जरूरत नही थी। लेकिन शायद चल रही बात को बदलने के विचार से ही, उसने किसी गभीर बात के बीच, ऐसी कोई हल्की-फुल्की बात कह डाली। साथ ही साथ मुझे यह भी लगा कि टिक्कू ने अप्रत्यक्ष रूप से यह भी बता दिया है कि वह कोई ज्यादा माल नही लाया है। शायद उसे डर होगा कि उसका भाई उससे कुछ माग न ले।

तभी एक क्षण को मैंने सोचा कि कह दू—'सामान तो बहुत है ..'

लेकिन फिर मुझे खुद ही लगा कि वह कह सकता है, कि वह तो औरो को देने के लिए इधर-उधर से कुछ मिला है। सो तो उन्हे देना ही है।

इसलिए अपने शक को मैंने अपन तक ही सीमित रखा। बोला कुछ नही।

लेकिन उस शक से अलग हटकर मुझे यह अच्छा लगा, कि टिक्कू ने मुझे 'दादा' ही कहकर पुकारा। वरना मैं तो यही सोचे बैठा था, कि जिस लडके ने शादी करने तक मे हमसे कोई सलाह नही ली, वह भला क्या हम लोगो को इज्जत से बुलायेगा!

हम घर पर पहुचे, तो सिधु बाहर ही खडी थी। टैक्सी को आता देख वह शायद समझ गयी थी, कि हम लोग ही होगे। वरना हम लोग तो ऐसे पडोस मे रहते है, जहा पर अक्सर कोई कार या टैक्सी नही आती। केवल किसी स्कूटर की आवाज कभी-कभी सुनाई दे जाती है। वह भी तब, जब हमारे घर से दो घर आगेवाले घोषाल बाबू की बीवी को दौरे आते है और डॉक्टर उसे देखने आता है।

टैक्सी रुकी, तो टिक्कू की बीवी, चुपचाप, बच्चो के साथ बाहर आकर

खडी हो गयी। हम लोग सामान उतारकर अदर ले गये। टिक्कू ने सिंधु की चोटी पकडकर आते ही उसे छेडना शुरू कर दिया। फिर उसने सिंधु का अपनी बीवी से परिचय करवाया। मुझे लगा सिंधु को शायद अपनी नयी भाभी अच्छी नही लगी। उससे हाथ मिलाने के बाद उसने मुह फर-कर चेहरे की अजीब सी मुद्रा बनायी। सिंधु को ऐसा करते देख मेरी बीवी भी अजीब ढग से मुसकरा दी।

पहने तो बहुत हल्की फुल्की सी बात होती रही। फिर वे लोग नहा धोकर नाश्त से फारिग हुए तो नीग्रो लडकी ने अपनी भाषा म टिक्कू से कुछ कहा। टिक्कू बोला— भाभी, सिर दर्द की कोई गोली वगैरह है क्या? इसका सिर दुख रहा है।

मरी बीवी बोली— हा है!

पानी के साथ टिकिया लेकर उसकी बीवी खटिया पर लट गयी।

लटने से पहले, जब वह नाश्ता कर रही थी, तब मैंने देखा था कि उसके चेहरे पर कुछ ऐसे भाव थे, कि वह कहा आ गयी है!

हमारा छोटा सा, और कम फर्नीचरवाला घर शायद उसे अच्छा नही लगा था। मेरा एसा अनुमान है कि नाश्ता करते हुए उसने अपनी भाषा मे टिक्कू से ऐसा कुछ शायद कहा भी था। लेकिन टिक्कू ने उस वक्त अपने चेहरे पर कोई भाव नही आन दिया तो मुझ लगा, शायद मैं ही गलत सोच बैठा होऊ।

बैठ-बैठे एक बार मरी निगाह उस लेटी हुई नीग्रो लडकी की तरफ उठ गयी तो मुझे उसका शरीर बडा असतुलित सा लगा। हालाकि नहा लने के बाद वह पहल से कुछ ठीक ठीक या कहना चाहिए अच्छी लग रही थी। उसने अब जापानी डिजाइन की एक बढिया सी लुगी लपेट ली थी। लकिन उस लुगी के रग उसके काने शरीर पर नही फब रहे थे।

वह शायद थकी हुई थी। लटते ही उसे नीद आ गयी और वह जोरा से खर्राटे भरन लगी।

तब मेरी बीवी बहुत धीमी आवाज म टिक्कू स बोली— बाबू! तुमन तो हम लोगो की नाक ही कटवा दी।"

टिक्कू शायद बात को समझ तो गया, लेकिन फिर भी हैरानी का अभिनय करता हुआ-सा बोला—"क्यो क्यो ?"

उसकी भाभी बोली—"अगर तुझे शादी ही करनी थी, तो कोई लडकी तो लेता। यह क्या काली हथिनी उठा लाया है ? यहा हम लोगो ने तेरे लिए ऐसी लडकी ढूढ रखी थी, कि तू देखता ही रह जाता।"

टिक्कू को तो यह बात बुरी लगती ही, पर मुझे भी बुरी लगी। मुझे आज पहली बार महसूस हुआ कि मेरी बीवी कितनी फूहड है। बात कहने का कोई सलीका या ढग होना चाहिए। यह क्या कि बैठे-ठाले एक औरत की हथिनी से ही तुलना कर डाली।

टिक्कू जोर जोर से ठहाके मारने लगा। फिर जब उसके ठहाके कम हुए तो बोला 'तुम्हे पता नही है भाभी, कि इस हथिनी के पास कितना पैसा है ! अरे, यह वहा के एक लखपति सेठ की लडकी है। यह तो भाग्यचक्र कुछ ऐसा चला कि हसी-हसी मे हम लोग ऐसा कुछ कर बैठे कि शादी कर लेने के सिवा और कोई रास्ता ही नही रहा।"

मेरी इच्छा हुई कि मैं भी कुछ बोलू और कह दू कि कुछ भी किया, लेकिन गले मे घटी बाधने की ऐसी क्या जरूरत आ पडी थी ? लेकिन फिर मुझे लगा कि मैं टिक्कू का बडा भाई हू, ऐसी गैरजिम्मेदाराना बात मेरे मुह से शोभा नही देगी, इसलिए मैं चुप ही रहा।

तब शायद बात का रुख बदलने के लिए टिक्कू मेरी तरफ देखकर बोला, "दादा ! मैंने आपको कुछ दिन पहले लिखा था कि मैं आने को हू, आप लिख भेजें कि मैं आपके लिए क्या ले आऊ ? लेकिन आपने तो इस बात का कोई उत्तर ही नही दिया बहरहाल मैं आपके लिए एक घडी लाया हू। नये डिजाइन की है। अलार्म भी उसी मे फिक्स है।"

इस बात पर मुझे खुश होना चाहिए था, लेकिन न जाने क्यो, मुझे कोई विशेष खुशी नही हुई।

उस क्षण मैं तो यही सोच रहा था कि कल से लोग जब मिलने आयेंगे, तो टिक्कू की नीग्रो बीवी को देखकर क्या सोचेंगे या फिर क्या कहेगे ! पडोस के कुछ बच्चे तो अब भी झाक-झाककर अपने घरवालो तक शायद यह खबर ले जा चुके हैं, कि टिक्कू आया है और उसके साथ पता नही कौन

काली औरत आयी है।

तब टिक्कू फिर बोला, "घड़ी निकाल दूं, दादा! ...उस सफ़ेद बैग में है।"

वैसे ही मैं बोला, "...क्या जल्दी है। आराम से निकाल लेंगे।"

लेकिन मेरी बीवी के चेहरे से लग रहा था कि वह तो तत्काल, उसी ही क्षण सब कुछ देख लेना चाहती थी, कि बाबू विदेश से क्या-क्या ले आया है!

तब फिर मेरी बीवी ने टिक्कू से सवाल किया, "बाबू, वहां क्या अपना भी कुछ पैसा जमा किया है, या लखपति बीवी के सहारे ही चल रहे हो!"

ऐसे सवाल से उसे कैसा लगा, यह मैं तो भांप नहीं पाया, लेकिन उसने उत्तर दिया, "अरे, भाभी! जमा किसके लिए करूं वहां? ...पहले पिताजी को जरूरत पड़ती थी, तो लिख दिया करते थे। अब आप लोगों ने कभी पैसे-वैसे के लिए लिखा नहीं, तो मैं समझा कि भगवान की दया से दादा को अच्छी तनख्वाह मिल जाती होगी, इसलिए शायद आप लोग नहीं लिख रहे हैं। रही इस लड़की की बात, सच बताऊं, भाभी! अभी तक मुझे ही खुद पता नहीं है कि इसके पास कितना पैसा है! वैसे दो-चार मकान इसके नाम हैं। एक पूरा बागान भी है। कुछ रकम फिक्स में है। बाकी सोना-वोना तो बहुत है। पूरा हिसाब तो मैंने भी आज तक नहीं लगाया।"

मुझे महसूस हुआ कि नीग्रो लड़की से शादी करने की गलती को वह रुपये-पैसे के पर्दे में ढंकना चाहता है—कि देखो, काली है तो क्या हुआ? —पैसा कितना है! और फिर पैसा कमाने के लिए ही तो हम लोग विदेश जाते हैं।

तब फिर मैं सोचने लगा कि देखो, टिक्कू कैसी बेहूदा बात कह गया! पिताजी लिखते थे, तो वह पैसे भेज देता था। मैं नहीं लिखता, तो इसे लगने लगा है कि भगवान की दया से हमें जरूरत नहीं पड़ती होगी.. हम तो इस शर्म के मारे नहीं लिखते थे कि छोटा भाई है, उसके सामने क्या हाथ फैलाएं? तो इसे लगता है कि हम तो सुख से रह रहे हैं। यह जो घर में जवान बहन बैठी है, उसकी शादी में जो खर्चा होगा, वह सब क्या मैं अपनी

इस क्लर्की से ही भर पाऊगा ! अपनी ही बहन के प्रति क्या टिक्कू की कोई जिम्मेदारी नही है ?

एक क्षण को तो सोचा, स्पष्ट कह दू कि भई, तुम्हे अगर ठीक लगे, तो कुछ भेज दिया करो। यहा मेरे चार-चार, पाच-पाच बच्चे हैं, तुम्हारी-मेरी बहन है, पूरी गृहस्थी है। क्या नही चाहिए ?

लेकिन उससे पहले ही मेरी बीवी बोल पडी, 'बाबू, तुम अपने भैया को भी वही क्यो नही बुला लेते ? यहा तो ये क्लर्की करते-करते बस दाल-रोटी ही जुटा पाते है। सच पूछो बाबू, कई दिनो से सोने की एक अगूठी बनवाने की इच्छा है, लेकिन बनवा नही पाते। बचता ही कहा है कुछ जो सोना-वोना बनवाया जाए।"

ऐसा कहते हुए मेरी बीवी की नजर नीग्रो लडकी की बाहो की तरफ उठ गयी जिसमे सोने के मोटे-मोटे कगन दिखायी दे रहे थे।

लेकिन बीवी की यह बात भी मुझे अच्छी नही लगी। मुझे लगा, यह सब कुछ-कुछ भीख मागने जैसा है।

तभी मुझे टिक्कू की वह बात याद हो आयी कि वह माल वाल ज्यादा नही लाया है। तब लगा, टिक्कू के उस बात के कहने का एक कारण यह भी तो हो सकता है। उसे शायद लगा हो, कि यहा के लोगो को तो ऐसे ही कुछ न कुछ मागने की आदत होती है, इसलिए माल-वाल के लिए कुछ गोल-मोल ही बता देना ठीक है।

हुआ भी वैसा ही। टिक्कू शायद अपनी भाभी की बात समझ गया। बोला, 'अगूठी ही चाहिए न, भाभी ! अरे, मेरी मिसेज के पास बहुत है, एक तुम ले लेना।"

मैंने देखा, मेरी बीवी इस बात से बहुत खुश नजर आ रही थी। लेकिन मैं मन-ही-मन छोटे भाई के सामने अपने को बौना महसूस करने लगा था। यह स्थिति मुझे स्वीकार नही थी कि कही ऐसा कुछ हो, जो मैं न जुटा पाया हू, और अपने छोटे भाई के सामने उस चीज के लिए मुझे हाथ फैलाना पडे।

टिक्कू उसे सोने की अगूठी देगा, इस खुशी मे मेरी बीवी को कुछ सूझ ही नही रहा था। लेकिन फिर भी कुछ न कुछ बोलने के लिए उसने मुझसे

जैसे बड़ी असमंजस की स्थिति में टिक्कू ने कभी खटिया की तरफ देखा, तो कभी हम लोगों को। वह शायद सोच नहीं पा रहा था कि उसे क्या कहना चाहिए!

तभी उसकी बीवी ने फिर अपनी ही भाषा में टिक्कू से कुछ कहा। टिक्कू के चेहरे से तब लगा कि कोई ऐसी बात है, जो टिक्कू हम लोगों से छिपा रहा है, या नहीं कहना चाहता।

तब फिर मैंने ही पूछ लिया, "वह क्या कह रही है, टिक्कू ?"

टिक्कू बोला, 'वह कह रही है कि ऐसे में तो उसे रात को नींद नहीं आएगी।"

जानकर भी मैंने पूछा, 'कैसे में ?"

कुछ-कुछ संकोच से टिक्कू बोला, "इसका खून शायद मीठा है। खटमलों के बीच इसे नींद ही नहीं आती।"

तब मेरी बीवी बोली, "बाबू, अपनी भाषा में उसे कह दो कि भई, आज की रात ऐसे ही गुज़ार लो, कल बंदोबस्त कर लेंगे।"

इस पर टिक्कू बोला, "नहीं.. वो.. वो.. ऐसा है, भाभी!.. सच तो यह है, कि मुझे भी खटमलों में नींद नहीं आती।"

तब मुझे लगा कि शायद उसको और उसकी बीवी को यह घर अच्छा नहीं लगा है। वहां बड़े-बड़े आलीशान घरों में रहकर देख लिया होगा, तो अब यह घर उन्हें क्यों अच्छा लगने लगा!

एक और शंका ने मेरे मन में ज़ोर पकड़ लिया। कहीं ऐसा तो नहीं है कि खटमलों का बहाना लिया जा रहा है। असल में अपनी आज़ादी में उन्हें शायद यहां खलल-सा महसूस होने लगा है।

टिक्कू की बीवी भी अब पूर्णतया जाग गयी थी। वह इधर-उधर दीवारों पर लगी तसवीरों की तरफ देखने लगी थी। टिक्कू को शायद बहुत देर बाद, अब याद आया कि उसने अपने मां-बाप की तसवीर तो अपनी बीवी को दिखायी ही नहीं।

आगे बढ़कर उसने अपनी बीवी को वह तसवीर दिखाई, जिसमें बापू और मां एक साथ खड़े थे। तब नीग्रो लड़की ने बापू की टोपी की तरफ इशारा करके टिक्कू से कुछ कहा। उसकी बात मेरी समझ में तो नहीं आयी,

लकिन उसक हाव भाव से मैं भाप गया कि बापू व सिर पर टोपी का होना उस लडकी को अजीब सा लगा है या फिर शायद अच्छा नही लगा है।

टिक्कू न हमारे और रिश्तदारो की तसवीरें भी अपनी बीवी को दिखायी।

हम लोग चुपचाप यह सब देखत रहे।

थोडी देर को मुझ लगा कि वातावरण बोभिल बोझिल सा हो गया है।

हम लोगो को चुप देख य लोग आपस म अपनी भाषा म ही कुछ बातें करते रहे।

कुछ देर बाद टिक्कू ने आकर कहा दादा ऐसा करत ह हम लोग होटल म ठहर लेते ह। और कुछ नही बस ऐसे ही सिर्फ सोयेंगे वहा। बाकी दिन भर तो आप लोगो के साथ होंगे ही।

मैंने एक बार अपनी बीवी की तरफ देखा। वह हतप्रभ-सी टिक्कू को दखन लगी थी। उसे शायद उस टिक्कू से ऐसे वाक्य की आशा नही थी जिसे बाबू बाबू कहकर उसने अपने ही बच्चे की तरह हमेशा लाड प्यार दिया था।

टिक्कू मेरा उत्तर जानने के लिए मेरी तरफ देख रहा था। मैं बस इतना ही कह सका देखो जैसा तुम लोगो को ठीक लगे वैसा करो।

न जाने क्यो ऐसा कहते हुए मेरी आवाज भारी हो आयी थी।

टिक्कू शायद भाप गया कि होटल म जाकर ठहरने की उसकी बात से मुझ दुख हुआ है। तब जैसे मुझ खुश करने के लिए बात को बदलता हुआ-सा वह बोला, मैं समझता हू दादा मनीष के काम पर लग जाने क बाद अपने इस घर की आर्थिक स्थिति अच्छी हो जाएगी।

टिक्कू की यह बात मुझ उस वक्त के सदभ से कही भी जुडी हुई नही लगी। मुझ तो लगा जैसे अपनी झप मिटाने के लिए उसे कुछ न कुछ तो बोलना ही था सो बोल लिया।

मैंने कोई उत्तर नही दिया और इस विषय से हटकर कुछ और सोचना चाहा। एक बार इच्छा हुई कि टिक्कू के दोनो बच्चो से कुछ सदभहीन या बच्चा जैसी बातें करू। लेकिन तभी खयाल आया कि वे बेचारे तो मेरी भाषा भी समझ नही पाएगे।

शाम हुई, तो खाना बन गया। अक्सर शाम को जल्दी ही हमारे यहा खाना बन जाता है। इस बीच वे लोग अपने दोनो बच्चो के साथ कही टहलन निकल गए थे, और अभी कुछ देर पहले ही लौटे थे। जब वे लौट रहे थे, तो हमने देखा, पडोस की कुछ औरतें अपने छज्जो पर खडी इन लोगो को देख-देखकर मुसकरा रही हैं या आपस म कुछ फुसफुसा रही हैं।

अनायास ही मुझे टिक्कू पर गुस्सा आया कि एक तो पैसे-वैसे के लालच मे आकर वह एक नीग्रो लडकी को इस घर की बहू बनाकर ले आया है और इधर हमारी नाक कटवायी है, सो अलग।

हम लोग खाना खाकर उठे तो उनकी अपनी भाषा मे खुसर-फुसर से मुझे आभास हुआ कि शायद वे अब वहा से खिसकने की सोच रहे हैं।

तभी नीग्रो लडकी न उठकर अपना एक सफेद बैग खोला। उसमे से उपहार जैसी कुछ चीजे निकाली, जिनमे शायद वह घडी भी थी, जिसका जिक्र सुबह टिक्कू ने मुझसे किया था। फिर टिक्कू के कहने पर उसकी बीवी ने अपने एक छोटे मे बॉक्स मे से सोने की एक अगूठी भी निकाली। मैंने देखा, वह बॉक्स कई अलग अलग प्रकार के गहनो से भरा हुआ था।

फिर उसकी बीवी ने चमचमाती हुई एक साडी निकाली। शायद वह सिंधु के लिए थी।

तब टिक्कू ने धीमे से अपनी बीवी से कुछ कहा, तो उसने एक बार मेरे दो बच्चो को टकटकी से देखा। फिर एक और बैग खालकर उसमे से बच्चों के कुछ कपडे छाट छाटकर निकाले। वे कपडे कोई ज्यादा अच्छ या नये नही थे। एक कमीज का तो एक बटन भी टूटा हुआ था। और एक फ्राक था, जिसके पीछेवाले जिप से लग रहा था कि फ्राक पहले से ही काफी पहना हुआ है।

यह मुझे अच्छा नही लगा। क्या अपने ही छोट भाई के सामने मैं इतना छोटा या गरीब हू, जो मेरे बच्चे वे कपडे पहनेंगे, जो उसके बच्चो ने कई दिनो तक पहन लिये लगते हैं।

वैसा ही हुआ, जैसा मैंन सोचा था। टिक्कू बोला, दादा! ये सब चीजें आप लोगो के लिए हैं। घडी आप रख लेना। अगूठी भाभी के लिए है

और साडी सिंधु के लिए। जापान का काम किया हुआ है इस साडी पर। यहा की करेंसी के हिसाब से करीब-करीब साढे चार सौ रुपये खा गयी है। सिंधु की शादी-वादी मे काम आ जाएगी.. और ये कुछ कपडे बच्चो के लिए है। वैसे ये कपडे तो अच्छे ही है, लेकिन हमारे बच्चे बडे जिद्दी हैं, इन्हें पहनते ही नही। तभी सोच लिया था कि ."

मैं एकटक उसकी तरफ देखने लगा, जबकि मेरी बीवी की नजर टिक्कू के दिए हुए सामान पर लगी हुई थी।

और कुछ न कहकर, मैंने अपनी बीवी से सिर्फ इतना कहा, "इन सब चीजो को उठाकर रख दो।"

फिर मैंने टिक्कू की तरफ देखकर पूछा, 'अपनी बीवी को यही ठहरने के लिए मना लिया तुमने ? वैसे कोई बडी बात तो है नही। कल स्प्रे कर लेंगे। और दिन मे सभी खाटो को थोडा धप मे रख देंगे "

लेकिन टिक्कू बोला, "नही, दादा, अच्छा नही लगता। इसका स्वभाव कुछ ऐसा ही है, बुरा मान जाएगी। . वैसे हम अभी जब घमने गए थे, तब बाइ-द-वे एक होटल मे तय कर आए हैं. .वहा बस सोना ही तो है, बाकी तो दिन भर "

मुझे दुख हुआ कि खटमल उसका या उसकी बीवी का खून पिएगे, इसलिए इस घर का खून अलग जाकर सोएगा।

लेकिन मैंने कोई विरोध नही किया। मुझे लगा कि वह जबर्दस्ती अपनी बीवी के स्वभाव की बात बीच मे ले आया है। असल मे तय तो उन लोगो न पहले से कर ही लिया था। C-229

उसकी बीवी का सिर-दर्द शायद अभी तक कम नही हुआ था। इसलिए उसने एक टिकिया और एक कप चाय की माग की।

चाय-वाय पीकर वे लोग उठे, जैसे मेहमान हो, या जैसे चाय पीने को ही थोडी देर बैठ गए थे।

तब मैंने कहा, 'किसी सामान-वामान की जरूरत हो, तो ले जाओ... ऐसा न हो कि होटल मे फिर तुम्हे तकलीफ हो"

टिक्कू बोला, "नही, दादा, वैसे होटल अच्छा है। हम अदर देख आए

है हर चीज वहा मयस्सर है . हर तरह की सुविधा है वहा।"

मै चुप हो गया। एक बार फिर वातावरण बोझिल-बोझिल-सा लगने लगा।

सिधु मुह फेरकर चौके मे चली गयी।

जब वे भी जाने लगे, तो मुझे लगा, जैसे मेरे घर पर कोई बडे आदमी डिनर पर आए थे, और खाना-वाना खाकर अब वापस जा रहे हैं।

एक बार मैंने उनकी दी हुई चीजो की तरफ देखा। मुझे लगा, जैसे मेरा छोटा भाई सच म ही काई बहुत बडा आदमी हो गया है।

एक बार मन मे आया कि सब-की-सब चीजें टिक्कू को लौटा दू। कहू कि हमे ज़रूरत नही है। लेकिन फिर सोचा कि अगर उसने सच मे ही वापस ले ली, तो मै इतना कुछ भी कहा जुटा पाऊगा!

कोई एक कडवा-सा घूट पीकर मै मौन रहा।

उनके चले जाने के बाद, मैंने एक नज़र अपनी बीवी की तरफ देखा, जो बहुत खुश थी—कि देखो, वे लोग इतना कुछ दे गए हैं और ठहरेंगे भी होटल मे। मुझे लगा कि अभी वह कह देगी कि अच्छा हुआ, वे होटल मे ही ठहर लेंगे। वरना अपने पास एक तो बिस्तरो की कमी है, और दूसरे मेहमानो के पीछे जो दिनभर का झझट उठाना पडता है, उससे भी छुटकारा मिल गया।

मै एकटक बीवी की तरफ देखने लगा कि वह कुछ कहे। लेकिन तब मुझे लगा कि वह शायद सोच रही है कि उसकी ऐसी बात मुझे अच्छी भी लगेगी कि नही!

तभी हम एक आवाज़ सुनायी दी। चौके मे सिधु के हाथ से शायद कोई बर्तन गिर गया था।

एक रात के लिए

तागवाले को उसने सामान अदर रखने के लिए कहा। अभी धूप इतनी तेज नही थी, लेकिन फिर भी उसे लगा कि सब बच्चे शायद अपने-अपने घरो म जाकर सो गए थे। वैसे उसे लग रहा था कि आज गर्मी बहुत तेज थी। रूमाल निकालकर उसने अपनी पेशानी से पसीना पोछा और तागेवाले को पैसे देकर वह अदर चला गया।

अदर उसने देखा कि कुछ मेहमान आ गए थे। कुछ सो गए थे और कुछ आपस मे बुदबुदाकर बातें कर रहे थे। कुछ बच्चे पीछे बरामदे मे खेल रहे थे। उसे आया देख कुछ मेहमानो ने मुसकराकर उसका अभिवादन किया। जवाब मे वह भी थोडा मुसकरा दिया। सामान को थोडा दरवाजे की तरफ खीचकर वह कमरे मे अदर चला गया। उसने देखा—बाप कागज-पेंसिल लेकर कोई हिसाब-किताब कर रहा था। आगे बढकर उसने जाकर बाप के पैर छुए। आखो से चश्मा हटाकर बाप ने उसकी तरफ देखा। और फिर थोडा मुसकराकर बोला—क्यो तुम कल क्यो नही आए ?

'नही आ सका। ऐसे ही फर्म का थोडा जरूरी काम आ फसा, इसलिए " बेटा आगे कुछ नही बोला।

बाप बोला— कल हमने स्टेशन पर आदमी भेजा था, तुम आए नही। बडी फिक्र हो गयी. .लेकिन सोचा कि अगर आज शाम तक भी तुम नहीं

आए तो तुम्हे तार कर दूगा या फिर टेलीफोन पर तुम्हारे मैनेजर से बात कर लूगा लेकिन खैर...सब ठीक है।"

बेटा बोला—' भाभी कहा हैं ?...मुझे थोड़ा पानी चाहिए नहाना है आज गाडी मे भीड भी बहुत थी।"

लेकिन फिर बाप कोई उत्तर दे उससे पहले ही उसने भाभी को बुला लिया। उसकी भाभी शायद चौके मे थी। आवाज़ सुनकर वह चुपचाप अदर कमरे मे चली आयी। उसे लगा कि उसकी भाभी को न तो उसके आने से कोई आश्चर्य ही लगा है और न ही कोई खुशी महसूस हुई है। ससुर की उपस्थिति मे वह कुछ बोली नही। वह ही बोला—' भाभी, मेरे लिए नहाने का थोडा पानी बाथरूम मे रख आओ . और हा, देखना पानी ठडा हो, आज गर्मी बहुत है .!" उसकी भाभी जाने लगी। शायद वाक्य के बाकी हिस्से को सुनना उसने जरूरी नही समझा, या शायद वह समझ गयी थी कि आगे उसका देवर क्या कहेगा। भाभी को ऐसे जाता देख, उसने उसे फिर बुलाया—"और सुनो तो, भाभी !" वही थोडा रुककर भाभी ने छिपी नजरो से उसकी तरफ देखा। वह फिर बोला—'अच्छा, भाभी ! थोडा हसो तो सही . भाभी ! तुम्हे इस बात की थोडी भी खुशी नही है कि तुम्हारा देवर पूरे सात महीनो के बाद आया है।" बोलते-बोलते उसने भाभी की निगाहो मे देखा। उसे लगा कि भाभी की आखो मे आसू भर आए थे। बजाय थोडा हसने या मुसकराने के, वह चुपचाप कमरे से बाहर चली गयी।

उसे यह सब अच्छा नही लगा। भाभी के चले जाने के बाद उसने बाप की तरफ देखा। बाप शायद उसके देखने का अभिप्राय भाप गया, कि बेटा अपनी भाभी के आसुओ का कारण पूछना चाहता है। इसलिए बाप बोला—"देखो बेटे, तुम खुद समझदार हो। आजकल का जमाना ही ऐसा है कि हरेक कुछ-न-कुछ घर से निकालकर काम चला रहा है,...वैसे सच तो यह है कि मैंने कोशिश की थी कि तुम्हारी बीवी के लिए जो भी जेवर वगैरह बनवाए, वे सब नया सोना खरीदकर ही ..और ऐसा मैंने किया भी...तुमने जो पैसे भेजे थे, उनमे से हम लोगो ने कुछ सोना खरीदा भी था। लेकिन फिर भी काफी कुछ बनवाना रह गया...!" बाप फिर

अचानक चुप हो गया।

उसने देखा कि बहू आ रही थी। आते ही उसने देवर से पूछा—"बालो के लिए साबुन रखू या मुल्तानी मिट्टी लगाओगे ?"

बाप की बात के बीच यह हस्तक्षेप उसे अच्छा नही लगा। इसलिए अन्यमनस्क-सा वह बोला—'जो हो, रख दो.. ।'

भाभी चली गयी। उसने फिर प्रश्नभरी निगाहो से बाप की तरफ देखा। बाप ने फिर बोलना शुरू किया—"और ऐसी हालत मे हमारे पास इसके सिवा और कोई चारा नही था कि तुम्हारी भाभी के कुछ जेवर लेकर आनेवाली बहू के लिए कुछ सोना बनवा लेते ..और कुछ नही, केवल एक हार और दो कगन ही लिये थे। उस पर यह सब आग-सी लग गयी है घर मे...! फालतू ही दिनभर रोती रहती है ..मुझे तो, बेटे ! यह सब बडा अजीब-अजीब-सा लगता है।"

बेटा बोला—'देखिए ना, पिताजी ! यहा मैं आपसे सहमत नही हू। जिस बात को लेकर घर मे महाभारत खडा हो जाए, हमे वह काम ही नही करना चाहिए...इस सबके बिना भी तो काम चल सकता था...?"

बहुत धीमी आवाज मे बाप बोला—"हा, चलने को चल सकता था, लेकिन तुम्हारी ससुरालवालो की इच्छा थी कि हम अपनी आनेवाली बहू के लिए जेवर कुछ अधिक बनवायें। ऐसे ही बस, दोनों तरफ बात कुछ सुदर-सी लगती है.. और मैं तो, बेटे ! तुम जानते ही हो, कि इस राय का हू कि सबधियों की बात को टालना अच्छा नही है . कम-से-कम अपने खानदान ने इस मामले मे कभी अपनी नाक नही कटने दी है ."

बाप फिर चुप हो गया। बहू ने अदर आकर देवर से कहा—'पानी मैंने बाथरूम मे रख दिया है। साबुन और मुल्तानी मिट्टी भी रख दी है।"

उठकर उसने अपनी अटैची मे से कपडे और तौलिया निकाला और नहाने को बाथरूम चला गया।

उसके चले जाने के बाद, बाप ने बहू से कहा—"देखना बहू ! जब तक वह नहा आए, तब तक तुम उसके खाने के लिए कुछ बना दो...और हा, किसी बच्चे को भेजकर थोडी बर्फ भी मगवा लेना..." बाप फिर कागज-पेंसिल

लेकर कुछ हिसाब-किताब मे लग गया।

नहा लेने के बाद, वह आकर कमरे मे कपडे पहनने लगा। बाप ने आखो से चश्मा हटाकर कहा—"लो देखो! यह देखो! कल तक मैं पंद्रह सौ के करीब कर्जा ले चुका हू। चौधरी के अभी कुछ पैसे बाकी हैं। तुम्हारी बहन की शादी मे, तुम्हे तो पता है, काफी कर्जा लेना पड गया था। अभी वे पैसे ही नही चुका पाया हू। ऊपर से फिर तुम्हारी शादी के लिए यह कर्जा लेना पड रहा है। आखिर.. "

बाप की बात को बीच ही मे काटकर बेटा बोला—'तो फिर मेरी शादी की ऐसी क्या जल्दी थी। एक कर्जे से छुटकारा मिल जाता, फिर कुछ देख लेते "

बाप बोला—"हू! . सच तो, बेटे! मेरा इरादा भी यही था। लेकिन लडकीवाले जल्दी मचाए बैठे थे...वैसे तो खैर अगर मैं चाहता तो उन्हे भी इनकारी जवाब लिख देता...लेकिन तुम्हे तो पता है, बेटे! कि आज तक मैं अपने सबधियो के साथ ऐसा चलता रहा हू, कि न मालूम क्यो, इन सबधियो को नाराज़ करना मुझे अपनी शान के खिलाफ लगा . और फिर तुम भी तो अब बच्चे नही रहे। आज नहीं तो कल, शादी तो तुम्हारी करनी ही थी।"

लाजवाब होकर बेटा सामने लगी दीवार-घडी की तरफ देखने लगा। बाप ने फिर बोलना शुरू किया—"खैर! इस कर्जे की भी फिक्र नही है। उतार लेंगे। देखो बेटे! बडे कहा करते थे कि मर्दों के कर्जे तो मसानो मे उतरते हैं। यह लेना-देना तो दुनिया मे लगा ही रहता है। लेकिन मैं नही चाहता कि इस लेन-देन के पीछे हमारे अपने ही घर मे झगडे होते रहे...पैसा पैसा हो जाएगा, बात बात हो जाएगी। सभी रिश्तेदारो और मित्रों को हमारे घर की एकता पर रश्क हुआ करता है और तुम ही सोचो, बेटे! कि उन सबको यह कितना अजीब लगेगा, जब वे सुनेंगे कि शादी जैसे मौके पर भी हमारी बडी बहू अलग पकाकर खाएगी ..देखो बेटे! ऐसे मौको पर तो बिछुडे हुए मिला करते हैं, इस तरह बहुए घर की नाक कटवाने को अलग पकाकर नही खाया करती "

इस पर उसने आश्चर्य से पूछा—"अच्छा? तो झगडा यहा तक बढ

गया है कि भाभी अलग पकाकर खाती है ?"

"हा।" कुछ देर चुप रहने के बाद बाप फिर बोला—"लेकिन देखो बेटे ! तुम उसे कुछ कहना मत। सब ठीक हो जाएगा। एक-दो दिन की ही तो बात है फिर सब ठीक हो जाएगा।"

अचानक चार-पाच बच्चे अन्दर चले आए और आकर उससे लिपट गए। सब बच्चे उससे अपनी-अपनी फरमाइश करने लगे। गमीर वार्तालाप के बीच, बच्चो का इस तरह आ जाना उसे अच्छा नही लगा। लेकिन फिर भी बच्चो का दिल खुश करने को वह कुछ देर तक उनसे बचकानी बातें करता रहा।

कुछ देर बाद बाप फिर बोला—"अपनी मा से मिल आए हो ?"

"हा ! बाथरूम जाते-जाते मिलता गया था ..बहुत कमजोर हो गयी हैं।"

बाप बोला—"हा, देखो ना ! कितनी कमजोर हो गयी है। बेचारी को ऐसा कोई रोग आ लगा है, कि छुटकारा ही नही मिलता। पासा पलटने मे भी उसके शरीर मे बडी पीडा होती है।"

बेटे को गर्मी महसूस होने लगी। उठकर उसने पखे का रेग्यूलेटर घुमाया, फिर पूछा—"डॉक्टर लोग क्या कहते हैं ?"

"डॉक्टर बेचारे खुद ही असमजस मे पड गए हैं। बीच में एक बार तो ऐसी हालत हो गयी थी कि उसे सरकारी अस्पताल मे ले गए थे। कुछ दिनों के लिए तो ठीक हो गयी, लेकिन घर लाए तो फिर वही हालत . हम खुद बहुत परेशान है, बेटे !"

बेटा बोला, "तो फिर अम्मा को मेरे पास भेज दिया होता...मैंने एक-दो बार आपको ऐसा लिखा भी था. वैसे तो शायद डॉक्टर यहा भी होशियार होगे.. लेकिन वहा, बडे शहर मे, इलाज की सभी सुविधाए आराम से उपलब्ध हो सकती हैं "

बाप बोला, "हाऽऽऽ ! उसे तुम्हारे पास भेजता तो क्यों नही !... और तुम्हारी मां का तुममे मोह भी बहुत है। वैसे भी ऐसा होता ही है, कि सबसे छोटे बच्चे पर मा-बाप का मोह अधिक होता है। लेकिन फिर सोचा कि कहीं वहा भी उसकी ऐसी हालत हो गयी तो कौन उसकी देख-

भाल करेगा ? हां, अब तुम्हारी शादी हो जाए, फिर तुम भले ही उसे अपने साथ ले जाना...पास में देख-भाल के लिए बहू तो रहेगी ना ! और फिर सोचता हूं, शायद ऐसे कुछ जलवायु बदलने से उसकी तबीयत ठीक हो जाए।"

बेटा केवल चुपचाप सुनता रहा।

कुछ देर को दोनों कुछ नहीं बोले। बाप फिर बोला, "जाकर देख आओ कि बहू ने बर्फ मंगवायी कि नहीं ?"

उठकर वह बाहर चला गया। बाप फिर कागज़-पेंसिल लेकर हिसाब-किताब में जुट गया।

थोड़ी देर बाद वह अंदर आया, और बाप से बोला, "हां, मंगवा ली है। पानी ठंडा हो रहा है।"

एक कॉपी के कागज पलटता हुआ बाप फिर बोला, "यह देखो, तुम्हारी मां की, पिछले तीन महीनों की लगातार बीमारी पर करीब चार सौ का खर्चा हो चुका है। सच तो यह है कि पिछले दो-तीन महीनों की तुम्हारी तनख्वाह में से कुछ बच ही नहीं पाया है...दिन-प्रतिदिन घर का खर्चा बढ़ता ही जा रहा है।"

अचानक उसने देखा कि उसका छोटा भतीजा दौड़ता-दौड़ता अंदर आया और आकर अपने दादा से कहने लगा, "बापू ! दादी अम्मा रो रही हैं।"

बाप-बेटे दोनों सब काम अधूरा छोड़कर कमरे से निकल गए। उन्होंने जाकर देखा, बुढ़िया रो रही थी।

बाप आगे बढ़ गया। उसकी बांह पर हाथ फेरकर उसने पूछा, 'क्यों, क्या बात है ? तक्लीफ कुछ बढ़ गयी है ?"

तब तक मौसी भी अंदर चली आयी थी। बाप ने बेटे की तरफ देखकर कहा, "जाओ, बेटे ! एक गिलास पानी भर लाओ।"

बेटा पानी भर लाया। बीबी की तरफ गिलास बढ़ाकर बाप बोला, "लो, यह पानी पी लो।"

लेकिन बुढ़िया की सिसकियां अभी बंद नहीं हुई थीं। अब बेटा आगे बढ़ गया। मां की पीठ पर हाथ फेरकर उसने कहा, "बताओ ना अम्मा,

तकलीफ कुछ बढ़ गयी है ?...वह ठीक हो जाएगा, तुम बताओ तो सही !"

तब रोना थोड़ा बन्द कर उसकी माँ बोली, 'बेटे ! एक तकलीफ हो तो बताऊँ ! मुझे तो अब मालिक इस संसार से ही उठा ले तो अच्छा हो...अब और जीने से क्या फायदा ?...बस परसों तेरी शादी हो जाए, मैं बहू देख लूँ, फिर भले ही मालिक मुझे इस संसार से उठा ले...!"

माँ को सांत्वना देता-सा बेटा बोला, "अरे, क्यों उठा ले अभी तो हमारी अम्मा बरसों जीएगी !"

उसे बीच में ही काटकर बोली, "नहीं, नहीं बेटे ! ऐसी दुआ मत दे। अब यह घर नरक हो गया है . बड़ी बहू को ही देख लो ना ! ..रात से उसने कुछ खाया ही नहीं...पूछो तो बस रोने लग जाती है ." इतना कहते कहते बुढ़िया फिर रोने लग गयी। रोने की आवाज सुन कुछ मेहमान भी कमरे में आ गए।

उसने मौसी की तरफ देखकर पूछा, "क्या है, मौसी ? तुम्हें तो सब पता होगा ?"

मौसी वैसे शायद बात बता देती, लेकिन और मेहमानों को अंदर घुस आया देख, वह सिर्फ इतना ही बोली, 'छोड़ो ये सब छोटी-छोटी बातें हरेक घर में होती रहती हैं...तुम जाकर अपनी भाभी से बात कर आओ।"

मेहमानों को भी शायद लगा कि उनकी उपस्थिति घरवालों को शायद अच्छी नहीं लग रही है, इसलिए एक-एक कर वे बाहर निकल गए।

वह उठकर सीधा अपनी भाभी के कमरे में गया। उसकी भाभी चुपचाप सिलाई की मशीन के पास बैठी, बच्चों का कुछ कपड़ा काट रही थी। भाभी के पास जाकर वह बोला, "भाभी ! क्या यह सच है कि तुमने रात से कुछ नहीं खाया है ?"

कोई उत्तर देने के बजाय भाभी ने गर्दन ऊँची कर उसकी तरफ देखा। उसने देखा कि भाभी की आँखें लाल थीं। इसलिए उसने फिर पूछा, 'भाभी ! तुम बहुत रोयी हो ?"

रुंधे स्वर में भाभी बोली, 'नहीं ! ऐसे ही..."

भाभी की बात को बीच में ही काटकर वह बोला, "नहीं, भाभी ! तुम भले ही इनकार कर लो, लेकिन तुम्हारी आंखें बता रही हैं कि तुम रोयी हो...!" फिर कुछ देर रुककर वह बोला, "भाभी, तुम ही सोचो ! यह कैसी शादी है ? कहते हैं शादी में खुशियां होती हैं लेकिन यह कैसी खुशी है, जो शादी के प्रति मेरे मन में नफरत पैदा कर रही है ?...भाभी ! अगर मेरी शादी के कारण ही यह सब रोना-धोना है, तो मैं शादी नहीं करूंगा .."

इस पर भाभी ने सिर्फ भीगी आखों से देवर की तरफ देखा। कुछ देर और भी बैठने से जब भाभी उससे कुछ नहीं बोली, तब वह वहां से उठकर चौके में आया और मौसी से बोला, "मौसी ! तुम भाभी के लिए खाना परस दो मैं खुद ले जाता हूं।"

खाना लेकर वह फिर भाभी के कमरे में गया। भाभी अब सचमुच रो रही थी। उसने खाना भाभी के सामने रखकर बहुत नर्मी से कहा, "भाभी ! घर में जो कुछ हो रहा है, वह मुझे कोई ठीक से बताता नहीं . खैर, बीते हुए को दोहराना मुझे अच्छा भी नहीं लगता। इसलिए उसके प्रति मैं किसी को मजबूर नहीं करूंगा। मैं अपने हाथों से खाना ले आया हूं। तुम्हारे मन में इस देवर के प्रति अगर थोड़ा भी मोह, थोड़ा भी स्नेह है, तो मुझे लौटाओगी नहीं।" भाभी ने चुपचाप कौर उठा लिया।

रात को उसका बड़ा भाई थका-मांदा दुकान से लौटा। उसके दोनों हाथों में दो थैले थे, जिनमें शायद शादी का कुछ सामान आदि था। खटिया से उठकर, उसने जाकर अपने बड़े भाई के पैर छुए। आशीर्वाद देकर बड़ा भाई अपने कमरे में चला गया । उसे यह बहुत अजीब-अजीब-सा लगा। उसे याद आया कि वैसे बड़ा भाई हमेशा उसे गले लगकर मिलता है, लेकिन आज महज सदाचार के नाते आशीर्वाद देकर वह अपने कमरे में चला गया। उसने बाप की तरफ देखा। बाप उसके देखने का मतलब समझ गया। बहुत नर्मी से वह बेटे से बोला, "अंदर जाकर मिल आओ.. कुछ हाल-चाल पूछ आओ।"

न चाहते हुए भी उसने ऐसा किया।

छोटे भाई को अदर आता देख बडा भाई सिर्फ थोडा फीका मुसकराया और बोला, "बैठो, मैं अभी हाथ-मुह धोकर आता हू।"

हाथ-मुह धो आने के बाद तौलिए से अपना शरीर पोछता हुआ बडा भाई बोला, 'किस गाडी से आए ?"

"एक बजे वाली से !" थोडा रुककर वह फिर बोला "गाडी आज थोडी लेट ही गयी। रास्ते मे, किसी डिब्बे मे कुछ मुसाफिरो का आपस मे झगडा हो गया। उन्होंने जजीर खीचकर फालतू ही म गाडी लेट कर दी।"

बडे भाई ने इस परिवेश से शायद अपने को जुडा हुआ नही पाया, इसलिए बोला नही, सिर्फ पूछा उसने, "खाना खाओगे ?'

'नही, खा लिया है !" कुछ रुककर वह फिर बोला, "वैसे मेरी इच्छा तो यही थी कि दोनो भाई साथ बैठकर खाएगे, लेकिन फिर मामाजी आ गए थे। और उनकी आखिरी बस नौ बजे निकल जाती है सो थोडा उनको कपनी देने के लिए "

"हा हा, चलो, ठीक है !" बडे भाई ने अन्यमनस्क-सा यह वाक्य कहकर एक जम्हाई ली।

उसे लगा कि बडे भाई की बोल-चाल मे वह पहले जैसा स्नेह नही था। इसलिए बोला, "अच्छा, आप खाना खा लीजिए। मैं तब तक बाहर पिताजी के पास बैठता हू। आप खाना खाकर आइए...फिर वहीं बातचीत करते हैं।"

बडा भाई बोला, 'नही, अभी तो बस मैं खाना खाकर सो जाऊगा। बहुत थका हुआ हू। आठ बजे करीब दुकान बद की थी। फिर तुम्हारी शादी के लिए कुछ सामान लाना रह गया था, सो वह लेता आया। आज काफी पैदल चलना पड गया है, इसलिए अभी तो मैं आराम करूगा। फिर सुबह बात कर लेंगे।"

"अच्छा, ठीक है।' कहकर वह बडे भाई के कमरे से बाहर निकल आया। उसे बडा आश्चर्य-सा लगने लगा कि एक छोटा भाई करीब सात-आठ महीने बाद बडे भाई से मिलने आया है, और बडे भाई को अपने छोटे भाई से बढ़कर आराम से मोह है।

वह बाहर आया तो बाप ने पूछा, 'मिल आए ? क्या बातें हुईं ?"

'कुछ खास नही ! ऐसे ही थोडा बस ..भाई साहब थके हुए थे, सो उन्होने कहा कि सुबह बात करेंगे।"

'हू !" बाप कुछ देर को चुप हो गया, फिर बोला, "एक बात बताऊ, बेटे ! तुम्हारा बडा भाई दुनिया के कामकाज से थक गया है और मैं जिंदा रह-रहकर थक गया हू। पिछले कई दिनो से मैं अपने-आपको उस बीमार की तरह समझने लगा हू जो बीमारी के कारण सो-सोकर थक गया हो, और फिर लगातार दरवाजे और खिडकियो की तरफ आस-भरी निगाहो से देख रहा हो—कि कब मौत आएगी, और उसे जिंदा रहने की इस ऊब से छुटकारा दिलाएगी। बाप अब सिसकिया भरकर रोने लगा। बेटे को यह सब अच्छा नही लगा—घर म इतने सारे मेहमान आए हुए है, वे क्या सोचेंगे ?

बाप को वहा से उठाकर, वह उसे बाहर ले आया। कुछ देर तक दोनो चुपचाप चलते रहे। अपने आपको सतुलित करता हुआ बाप फिर बोला 'देखो बेटे ! यह कितनी असुदर बात रहेगी कि बडा भाई छोटे भाई की बारात म नही जाएगा। तुम्हारा भाई कह रहा है कि वह बाहर से भले यह दिखावा करे, लेकिन अदर से वह शादी की इन खुशियो से अपने-आपको जुडा हुआ नही पाता।' इतना कहकर बाप ने एक ठडी सास ली और फिर बोलने लगा, "देखो बेटे ! जवानी मे कितने ही दुखी दिनो मे, कितनी ही दुखी परिस्थितियो का मैं सामना करता रहा तब मैं कभी नही रोया ! लेकिन आज मुझे रोना तो इस बात पर आ रहा है कि उस दिन बहू के बहकाने पर उसने मुझसे कहा कि आपको बाप कहना 'बाप' शब्द का अपमान करना है। इतना स्वार्थी बाप मैंने कभी नही देखा है। तुम ही बताओ, बेटे ! ऐसा क्या कर डाला है मैंने !"बेटे को लगा कि बाप का गला फिर भर आया है, इसलिए परिवेश को समाप्त करने की दृष्टि से वह बोला, 'अच्छा, पिताजी ! छोडिए इन सब बातो को !"

'नही। देखो, बेटे ! अगर आनेवाली बहू के लिए मैंने उनसे थोडा सोना ले लिया, तो इसमे मेरा तो कोई निजी स्वार्थ नही था ! मैं तो उस सोने को नही पहनूगा। या तुम्हारी बीमार और बुढिया मा को इस उम्र

मे सोना पहनने का कोई शौक नहीं है ! मैं तो यह सब सिर्फ अपने घर की इज्जत के लिए कर रहा था। घर की चीज घर मे रह जाती, और बाहरवालो की नज़र मे घर की इज्जत और बढ जाती।'

बेटे ने फिर उस बात को खत्म करने के लिए कहा 'अच्छा ! अब छोडिए इस बात को ! चलिए अब चलकर आराम करें। फालतू ही ऐसी बातें सोचकर आप अपने मन को दुखी न करें।"

बाप फिर उदास स्वर मे बोला, 'बेटे ! तुम मेरे साथ ऐसा मत करना। तुम भी कहीं बीवी के कहने मे आकर हमारे वर्षों के स्नेह को काफूर मत कर देना !' कुछ रुककर भावुकता से फिर वह बोला अरे, तुम अपनी बीविया को खूब प्यार दो मैं उससे क्या नाराज होता हू मेरे पास भी तो एक इन्सान का दिल है। तुम्हारी उम्र मे मैंने भी तुम्हारी मा को खूब स्नेह दिया है प्यार दिया है अब क्या मैं तुम लोगो के प्यार मे खुश नही होऊगा ?' फिर एक ठडी आह भरकर वह बोला लेकिन जब अपने खून ने हा मा बाप की कदर नही की तो किसी और का भला क्या दोष ? बोलो बेटे, तुम तो हमसे ऐसा नहीं करोगे ना ? बोलो !

कोई उत्तर देने की बजाय बेटे ने मुसकराकर इनकार मे गर्दन हिला दी।

कुछ देर दोनो चुपचाप टहलते रहे।

घर लौटने पर उसे लगा कि मेहमान करीब करीब सब सो गए थे। मौसी अपने छोटे बच्चे को दूध पिला रही थी। बाप बुढिया को दवा पिलाने के लिए उसके कमरे मे चला गया।

चप्पल उतारकर वह चुपचाप खटिया पर लेट गया। उसने सोने की कोशिश की, लेकिन उसे नींद नहीं आयी। बडे भाई के कमरे से रेडियो की आवाज़ आ रही थी। उसे आश्चर्य लगा कि जो भाई थककर आया था और जिसे आराम की बहुत ज़रूरत थी वह अभी तक जाग रहा था और फिल्मी गाने सुन रहा था।

वह सोचने लगा कि यह सब क्या है ? शादी ! खुशी ! कहा है खुशी ? या फिर ऐसी सब बातो के मूल्य बदल रहे हैं। और यह सब ठीक भी है यह सब किसलिए किया जाता है ? सिर्फ एक रात के लिए,

जिसमे कुछ नया होता है—शायद अच्छा होता है। फिर बस कुछ भी नही है। सिर्फ उस नये, उस तथाकथित अच्छे को, कैसी ही अच्छी-बुरी परिस्थितियो म दोहराया जाता है।

उसे लगा कि जिदगी कुछ खुशियो को दोहराने के अलावा कुछ भी नही है।

उसने एक जम्हाई ली। करवट बदलकर उसने सोने की कोशिश की। लेकिन उसे लगा कि उसे नीद नही आएगी—आज की रात वह आखो ही मे काट देगा।

दूसरी सीढ़ी पर पिघलती बर्फ

अब तो वह सिलसिला भी खत्म हो चुका है। कई दिन बीत चुके है, लेकिन कोई लडका-वडका मुझे देखने नही आया। कितने ही दिनो से मम्मी डैडी के बीच भी ऐसी कोई बात नही हुई जिससे लगे कि हा वे फिर कोई ऐसी कोशिश कर रहे हैं, कि मेरी बात कही चलायी जाए। लगता है, अब वे भी थक गए हैं। किस किस के सामने इस खिलौने को दिखाए। इसलिए अब उ होने भी यह उम्मीद छोड दी लगती है।

पिछली बार जो लडका देख गया था, उसके पिता ने भी अपने शहर जाकर लिख भेजा कि बात हमे पसद नही आयी। आपकी लडकी की जनरल नॉलेज बहुत पुअर है।

तब डैडी ने मुझसे पूछा था, 'क्यो, सुरेखा बेटी! मनीषजी ने ऐसी क्या बात पूछी थी, जिसका तुम उत्तर न दे पायी थी और जिससे उन्ह लगा है कि तुम्हारी जनरल नॉलेज बहुत पुअर है।"

सवालों का एक लबा सिलसिला था हिंद महासागर से सत्यजित रे तक। डैडी को मैं क्या-क्या बताती। इसलिए मैंने डैडी से बस इतना ही कहा, रहने भी दीजिए! जो हुआ, सो हुआ। किसी भी चीज के इनकार के लिए सौ बहाने होते है। उन्हे 'ना' करनी थी, सो कोई-न-कोई बात लिख बैठे।"

डैडी चुप हो गए। लेकिन थोडी देर बाद शायद बात का रुख बदलने

के लिए बोले, "बेटी तू ऐसा कर...अपने डॉक्टर अंकल हैं ना, उनमेंसे चैकअप करवा ले। देख, बेटी, तेरा यह चेहरा भी मेरा मतलब कि . तेरी अब हड्डियां तक दिखायी देने लग गयी हैं। अपने डॉक्टर अंकल कुछ विटामिन वगैरह के लिए सजेस्ट करें, तो बेटी, लेना शुरू कर दे।"

डैडी की इस बात का मैंने कोई उत्तर नहीं दिया। कैसे कहती कि डैडी, इसका कारण तो कुछ और है कि यह तो उम्र का तकाज़ा है .मुझसे छोटी सुलोचना को ही देख लो। वक्त दूर नहीं, जब वह भी मेरी हालत में पहुंच जाएगी। उसके बाद सुशी है। वह भी भरी-पूरी औरत-सी लगती है। भगवान न करे, अगर वह भी हमारी तरह इस उम्र तक पहुंच गयी तो

कुल मिलाकर हम सात बहनें हैं। अब जिस हालत में मैं पहुंच गयी हूं, या जिस हालत में कुछ ही दिनों में सुलोचना पहुंचने वाली है, उसकी जिम्मेदारी किसकी है, यह बात मैं आज तक तय नहीं कर पायी!

शुरू शुरू में मुझे याद है—डैडी ने जिद की थी। उनके कोई एक दोस्त थे मल्होत्राजी! डैडी बड़ी शान से लोगों को बताया करते थे, "हां, ठीक है। हमारी सुरेखा की उम्र शादी के लायक हो गयी है लेकिन हमें कोई फिक्र नहीं है। हमने उसके लिए मल्होत्रा का लड़का रिज़र्व कर दिया है। मल्होत्रा ने खुद आगे बढ़कर मुझसे अपने लड़के के लिए सुरेखा का हाथ मांगा है। लड़का डॉक्टरी पढ़ रहा है। जैसे ही उसका ट्रेनिंग-पीरियड खत्म होगा, शादी करवा देंगे।"

लेकिन मम्मी को, न जाने क्यों शुरू से ही यह बात पसंद न थी। उसने कई बार डैडी से कहा भी कि कहीं मजाक मजाक में आपके दोस्त ने सुरेखा के लिए कह दिया होगा, और आप तो बस उसकी बात गांठ बांधकर बैठ गए हैं। अपने डॉक्टर बेटे के लिए वह भला एक क्लर्क की लड़की क्योंकर लेने लगे? लेकिन डैडी तो बस, अपनी जिद पर थे कि नहीं, वायदा हुआ है। 'ना' कैसे हो सकती है?

आखिर में हुआ वही, जिसका मम्मी को संदेह था। मल्होत्रा साहब का लड़का ट्रेनिंग के लिए विदेश गया था, और वहीं से एक विदेशी लड़की

को ब्याह कर ले आया।

उस दिन के बाद से डैडी काफी दिनों तक मम्मी से आख नही मिला पाए थे। मम्मी तो अब भी कई बार डैडी पर उबल पडती हैं उस मुए मल्होत्रा के झूठे वायदे को लेकर आपने मेरी बेटी की जवानी के कितने वर्ष यो ही बर्बाद कर दिए।'

डैडी को भी शायद इस बात का अहसास है कि तब से लेकर वे मेरे सामने अपनी गर्दन नही उठा पाते। कभी कभी ऐसा भी होता है कि दो-दो चार चार दिनों तक हम दोनो के बीच बात तक नही होती।

शाम को पढाकर थकी मांदी सी घर आती हू तो डैडी अखबार पढ रहे होते हैं। कनखियो से देख लेते हैं कि हा मैं आयी हू। फिर अखबार का पृष्ठ पलटने के बहाने घडी मे समय देख लेते है, कि कही मैंने घर आने मे कोई देर तो नही कर दी।

इधर डैडी मे भी बहुत परिवर्तन आ गया है। अब सुबह पाच बजे से पहले ही उठ जाते हैं। कॉलोनी के एक कोने से दूसरे कोने तक टहलते रहते है। टहलते-टहलते कोई-न कोई भजन गाते रहते है। डैडी की आवाज़ वैसे भी भारी है। भजन गाते हुए तो न जाने उनकी आवाज़ कैसी अजीब सी हो जाती है। कभी-कभी मुझे लगता है कि पता नही कॉलोनी वालो को डैडी का इस तरह भजन गाना अच्छा लगता भी होगा या नही! या फिर वे लोग सोचते होगे कि बड बाबू अब बूढ होने को आए हैं सो अपनी सही दिशा उन्होने पकड ली है शायद।

अब तो बस डैडी अक्सर लोगो के साथ धार्मिक उदाहरण दे देकर बातें करते हैं या तुलनात्मक दृष्टि से लोगो को समझाते फिरते हैं कि मानवता इसे नही इसे कहते है या मानवता कुछ और चीज़ होती है।

इधर मुझे एक और शौक लग गया है—कविताए बहुत पढने लगी हू। सुबह जब डैडी भजन गाने लगते हैं तब मैं कोई न कोई कविता की किताब निकाल लेती हू। कई बार लगता है कि डैडी की घोघों-जैसी आवाज, कविता-जैसी सूक्ष्म चीज को पढने या समझने मे बहुत खलल डालती है।

एक बार साहस करके, मैंने डैडी से कह भी दिया, 'डैडी, आपके ये भजन मेरी पढाई मे रुकावट डालते हैं। ज़रा धीरे भजन गाया करें तो ।"

मैंने अभी अपनी बात पूरी ही नही की, कि डैडी उबल पड़े, 'क्या है ? ऐसा क्या पढ रही हो तुम, जो तुम्हे तकलीफ होती है ।"

मैंने तपाक से कह दिया, 'कविताए पढ रही हू। कविता की सूक्ष्मता को समझने के लिए जिस एकान्त, या जिस एकाग्रता की जरूरत है, उसमे आपके ये भजन...।"

डैडी को शायद बहुत बुरा लगा। और कोई बात शायद उन्हे सूझी नही, तो बोल उठे, 'यह शरीफो का घर है। शरीफ घरो की लडकिया ये कविता-फविता की किताबें नही पढा करती।"

जी म आया कि कह दू—शरीफ घरो की लडकिया इस उम्र तक अनब्याही भी नही बैठी रहती।

यह कोई पहली बार नही थी, जब डैडी की ऐसी बात या ऐसी आलोचना सुनने को मिली हो। कविता कहानी और फिल्मो से डैडी घृणा करते आए है। जब मैं स्कूल और कॉलेज मे पढती थी तब भी उनका यही हाल था। हम स्कूल या कॉलेज से लौटते तो डैडी हम लोगो की किताबें टटोलने लगते थे, कि कही कोई कहानी की किताब उपन्यास, या कोई फिल्मी पत्रिका हमारी पुस्तको के बीच छिपी हुई तो नही! फिल्मो से तो उन्हे इतनी चिढ थी कि अगर हमारी किसी किताब या नोट-बुक पर किसी फिल्मी पत्रिका का कोई कवर तक चढा हुआ देख लेते तो वे उसे चुपचाप हमे बताए बिना ही फाड डालते।

एक बार मैंने मम्मी डैडी के बीच हुए वार्तालाप को सुन लिया था। मम्मी उनसे कह रही थी, 'य क्या करत रहते हैं आप ? क्या देखते रहते हैं इनकी किताबो म ? जब देखो, तब उनम कुछ न कुछ टटोलते रहत हैं। आखिर ऐसा क्या हो सकता है उनकी किताबो मे ?"

तब डैडी बोले थे 'तुम नही समझोगी। यह उम्र ही बहकने की होती है। हमने दुनिया देख ली है। आजकल के छोकरे कहानी-किस्सो की किताबो

वे पहले तो लडकियों के साथ आदान-प्रदान करते है, फिर मौका पाकर उनमे प्यार-मुहब्बत के पत्र रख देते हैं। तुम नही समझोगी। यह उम्र गेंद-जैसी होती है, जिस तरफ लुढक गयी, लुढक गयी। फिर सम्हालना मुश्किल पड जाता है, समझी ?"

तब जाकर यह बात मेरी समझ मे आयी थी।

आज भी उन्होंने पूछ लिया, 'कहा से ले आती हो ये कविता-फविता की पुस्तकें ?"

मैंने कहा, 'हमारे स्कूल मे एक टीचर है, उनके पास कविताओं के कई सग्रह हैं—सो माग लाती हू।"

'क्या नाम है उसका ?" डैडी की मुद्रा से साफ झलक रहा था कि बिना देखे, बिना मिले ही, कविताओं के सकलन देने वाले उस आदमी पर उन्हे सदेह होने लगा था।

मैंने कहा, "शिवा गुप्ता!"

'कौन है यह शिवा गुप्ता ? मेरा मतलब क्या उम्र है उसकी ? कुवारा है या शादी-शुदा ?"

'यह मैंने कभी पूछा नही।" मैंने धीरे-से उत्तर दिया। मैं जानती थी कि अब अगर सवालो का सिलसिला शुरू हुआ, तो चलता ही रहेगा। डैडी तब तक सवाल पूछते रहेगे, जब तक कि वे इस बात से सन्तुष्ट नहीं हो जाते कि यह शिवा गुप्ता नाम का व्यक्ति कोई गलत आदमी नही है।

'तो क्या कविता-फविता की ये पुस्तकें तुम्हारे लिए वह स्कूल मे ले आता है, या तुम उसके घर लेने जाती हो ?"

'वह खुद ही स्कूल मे ले आते हैं।" मैंने उत्तर दिया।

डैडी शायद अब भी सन्तुष्ट नही थे। बोले, पुस्तकें तुम्हारे लिए खुद ब-खुद लाने लगा है, या तुमने उससे कभी मागी थी ?"

'मैंने ही मागी थी। एक बार टीचर्स-रूम मे बैठे बातें कर रहे थे तो मैंने कह दिया, कि न जाने क्यो, इधर कविताओं मे मेरी रुचि कुछ बढने लगी है। तो गुप्ताजी ने कहा 'मेरे पास कई अच्छे-अच्छे सकलन हैं, आप चाहें तो आपके लिए ले आया करू।' सो तब से यह सिलसिला चल रहा है।"

डैडी की भृकुटियाँ कुछ अजीब ढंग से तन गयी, 'अच्छा तो तुम लोग टीचर्स-रूम म जाकर बातें करत हो ! वहा मेरा मतलब है वहा तुम लोग अकेले होते हो या कुछ और लोग भी होते हैं ?"

मैंन कहा कभी किसी अन्य टीचर का भी फ्री-पीरियड होता है तो वे लोग भी होते है, नही तो हम दोनो अकेले भी बातें करते रहते है।'

'अच्छा ?' कहकर डैडी कुछ देर के लिए सकते म आ गए। फिर बोले, "तो वहा कैसी कैसी मेरा मतलब वहा किस तरह की बातें करते हो ?"

सच कहू, अब मुझे भी डैडी का परेशान करने मे थोडा मज़ा आन आन लगा था। अत मैंन कह दिया, "हर तरह की बातें होती हैं। एक्जाम्स की कोर्स की कभी-कभी और भी बातें होती है।'

जैसे ?"

"जैसे किसी के 'अफेयर्स आदि की। मिसाल के तौर पर हमारे यहा एक लेडी टीचर हैं—कुसुम वर्मा ! एक टीचर के साथ उनके अफेयर्स चल रहे हैं। सा कभी-कभी उनके सबध म हमारी बातें हो जाती है, कि देखें आगे उनकी कहा तक निभती है ! वैसे दोनो एक दूसरे से बढकर चट है।'

डैडी न इस पर अपनी नाराजगी जाहिर की, 'तुम्हें क्या मतलब किसी की व्यक्तिगत बातो मे रुचि लेने की ? मुझे यह सब पसन्द नही। वैसे भी तुम्हारी उम्र अब गभीर रहन की है। इस तरह दूसरो की बातो मे व्यर्थ ही उलझना मुझे कतई पसन्द नही !' वह चुप हो गए तो मैं सोचने लगी, कि चलो, डैडी को यह अहसास तो है कि अब मैं बडी हो गयी हू और मेरी उम्र अब गभीर रहने की है।

डैडी के मन म शायद कोई उफान था, जो अब भी बाहर निकलन का रास्ता खोज रहा था। बोले, 'तो शिवा नाम का वह टीचर तुम्हें कोरी किताबें ही देता है या उसके अन्दर कुछ और भी रख देता है ?"

मैंने पूछा, 'कुछ और से मतलब . .?'

इस पर डैडी थोडा झेंप गए। बोले, "कुछ से मरा मतलब है कि कुछ ..यानी.. छोडो, रहने दो। तुम नहीं समझोगी।"

डैडी का तो बस अब एक ही शौक रह गया है—हर चन्द महीनों के बाद अपनी आदतें बदलने लगे हैं। पिछले कितने ही दिनों से उन्हें मम्मी के साथ ऐसे किसी विषय पर बात करते हुए नहीं देखा गया है कि अब उनकी सुरेखा बहुत बड़ी हो गयी है या सुलोचना भी अब शादी की उम्र पार करने को है या मुन्नी भी अब भरी पूरी जवान हो गयी है। नहीं अब वे ऐसी बातें नहीं करते। अब उन्होंने एक नया रास्ता अपनाया है—अखबार आदि पढ़ना अब उन्होंने बन्द कर दिया है। रेडियो पर खबरें भी अब नहीं सुनते। मानवता यह नहीं कुछ और होती है वाले वाक्य में अब एकाध वाक्य और जुड़ गए हैं कि मन की शान्ति बहुत बड़ी चीज़ होती है। और जो आदमी अखबार पढ़ता है या रेडियो पर खबरें सुनता है उसे इस युग में तो मन की शांति कभी प्राप्त हो नहीं सकती। अब तो आए दिन यह पढ़ने या सुनने को मिलता है कि इस इस चीज के भाव बढ़ गए हैं। ये ये चीजें मार्केट से गायब हो गयी हैं। डैडी को लगता है कि ये सब चीजें या बातें मन की शांति छीन लेती हैं। मानवता कुछ और चीज है। और उसे मेण्टेन करने के लिए आदमी को आदमी बनना जरूरी है और आदमी बनने के लिए मन की शांति का होना अत्यावश्यक है।

मैंने अकसर देखा था कि शिवा को दी हुई पुस्तकों में किन विशेष पंक्तियों पर लकीरें खिंची हुई रहा करती थीं। पहले ये पंक्तियां मुझे अच्छी लगती थीं लेकिन धीरे धीरे जैसे जैसे दिन बीतते चले गए मेरी रुचि उनमें कम होती चली गयी। मुझे लगने लगा जैसे उन पंक्तियों का रस लेने की मेरी उम्र अब नहीं रही। वे कविताएं या पंक्तियां शायद मेरे मन को और भी रोमांचित कर पातीं यदि मैंने उन्हें आज से कुछ वर्ष पूर्व पढ़ा होता!

अब उनमें रुचि लेना तो दूर कई बार पढ़ते पढ़ते मुझे लगने लगता है कि ये सब मैं क्यों पढ़ रही हूं? क्या मिलना है मुझे इससे? फिर सोचते सोचते निढाल होकर वहीं आरामकुर्सी पर आंखें मूंद लेती हूं।

ऐसे ही किसी क्षण डैडी ने शायद मेरे घुटनों पर खुली किताब पर कुछ पंक्तियों के नीचे खिंची लकीरें देख ली होंगी।

थोड़ी देर बाद जब मेरी आंखें खुलीं तो डैडी ने मुझसे स्पष्ट कह

दिया, "यह तुम्हारा शिवा गुप्ता मुझे कोई अच्छा आदमी नही लगता। अभी पढते-पढते तुम्हारी आखें लग गयी थी, तब मैंने तुम्हारे घुटनो पर पडी किताब की कुछ पक्तिया पढ़ ली। बडी बेहूदा किस्म की पक्तिया थी, जिसे तुम्हारे शिवा गुप्ता ने बडी शान से, लकीरो से सजा रखा था। इससे साफ झलकता है कि.. "

मुझे लगा कि अब मुझे अपनी बात कहने का उचित अवसर मिला है। अत. डैडी की बात बीच मे ही काट दी, "इन चीजो से उसे मन की शाति मिलती होगी।"

डैडी शायद मेरे व्यग्य को भाप गए। एक बार बहुत कडवी या तीखी निगाहो से उन्होने मेरी तरफ देखा, लेकिन फिर शायद कुछ सोचकर, चुपचाप पास मे पडी कुर्सी पर बैठ गए। उन्हें शायद एक बार फिर यह अहसास हुआ होगा, कि उनकी सबसे बडी लडकी बहुत ज्यादा जवान हो गयी है, और जिस चीज से उनकी लडकी को मन की शान्ति मिल सकती थी, वह सब उपलब्ध करवाना अब जैसे उनके वश की बात नही रही।

उसी रात एक और घटना हो गयी। करीब बारह-साढे बारह बजे मैंने देखा, डैडी मेरी अलमारी मे कुछ उथल-पुथल कर रहे हैं।

मैं उठ बैठी, तो वे घबरा गए।

"क्या ढूढ रहे है, डैडी ?"

"वो...वो...बस, कुछ देख रहा था। तुम.. तुम सो जाओ, मैं देख लूगा।" वह शायद कोई उचित बहाना नही ढूढ पाए अत यो ही कह दिया।

पर मैं देर तक पता नही क्या-क्या सोचती रही।

दूसरी सुबह !

नाश्ता कर लेने के बाद जैसे ही मैं स्कूल मे जाने लगी, डैडी ने धीरे-से मुझे बुलाया, "सुनो, बेटी ! वो . वो ..वो.. ऐसा है कि मैं नही चाहता कि तुम उस शिवा नाम के आदमी से इस तरह किताबें लेकर पढो। और फिर मैंने तुम्हें पहले भी कह दिया है कि शरीफ घरो की लडकिया न तो

सिनेमा देखती हैं, और न ऐसी कविता-फविता की कोई पुस्तकें ही पढती हैं।"

"तो ?" गुस्से से मैंने अजीब सा मुह बना लिया था।

'तो बस, इतना ही कि इसके बाद इस घर म कोई भी ऐसी किताब नहीं आएगी।

उत्तर दिए बिना मैं स्कूल की तरफ चल दी। वहा दिनभर मेरा मूड खराब रहा। शिवा के साथ भी मैं ठीक से बात नही कर पायी। और न मुझसे बच्चो की पढाई ही ठीक से हो सकी। बस, दिनभर गुमसुम बैठी न जाने कैसी-कैसी बातें सोचती रही।

शाम का जब स्कूल की छुट्टी हुई तो मैंने देखा, जिस रास्ते से मैं घर की तरफ वापस जाया करती हू, उसी रास्ते पर एक पान की दुकान के पास खडे डैडी बीडी पी रहे हैं।

अभी मेरा सुबह का गुस्सा ही शान्त नही हुआ था कि डैडी की इस हरकत पर एक बार फिर मुझे बहुत गुस्सा आ गया। मैं वही रास्ते पर रुककर शून्य दृष्टि से डैडी की तरफ एकटक देखने लगी। मेरे ऐसा करने से डैडी थोडा झेंप गए। लेकिन फिर तुरन्त ही उन्होने अपने आपको सम्हाल लिया। झट-से पानवाले की दुकान से निकलकर बाहर आ गये।

आते ही पूछा, 'घर जा रही हो बेटी ?"

'हा !" मैंने पुन वैसी ही शून्य-दृष्टि से डैडी की तरफ देखा। मैं समझ गयी थी, कि वह क्यो इस रास्ते पर आकर खडे हो गए है। वह इस बात का पता लगाने आये थे कि स्कूल के आसपास कही सुरेखा और शिवा गुप्ता के नाम का कोई स्कैण्डल' तो प्रचलित नही है।

थोडी देर डैडी कुछ सोचते रहे, फिर बोले, "अच्छा तो चलो। हम भी तुम्हारे साथ चलते हैं। फिर जैसे खुद ही अपने इधर आने के कारण का थोथा स्पष्टीकरण देते हुए बोले, 'मैं यो ही आ गया था। वह अपने शुक्ला जी है ना कई दिनो से बीमार थे। दफ्तर नही आ रहे थे। सोचा—चला, आज उनकी खैर-खबर पूछ आते हैं।"

फिर भी मैं चुप रही।

दोनो चुपचाप चलते रहे।

चौराहे के नजदीक पहुचते-पहुचते डैडी ने कहा, "अच्छा बेटी, तुम घर जाओ, मै जरा सत्सग से होकर आऊगा।"

वह मेरी दायी दिशा मे मुड गए।

मै चुपचाप घर चली आयी। चाय का एक प्याला पीकर मै अपने कमरे मे चली गयी। मुझे खालीपन-सा महसूस होने लगा। चारो तरफ दीवारो की ओर देखा मैने—असह्य सन्नाटा था वहा। डैडी के पास यदि पैसा होता या मेरे पास रूप—तो सभवत. यह स्थिति न होती। एक अजीब सा जहर सारे वातावरण मे फैल गया था। असहाय-से सब विस्फारित नेत्रो से अपनी विवशता के बीसियो आकार ख रहे थे। करने को जैसे कुछ भी न रहा हो मेरे पास!

मैने कुछ पढना चाहा, लेकिन कोई कविता की किताब मेरे पास नही थी। शिवा एक पुस्तक लाया तो था, पर मैने ही मना कर दिया—झूठ-मूठ का बहाना बनाकर।

जब मन अपने कमरे मे न लगा तो मै सुलोचना के कमरे मे चली गयी। सुलोचना मेज़ पर बैठी कुछ लिख रही थी।

मुझ यो अचानक आया देख सुलोचना झेंप गयी और हाथवाला कागज़ उसने छिपा दिया।

नज़दीक जाकर, मैने गम्भीर स्वर मे पूछा, "क्या कर रही थी?"

'कुछ नही, दीदी!" सुलोचना का स्वर काप आया था।

"कुछ छिपा रही हो! लाओ, वह कागज़ कहा है? क्या लिख रही थी?"

सुलोचना ने कागज़ फाडने की कोशिश की, लेकिन मैने फुर्ती से वह कागज़ सुलोचना के हाथ से छीन लिया।

कोई प्रेम-पत्र था, जो सुलोचना ने किसी के नाम लिखा था।

सुलोचना का चेहरा पीला पड चुका था। मैने उससे कुछ नही कहा, चुपचाप कागज़ उसे लौटा कर, अपने कमरे मे चली आयी। मै यह तय नही कर पा रही थी कि सुलाचना का ऐसा करना गलत था या सही! मुझे डैडी और मम्मी को यह बताना चाहिए या नही!

मैं तो बस अपने कमरे में जाकर लेट गयी। मुझे अपना सिर भारी-भारी-सा लगने लगा। मैंने इसीलिए लम्बी-लम्बी सासें लेनी शुरू कीं जिससे जल्दी नींद आ जाए। सचमुच मुझे नींद आ भी गयी। रात को मैंने खाना भी नहीं खाया। नींद के बीच मुझे ऐसा लगा जरूर था कि एक बार डैडी खाने के लिए बुलाने आये थे। लेकिन शायद मैंने ही मना कर दिया था।

सुबह उठी, तो बहुत देर हो चुकी थी। मैं खुद ही हैरान थी कि आज डैडी के भजन पर मेरी आखें क्यो नहीं खुली!

कहीं ऐसा तो नहीं कि डैडी ने भजन ही नहीं गाया।

मैं उठी, तो डैडी ने मेरे कधे पर हाथ रख लिया। मेरे बालो पर हाथ फेरकर स्नह से बोले, 'क्या बात है, बेटी! रात तुमने खाना भी नहीं खाया? तबीयत तो ठीक है न तुम्हारी?"

मैंने कोई उत्तर नहीं दिया, तो वह फिर बोले, 'बेटी, तुम नाराज हो क्या?"

उत्तर देने की अपेक्षा, मैं इधर-उधर देखने लगी। दरवाज़े के सहारे सुलोचना आकर खडी हो गयी थी। इधर डैडी चश्मा साफ करने के बहाने, आखो पर से कुछ पोछने लगे थे। तब मेरी नजरें अनायास ही सामने लगे आईने की तरफ उठ गयी। मैंने देखा—मेरे बालो मे जैसे हल्की सी चादी चमक रही है। जो बाल कुछ हल्के-से सफेद दीखते थे, अब वे गहरा सफेद रग लेने लगे है।

एक बार फिर मैंने अपने आपको घूरकर आईने मे देखा। फिर कुछ देर बाद कनखियों से दरवाज़े की तरफ झाक लिया—सुलोचना अब भी वही दरवाज़े के सहारे खडी मुझे और डैडी को एकटक देखे जा रही थी।

और इधर डैडी हैरान थे कि इस सुलोचना को आज क्या हो गया है?

एक दिन ऐसे ही...

प्रोतिमा पर नजर पडते ही चदर आश्चर्य से उसकी तरफ देखने लगा। प्रोतिमा की आखो पर नजर का एक मोटा-सा चश्मा चढा हुआ था। बाल उसके सब सफेद हो गये थे। चेहरे पर उम्र कुछ अजीब-से निशान छोड गयी थी। प्रोतिमा के साथ एक दुबली-पतली लडकी थी, जिसकी आखो से चचलता टपक रही थी।

चदर आगे बढ गया, 'प्रोतिमा हो ?"

'हा . " प्रोतिमा ने आश्चर्य से चदर की तरफ देखा।

"पहचानती हो ?"

आखो को और फैलाकर, चश्मे के मोटे लेंस मे से घूर-घूरकर प्रोतिमा ने चदर की तरफ देखा, 'चदर हो ?"

'हा .."

मारे खुशी के प्रोतिमा की आखो मे चमक आ गयी। बेटी की तरफ देखकर पूछा उसने, "अरे अबी, पहचानती हो न चदर अक्ल को ?" लडकी ने आश्चर्य से और अनजाने चदर की तरफ देखा। प्रोतिमा बोली, "नही पहचाना ? अरे पगली, चदर अकल को नही पहचानती ?" लडकी ने फिर उसी मुद्रा मे चदर की तरफ देखा। प्रोतिमा इस पर फिर बोली, "क्या तू भूल गयी अबी, चदर अक्ल अपने घर आया करते थे और...और प्यार-भरे एक चाटे की बजाय तुझे एक टॉफी देते थे.. और

एक बार कैंची लेकर तेरी चोटी में कुछ बाल काट दिये थ उस पर तू बहुत रोयी थी " अबी या अब भी आश्चर्य म डूबा देख प्रोतिमा को अपनी गलती का अहसास हुआ — हा लेकिन अबी, तुम्हे वे सब बातें कहां याद होंगी ..! तब तो तू केवल छह साल की ही थी और तब तेरी मम्मी के य बाल काले थे !"

चदर को लगा कि प्रोतिमा को गुजरा हुआ कुछ याद हो आया था। उसकी आखो म आसू भर आये थे। चदर को यह अच्छा नही लग रहा था कि बीच रास्त म ऐसा कुछ हो, जो चाहते हुए भी उसने नही चाहा था। बात का रुख बदलन क विचार से वह बोला, ' प्रोतिमा, ऐसे अचानक यहा कैसे आना हुआ ? '

प्रोतिमा को भी शायद लगा, कि इस घडी यह जो कुछ हो रहा है वह गये दिनो की खूबसूरत यादों के साथ लुभावना होते हुए भी कोई बहुत अच्छा नही है, इसलिए बोली, ' चदर पास मे कोई रेस्तरा या कॉफी हाउस हो तो चलो, वहा कुछ देर बैठें।"

मा की भारी हो आयी आवाज को अबिका ने भाप लिया लेकिन वह समझ न पायी कि आज अचानक उसकी मम्मी को यह क्या हो गया था। वह कुछ और सोचे-सोचे इसके पहले ही उसने चदर की आवाज सुनी— ' हा, चलो किसी रेस्तरा मे चलें लेकिन सुनो तो प्रोतिमा, तुमने अपनी बेबी का नाम 'अबी' कैसे रखा ? जहा तक मुझे याद है इसका नाम अबी तो नही था।"

तब एक फीकी मुसकान के साथ प्रोतिमा बोली ' हा वैसे बेबी का नाम अरुणा था। लेकिन मुझे एक पुरानी बात याद हो आयी। बबी के नामकरण के समय मैं अरुणा नाम रखना चाहती थी और मेरे पति अबिका नाम रखना चाहते थे जिदा रहते उन्होने मेरी जिद रखी थी। तुम्ह तो मैंने बताया था, चदर कि मेरे पति को मुझसे कितना मोह था ! और ऐसे ही एक दिन मैंने सोचा कि जिंदा रहते उन्होने मेरी जिद रखी थी और अब जब वह नही रहे तो कम से-कम मैं उनकी इच्छा का खयाल रखू . इसलिए बबी को अब मैं अबिका या कभी कभी प्यार से अबी' ही कहकर पुकारती हू।'

तीनों थोड़ा चलने लगे। चंदर ने अपनी बांह अंबिका के कंधे पर रख ली और फिर अपना सवाल दोहराया —"हां, प्रोतिमा, तुमने बताया नहीं, ऐसे अचानक यहां कैसे आना हुआ तुम्हारा ?"

प्रोतिमा ने उत्तर दिया, "अंबी की सगाई के सिलसिले में आयी हूं... देखो ना, मेरी अंबी अब कितनी बड़ी हो गयी है !"

अंबिका के बालों पर प्यार से हाथ फेरकर चंदर बोला, "हां, बड़ी तो हो गयी है।"

प्रोतिमा बोली, "यहां एक लड़का ध्यान में था। सोचा, बात पक्की होने के पहले दोनों एक-दूसरे को देख-परख लें, तो अच्छा हो।"

बातों-बातों में रेस्तरां आ गया। अंबिका बोली, "मम्मी, मेरा मूड कॉफी पीने का नहीं है। आप कॉफी पीजिए। मैं तब तक बगलवाली दुकान पर कुछ चीज़ें देखकर आती हूं।"

"अच्छा !" कह प्रोतिमा चंदर के साथ रेस्तरां में चली गयी।

रेस्तरां में एक-दूसरे के सामने बैठ जाने के बाद प्रोतिमा एक हलका ठहाका मारकर बोली, "देखो, चंदर, हम दोनों कितने बूढ़े हो गये हैं ! तब, उस उम्र में, हम दोनों ने शायद यह कभी सोचा भी नहीं होगा कि हम इस हद तक बूढ़े हो जायेंगे और ऐसे एक दिन अचानक ही मिल जायेंगे...हां, तुम्हारे भी दो लड़के और एक लड़की थी...उनका क्या हुआ ?"

"लड़की की शादी तो मैंने दो साल पहले कर दी। बड़ा लड़का मिलिटरी में आफिसर है। उससे छोटा कानपुर में डॉक्टर है और गये बीस वर्षों से हम दोनों एक-दूसरे से नहीं मिले हैं। उस दौरान मुझे 'पापा' कहने वाले तीन और पैदा हो गये हैं ! वे अभी पढ़ रहे हैं।"

प्रोतिमा की आंखों में खुशी भर आयी, "अंबी से छोटा जो मेरा लड़का है—विमल, वह अब एम. ए. में है।"

इस बीच चंदर ने अपनी जेब से पर्स निकालकर प्रोतिमा की तरफ बढ़ाते हुए कहा, "लो, देखो, इसमें मेरे बड़े लड़के के फोटो हैं। कैसा लगता है ना कुछ...?"

प्रोतिमा की आंखों में कुछ शैतानी भर

में बड़ी-बड़ी मूछें न होतीं, तो इसकी शक्ल-सूरत हूबहू तुम्हारी जवानी की-सी है...और लगता भी तुम्हारी तरह शैतान ही है ! तुम्हे याद है, चदर, उन दिनो मैं तुम्हारी मिसेज़ के सामने भी तुम्हे 'शैतान' कहकर पुकारती थी...अरे, हा, तुम्हारी मिसेज अब कैसी हैं ?"

"अच्छी है...वह भी तो हम दोनो की तरह बूढी हो चुकी है.. तुम्हे बहुत याद करती है...सच बताऊ, कभी-कभी तुम्हारे लिए रोती भी है... आज इतने वर्षों बाद तुम्हे यह बात बता रहा हू कि जवानी मे तुम्हारा विधवा हो जाना हम दोनो के लिए बहुत ही दु ख का विषय था . हमे तुम्हारे प्रति बहुत दया और करुणा हो आती थी, लेकिन यह बात हमने कभी तुम्हारे सामने प्रकट न होने दी...सिर्फ यह सोचकर कि हमारी उस भावना को लेकर तुम अपने आपको कही बेचारी' न समझने लगो । और सच तो यह है कि तुम्हे 'बेचारी' के रूप मे देखने की बजाय हमने तुम्हे खुश देखना चाहा था...तुम्हारी आख मे आसुओ की बजाय हमने तुम्हारे होठो पर खेलती मुसकान देखनी चाही थी ।" प्रोतिमा के चेहरे पर उदासी घिर आयी थी । बात का रुख बदलते हुए चदर बोला, "चलना घर... तुम्हे देखकर वह बहुत खुश होगी .."

कुछ देर तक दोनो चुप रहे, फिर जैसे किसी सपने मे जागता हुआ-सा चदर बोला, "अरे, हा, देख लिया फोटो ?...यह दो साल पहले का है। अब तो ऐसा हो गया है कि बस ! एक बात कहू...तुम्हे शायद हास्यास्पद-सी लगे...मैंने सोचा था कि तुम्हारे और मेरे स्नेह को एक और मजबूत बधन मे बाधने के लिए मैं अपने बडे लडके के लिए तुमसे अरुणा का हाथ मागूगा ...लेकिन जब तक वे दोनो इस लायक हुए, हम अलग हो गये...वह सब किसी टूटे सपने की तरह अधूरा रह गया...और आज बीस साल के लबे अतराल के बाद जब हम मिले हैं, तब सब कुछ बदल चुका है। मेरे लडके ने वही किसी मिलिटरी आफिसर की लडकी से शादी कर ली है !" चदर को लगा कि अब उसकी आखो मे भी पानी भर आया है।

प्रोतिमा बोली, "बुढापे की इस क्षीण दृष्टि से भी मैं देख रही हू कि तुम्हारी बूढी आख मे पानी भर आया है...!" फिर अपनी आवाज़ को सतुलित करती हुई वह बोली, ' चदर, आज तुम मुझे एक चाटा मार दो !"

आश्चर्य से चदर प्रोतिमा की तरफ देखने लगा। प्रोतिमा बोली, "तुम शायद भूल गये होगे, लेकिन मुझे आज भी याद है कि उन दिनों तुम न जाने किस विद्रोह या स्नेह-वश मुझसे कहा करते थे कि 'मुझे एक चाटा मारने दो।' और हर बार मैं तुम्हारी इस बात को टाल दिया करती थी। आज तुम्हारी प्रोतिमा तुमसे खुद कह रही है कि आओ चदर, मुझे एक चाटा मार दो।"

"नहीं, प्रोतिमा, इतने वर्षों की तपस्या को मैं आज भंग नहीं होने दूंगा...नहीं ."

"तपस्या ?"

"तुम शायद इसे भूल गयी हो कि जब पहले मैंने तुम्हें देखा था, तब मेरी नज़र में तुम्हारे प्रति वासना का एक हलका-सा धुआं, एक हलका-सा अहसास था, लेकिन फिर जिस दिन मुझे पता चला कि तुम एक विधवा हो, मौत ने जवानी की दहलीज़ पर ही जिसकी खुशियां छीन ली हैं, तो मेरा मन बदल गया था और मैंने तुमसे कहा था कि जीवन भर मैं तुम्हारे शरीर को नहीं छुऊंगा..."

"लेकिन चदर, आज मैं तुमसे चाटा सज़ा के रूप में मांग रही हूं... तब भी मेरी नज़र कमज़ोर थी.. तुम मुझे बहुत समझाया करते थे कि 'चश्मा लगाया करो, नहीं तो एक दिन प्रोतिमा, तुम अंधी हो जाओगी,' लेकिन तब मैंने तुम्हारी बात नहीं मानी थी। और आज जब मैं करीब-करीब अंधी-सी हो गयी हूं, तब मुझे तुम्हारे वे शब्द याद हो आते हैं... अगर उन दिनों ही मैं तुम्हारी बात मान लेती, तो आज मेरी आंखों पर इतने मोटे शीशों का पहरा न होता...!"

"चलो, छोड़ो इस बात को। अब यह बताओ, तुमने फिर दूसरी शादी तो नहीं की ?"

"नहीं।"

'प्रोतिमा, सच कह रहा हूं, तब मुझे डर था कि उम्र के [illegible] वर्षों में, जवानी की बेरहम गर्मी के सामने तुम कहीं [illegible] मैंने तुमसे एक बार इशारे में कहा भी था कि तुम्हारे [illegible] मुझे ऐसा लग रहा है कि आनेवाले [illegible]

एक ऐसी घटना होगी, जो तुम्हें वर्षों तक याद रहेगी...और प्रोतिमा, तुम्हें शायद आश्चर्य-सा लगेगा कि अपने हम-उम्र का आशीर्वाद देने के एक अजीव पागलपन को मैं तक महत्व दे बैठा था और अपनी हर सुस्त और फालतू घडी मे, जब भी तुम्हारी याद आती थी, मैं तुम्हारे प्रति विशेष कुछ सोचने की बजाय तुम्हें आशीर्वाद देना बेहतर समझता था कि काश, उम्र भर तुम अपने आप मे एक ही पति की पत्नी कहलवाने का हक सुरक्षित रख पाओ ।"

एक ठडी आह भरकर प्रोतिमा बोली, 'चदर तुम्हे मैं कैसे बताऊ कि जिंदगी के पिछले कठिन वर्ष मैंने कैसे गुजारे हैं। अपने पति की मूर्ति मेरे मन से तब नही हटी थी, आज भी नही हटी है, तब एक दिन तुमने मुझसे कहा था कि तुम दूसरी शादी क्यो नही कर लेती? और तुम्हे याद होगा, मैंने तुम्हें बताया था कि जब भी 'काम' जैसी कोई शक्ति मुझे सताती थी, या मुझे झुकाने की कोशिश करती थी, तब मै यह सोच अपने चचल मन को काबू मे कर लेती थी कि वे भी तो औरतें है, जिनके पति कही परदेश म वर्षों गुजार देते हैं। और यह सोच मुझे अजीब सा सुख मिलता था, कि मेरा पति मरा नही है कही परदश गया हुआ है। लेकिन चदर, सच तो यह है कि तब शायद कभी कभी मेरा मन असमजस की स्थिति मे जूझने लगता था, लेकिन फिर मै पति के साथ बिताये गये छह वर्षों की हसीन यादों को सहारा बना मानसिक तृप्ति हासिल कर लिया करती थी"

चदर ने देखा कि प्रोतिमा की आखो पर चढे मोटे चश्मे के पीछे कुछ चमकने लगा था। वह बोला, 'प्रोतिमा, तुम्हारी मानसिक तृप्ति की बात को अलग रख तुम्हारे आदर्शों को मैं आज भी सलाम करता हू लेकिन सुनो तो, प्रोनिमा, अब बच्चो के प्रति तुम्हारे मन मे मोह है, या नही?"

प्रोतिमा बोली, हा, चदर, अब बुढापे मे मेरे मन मे बहुत मोह भर आया है—अपने बच्चो के प्रति और उनके प्रति जिन्होने जीवन के दु खी दिनो मे मुझे सहारा दिया, अपनत्व दिया "

इस बीच चदर ने बेयरे को दो प्याले कॉफी लाने को कहा और फिर कुछ देर को दोनो चुप हो गये। प्रोतिमा ही फिर बोली, क्यो चदर, चुप क्यो हो गये? क्या सोच रहे हो?"

चदर शायद कुछ सोचने लगा था। प्रोतिमा के सवाल पर जैसे सपने से जागता हुआ-सा बोला, नही, प्रोतिमा खास कुछ भी नही सोच रहा हू मैं शायद बीते हुए उन वर्षो म जीने लगा था जिनमे हम दोनो के बा त काले थे मुझे याद आ रहा है तब एक दिन मैंने तुमसे आत्मिक प्रेम की बात कही थी तो तुमने कहा था, प्रेम' से तुम डरने लगी हो। तब तुमने बताया था कि एक कुत्ते को तुमने प्यार दिया तो वह मर गया। और प्यार और मौत की इस बुरी दोस्ती के वहम ने तुमसे तुम्हारा पति छीन लिया। और फिर जब किसी ने तुम्हे अपनत्व देकर तुमसे आत्मिक प्रेम की बात कही थी, तब तुम 'प्रेम' जैसे किसी शब्द से ही डरने लगी थी।"

'हा, चदर, यह बिलकुल सच है। आज भी यही हालत है। इस शब्द से बुढापे की इस हालत मे भी मैं डरती हू, इसलिए अपने बच्चो से प्यार के लिए मुझे 'मोह' जैसे शब्द का सहारा लेना होता है।"

'हा हा, मैं समझता हू। तब भी ऐसे ही था। इसीलिए उन दिनो अपनी बात को व्यक्त करने के लिए मुझे 'स्नेह' जैसे शब्द का सहारा लेना पडा था तब तुम्हारा शाब्दिक ज्ञान भी कोई बहुत अच्छा नही था लेकिन अब, मैं समझता हू, उम्र और सफेद बालो के अनुभव ने तुम्हारा शाब्दिक ज्ञान बढा दिया होगा और तुम्हे अब लग रहा होगा कि स्नेह' और 'मोह' के पीछे भी प्यार जैसी ही कोई भावना छिपी होगी है।"

प्रोतिमा चुपचाप सुनती रही। इसी बीच बेयरा आकर कॉफी रख गया।

चदर को लगा कि चादी की कोई बारीक सी लकीरें उसके मस्तिष्क मे उभरने लगी थी। प्रोतिमा की ओर देखता हुआ वह बोला, 'प्रोतिमा, जवानी मे जब हम अलग हुए थे, तब बतौर किसी निशानी के तुमने मुझे एक पिन दी थी। वह पिन मैंने एक लाल कागज पर फ्रेम करवा के रख छोडी है, घर मे कही लगायी नही है—केवल यही सोचकर कि यदि कल मुझसे कोई इसका कारण पूछ बैठे, तो मैं क्या जवाब दे पाऊगा।" फिर ऐसे ही थोडा हसकर चदर बोला, 'वैसे तो प्रोतिमा, मैंने सोचा था कि किसी के पूछने पर युग-बोध का उदाहरण देकर समझाऊगा कि आज के जीवन म

केवल दु ख और काटे हैं और काले कागज पर पिन का होना दु खा से भरी दुनिया म चुभन के होने का एक प्रतीक मात्र है।

प्रोतिमा बोली चदर ये निशानी लने देने की बातें आज बुढापे की इस अवस्था म बचपन की सी लगती हैं लकिन फिर भी न जाने क्यो उनको सहेजकर रखने म कुछ ऐसा सुख मिलता है जो इजहार से परे है।

उस समय एक दपति दो तीन साल के एक बच्चे क साथ रेस्तरा म आया। पैर म पैर मिलाकर चलत हुए बच्चे का देख प्रोतिमा की आखो म चमक भर आयी। बोली चदर कोई भी बच्चा जब चलना सीखता है तो उसकी चाल मुझ अपने पति की याद दिलाती है। जब बीमारी की हालत मे मैंने अस्पताल म उन्ह यह बतलाया था कि अब अपना विमल थोडा थोडा चलने भी लगा है तो खुशी से वह बोले थे कि शाम को विमल को अस्पताल लेती आना और जब शाम को मैं विमल को अस्पताल ले गयी थी तो विमल को पैर म पैर मिलाकर चलता देख वह खूब ठहाकेदार हसी हस थे लेकिन उफ चदर मैं यह कहा जानती थी कि वे उनके आखिरी ठहाके थे! दूसरे ही दिन अपने पति के वे ठहाके मुझसे रूठ गए! और हैरान यह है कि आज भी जब अकेले म मैं पति की तसवीर की तरफ देखती हू तो मेरा पागल मन ऐसा चाहने लगता है कि तसवीर की फ्रेम तोडकर अदर से कोई ठहाके निकल आए और मैं फिर अनजाने मे जवानी की वे रूठी घडिया पति के ठहाका के साथ ठहाके मार मारकर बिताऊ! फिर एक ठडी सास लेकर वह बोली लकिन अफसोस वह सब कल्पनाओ का एक नगर है जो तिलस्मी है कवल कुछ देर का अस्थायी सुख दे सकता है और कुछ नही!

चदर बोला प्रोतिमा एक बात पूछू?

हा हा पूछो जरूर पूछो! पिछल कितने ही वर्षों म न जाने कितनी बातें मैंने भी मन म सोच रखी थी कि चदर को बताऊगी लेकिन जैसे इन बालो का रग उड गया वैसे ही मस्तिष्क से भी कई बातें शायद दिमागी पिजरे की उमस से निकलकर उड गयी।

चदर बोला प्रोतिमा सच बताना इतने वर्षों म कभी तो वासना ने

तुम्हे बहुत तग किया होगा ?"

अपनी बाह की बूढी चमडी पर चिकोटी काटती हुई, थोडा थामकर प्रोतिमा बोली, ' हा, चदर, एक बार बिलकुल बुरी तरह काम ने मुझे तग किया था। तब हारती-हारती मैं काम से जीत गयी थी या शायद तब प्रकृति ने मेरी उस जीत मे मेरा साथ दिया था ..उस वक्त फागुनी हवाओं की उस ठडी रात मे कोई पुरुष मेरे पास मे न था फिर मैंने अपने बाल नोचे थे कपडे फाड डाले थे घर मे लगे आईने को तोड डाला था किसी कुत्ते की तरह हाफते-हाफ्ते मेरी जीभ निकल आयी थी शायद मैं बेहोश भी हो गयी थी। जब होश आया, तब लगा था कि मेरी रगो पर बर्फ घुमा-घुमाकर किसी ने मेरे शरीर को ठडा कर दिया था ..!"

एक ठडी सास भरकर चदर बोला, ' प्रोतिमा, यहा आकर मेरे विश्वास के मूल्य बदल जाते है। मैं सोचने लगता हू कि दुनिया मे शक्ति जैसी कोई चीज़ नही है—मतलब, कोई ऐसी शक्ति नही है, जो किसी को नुकसान पहुचाकर खुद साफ बचकर निकल जाए। एक बम फटने पर भले ही इन्सान के टुकडे कर दे, लेकिन ऐसा करते हुए वह खुद भी टुकडो मे बट जाता है।"

पखे की हवा लगन से प्रोतिमा के सफेद बाल फैलकर उसके चश्मे के मोटे शीशो पर टहलने लगे थे, लेकिन उसे उनका ध्यान ही न रहा। वह शायद कुछ सोचने लगी थी। कुछ देर बाद वह बोली, "चदर, तुम बताओ, तुमने ये गए साल कैसे बिताए ?"

आश्चर्य से चदर न पूछा, "प्रीति, 'कैसे' से तुम्हारा क्या मतलब है ?"

हलका-सा हसकर प्रोतिमा बोली,' चदर, पहले तुम मुझे खुशी की एक हसी हस लेने दो कि इतने लबे वार्तालाप मे पहली बार तुमने मुझे प्रीति के नाम से पुकारा है . मैं नही जानती कि इस एक शब्द के साथ मेरी कितनी यादें जुडी हुई हैं . इतनी-इतनी कि जिनका कोई अदाज़ा नही है .. हा, मैं कह रही थी, तुमने अपने इतने साल मुझे देखे बगैर कैसे गुज़ारे ? . तुम वह व्यक्ति हो, जो एक दिन भी मुझे नही देखते, या मुझे नही मिलते, तो बेचैन हो उठते थे। तुम्हे याद है, चदर एक दिन ज़माने की बकवास से

लग आकर मैंने तुमसे बात करना छोड दिया था और दूसरे दिन वानिश लगी तुम्हारी लाल आखें देख मैं पछतायी थी कि मैं ऐसा नाहक कर बैठी उस दिन तुमने बताया था कि रात तुमने आखो ही मे काट दी थी इसलिए पूछ रही थी कि तुमने इतने साल ''

प्रोतिमा की बात बीच ही म काटकर चदर बोला, "मत पूछो, प्रोतिमा! वह सब मत पूछो! कई सपने थे, जो हकीकत की प्रतीक्षा म बूढे हो गए मर गए! प्रीति, मेरी तसव्वुर की आखो ने अपने ही सपनो की लाशें उठती देखी हैं ..अपने बूढे सपनो की लाशें ढो-ढोकर आज मैं भी बूढा हो गया हू ..यह सब सोचकर कभी-कभी सर्द लाशो की तरह मैं भी ठडा पड जाया करता हू . !"

एक ठडी आह भरकर प्रोतिमा बोली, "हा .हा, मुझे ऐसा लग रहा है...चदर, अपना हाथ दो !"

कुर्सी पर ही थोडा दूर हटता-सा चदर बोला, 'नही प्रोतिमा! कुछ तपस्या...कुछ स्पर्श ..नही, प्रोतिमा!"

तब अजीब-सा चेहरा बनाकर प्रोतिमा बोली, 'चदर, मानसिक तौर पर भी तुम इतन बूढे और कमजोर क्यो हो गए हो? पवित्रता हम दोनो म आज भी है स्पर्श भी उसी तरह पवित्र !"

'प्रोतिमा, तुम्हें शायद याद नही है एक बार तुमने ही कहा था कि पवित्र स्पर्श भी कभी गलत भावना पैदा कर सकते है एक बार के गलत सपने के पश्चाताप ने मुझसे मेरी एक प्यारी और मीठी चीज छीन ली थी।"

तब अपने आपको स्वाभाविक स्थिति मे लाती-सी प्रोतिमा बोली, 'चदर, चलो छोडो! लेकिन एक बात सुनो . आज जमाने की इस हालत म, जबकि प्यार के मूल्य ही बदल चुके हैं लोग हमारे पवित्र प्यार की बात पर शायद हसने लगें।'

'क्यो?"

'इस पर आश्चर्य मत करो। आज अगर मैं अपनी अबी के सामने ही कोई ऐसी बात कह बैठू तो शायद पहले तो वह एक बहुत बडा ठहाका मारेगी और उसके बाद पूछेगी कि क्या प्यार अपने आपमे एक हस्ती नही

है, जो उसकी हस्ती को पूर्ण रूप देने के लिए उस शब्द के पहले एक 'पवित्र' शब्द का लगाना भी आवश्यक है ?"

कोई उत्तर देने की बजाय चदर ने केवल एक बार प्रोतिमा को घूर-घूरकर देखा, फिर कुछ देर बाद वह बोला, "अच्छा, प्रोतिमा, जब तक तुम यहा हो, तब तक हम रोज़ इसी रेस्तरा मे मिला करेंगे...कल यहा से होकर मेरे घर चलना मैं आज मिसेज को बता दूगा। तुम्हें देखकर वह बहुत खुश होगी. "

चदर की बात बीच मे ही काटकर प्रोतिमा बोली, "देखो, आज तुम फिर वही पुराने चदर बनने जा रहे हो !"

"हा, मैं चाहता हू कि जब तक तुम यहा हो, तब तक तुम वही पुरानी प्रोतिमा रहो और मैं वही पुराना चदर !"

प्रोतिमा कुछ कहना चाह रही थी, लेकिन अबी को सामने से आता देख कुछ नही बोली।

रेस्तरा से बाहर निकलकर चदर बोला, "अबी, तुम्हें हमारा शहर कैसा लगा ?"

'अकल, सच बताऊ, मुझे तो बहुत अच्छा लगा। बड़ी ही पीसफुल लाइफ है यहा के लोगो की। कोई दौड-धूप नही "

कुछ मजाक-सा करता हुआ चदर बोला, 'अबी, यह तुम इसलिए तो नही कह रही हो कि अब तुम्हें शायद इसी शहर मे रहना है...?"

"नो.. नो, अकल ! सच.. ! पहाड मुझे वैसे ही बहुत अच्छे लगते हैं।" फिर प्रोतिमा की तरफ देखती हुई अबी बोली, "क्यो मम्मी, तुम ही बताओ, मुझे पहाड अच्छे लगते है ना ?"

प्रोतिमा ने केवल गरदन हिलाकर 'हा' कह दिया।

मार्केट मे आकर चदर एक जनरल स्टोर पर चढ गया। अबी तब तक सामने एक रेडीमेड कपड़े की दुकान पर कुछ पुलोवर आदि देखने लगी। जनरल स्टोर से चदर ने हेयर-डाई की एक ट्यूब ली, प्रोतिमा की आंख बचाकर। इतने मे अबी आ गयी। चदर प्रोतिमा से कुछ कहने जा ही रहा था, पर बात मुह-की-मुह मे ही रह गयी।

चदर के हाथो म हेयर-डाई की ट्यूब देख अबी ने आश्चर्य से एक बार उसकी तरफ देखा और फिर प्रोतिमा के चेहरे की तरफ। अबी को लगा कि उसकी मम्मी की आंखो पर चढे मोटे चश्मे के शीशो के अदर कुछ चमकने लगा था। अबी ने फिर चदर के चेहरे की तरफ देखा, लेकिन चदर ने दीवार पर लगे किसी विज्ञापन को देखन के बहाने पहले ही अपनी गरदन फेर ली थी।

बिना पर्दोवाला घर

वह नया-नया उस कॉलोनी मे आकर रहने लगा था। उससे पहले वह जिस मकान मे रहता था, वह एक तग गली मे था, जहा उसे जरूरत जितनी हवा नही मिल रही थी। उसे चाहे उसकी बीवी को, यह हमेशा खटकता रहता। उन दोनो की यही राय थी, कि मकान ऐसा हो, जहा कम से कम ठीक तरह से सास लेने की सुविधा तो हो। वैसे भी, शहर और गलियो मे हर प्रकार के लोग रहते थे। पढे-लिखे, अनपढ, भद्र और फूहड भी! लेकिन यहा उसे लगा, कि कम से कम यहा सब लोग पढे-लिखे तो है। हरेक के पास बोलने-चालने, रहने-जीने का एक अलग सलीका तो है।

जब ट्रक मे सामान लदवाकर वह उस कॉलोनी म आया था, तब उसे लगा था, कि वह किन जाने-पहचाने, परिचित-से चेहरो के बीच आ गया है। उस कॉलोनी मे, या तो उसके साथ एक ही ऑफिस म काम करने वाले लोग थे, या फिर सामने वाले ऑफिस के। चाहे वहा के सब लोगो को वह नामो से नही जानता हो, लेकिन उसे लगा कि चेहरे से लोग भी उसे जानते है—और वह भी उन्हे। कोई भी हो, लेकिन हैं सब क्लर्क ही। और जहा तक नाम का सबध था, उसने सोचा—सबो के घर के बाहर उनके नेमप्लेट लगे हुए हैं ही—धीरे-धीरे वह उन लोगो से भी परिचित हो जाएगा।

तब सामान रखवाते-रखवाते, उसने बीवी को मकान दिखाते हुए कहा था, 'देखो रब्बी की मा! कितना अच्छा मकान है। और ये खिडकिया

देखो, कितनी बड़ी-बड़ी हैं। शहर की उन तंग गलियों के तंग मकानों में तो जैसे सांस तक लेने में तकलीफ होती है। यहां इन खिड़कियों से कितनी खुली हवा आएगी।"

उसकी बीवी खुशी से मुसकरायी थी।

उसने फिर बाहर निकलकर कॉलोनी में और मकानों की तरफ देखा। करीब-करीब सब एक-से मकान थे। केवल अन्दर की गयी पुताई का रंग अलग-अलग था। किसी ने हरे रंग का डिस्टेम्पर करवा रखा था, तो किसी ने नीले रंग का वार्निश, तो किसी ने

लेकिन उसे एक बात बहुत खटकी। वहां रहने वाले सभी लोगों ने अपनी अपनी खिड़कियों पर बड़े-बड़े पर्दे लगा रखे थे। यह उसे अच्छा नहीं लगा।

वह वापस अन्दर चला आया। अन्दर आकर उसने बीवी से कहा—"रब्बी की मां! एक चीज देखी तुमने यहां? यहां पर सब लोगों ने अपनी खिड़कियों पर पर्दे लगा रखे हैं खुली हवा कैसे उनकी सांसों तक पहुंचती होगी?"

सहज भाव से उसकी बीवी ने उत्तर दिया था— लगाते रहें हम तो नहीं लगाएंगे।. .खुली हवा में रहने के लिए ही तो शहर से इतनी दूरी पर आकर हमने मकान लिया है।"

उसे लगा कि बीवी ठीक कह रही थी— हां, हां! तुम ठीक कह रही हो। हम ऐसा नहीं करेंगे!" वह फिर कमरे की उस बड़ी खिड़की की सलाखें पकड़कर बाहर खुले वातावरण को देखने लगा, जहां हवा तेजी से चल रही थी, और जहां हवा के हल्के-हल्के झोंकों से, पेड़ों के पत्ते ऐसे हिल रहे थे जैसे मंद मंद कोई गीत गुनगुना रहे हों।

. उसे यहां रहते हुए, अभी दो-तीन दिन ही गुजरे होंगे, कि 'सी' ब्लॉक वाला हेनरी एक दिन उसके पास चला आया। उसने मकान को सरसरी निगाह से देखकर बोला—'अरे, वाह! तुम भी अजीब हो, यार! अभी तक तुमने अपनी खिड़कियों पर पर्दे नहीं लगाए? अरे भाई! देखो, हम सब लोगों ने लगा रखे हैं। बिना पर्दों के तुम्हें अजीब-अजीब नहीं लगता?"

"नही, हेनरी ! मुझे तो कुछ भी अजीब नही लगता !...अजीब तो शायद तब लगता, जब मेरी खिडकिया पर्दों के बुर्के ओढ लेती।" उसने गभीरता से कहा।

कुछ देर को हेनरी चुप रहा। फिर धीरे से बोला, "डीयर !...तुम शायद गलत हो ! .. हम लोगो की किस्मत मे कुछ ऐसा लिखा है कि बिना पर्दों के, हम शायद नगे दीखने लगेंगे !" उसे लगा कि हेनरी की आवाज़ भारी-भारी हो आयी थी, इसलिए ही शायद वह वहा और नही रुका। उसकी खुली खिडकियो की तरफ रश्कभरी निगाहो से एक नज़र देखकर, लबे-लबे डग भरता हुआ, वह वहा से चला गया था।

हेनरी की वह बात...उसकी भारी हो आयी आवाज़...रश्क से भरी उसकी निगाहें—उसे कुछ भी समझ मे नही आ रहा था।

शाम को ऑफिस से लौटकर, उसने पहले हाथ-मुह धोये। फिर कपडे बदलकर उसने कॉलोनी का एक चक्कर लगाने की सोची। वैसे शायद वह ऐसा नही करता। लेकिन आज दिनभर उसके कानो मे हेनरी की भारी हो आयी आवाज़ गूज रही थी।...जो बात वह सुबह नही समझ पाया था, उसका कारण जानने की इच्छा उसके मन मे ज़ोर पकडने लगी थी।

वह पहले मजूमदार के घर आया। उसने देखा, मजूमदार की खिडकियो के पर्दो के ऊपर वाले हिस्से पर एक चिडिया बैठकर चहक रही थी। उसकी पूछ रह-रहकर फुदकती, और फिर वह पर्दे की रस्सी पर चोच मारने लगती। उसे यह बडा अच्छा लगा। उसने मजूमदार को बुलाकर कहा—"मजूमदार ! तुम मुझे एक बात बताओ, भाई ! .. ये पर्दे, जो तुमने चाहे औरो ने, अपनी-अपनी खिडकियो पर लगा रखे हैं, क्या उनके पीछे कोई विवशता है, कोई मजबूरी है ?" कुछ रुककर वह फिर बोला—"...बात ऐसी है कि कल 'सी' ब्लॉक वाला हेनरी इस सबध म मुझे एक अजीब उलझन मे डाल गया है।...मैं खुले और सही रूप से सब जानना चाहता हू।...देखो, दोस्त ! ...मुझसे छिपाना मत !"

मजूमदार ने एक ज़ोरदार ठहाका मारकर कहा—"अरे, इसमे छिपाना क्या है, ये तो पर्दे है। शब्द अपना अर्थ खुद ही समझा जाते हैं। असलियत

को छिपाने के लिए पर्दे लगाए जाते हैं। तुमने क्या देखा नही है, कि आज-कल लोगो के चेहरे तक अपने नही रहे। उन पर मुखौटे लगे होते हैं पर्दे लगे होते है !" मजूमदार के ठहाके मारने से उसे लगा कि वह शायद कोई मजाक कर रहा है इसलिए उसने कहा— 'भाई मजूमदार ! मजाक मत करो ! मुझे इसका सही कारण बताओ ! देखो मैंने अभी तक अपनी खिडकियो पर पर्दे नही लगाए हैं और और यहा देखता हू सब लोगो ने अपनी खिडकिया जैसे ढक रखी है क्या वे यह नही चाहते, कि बाहर की खुली और ताजी हवा अन्दर आकर उनकी घुटन को कम कर दे ?'

मजूमदार बोला— दोस्त ! खुली हवा किसे पसद नही है ! सभी चाहते हैं कि ऐसी हवा चले, जिससे उनके अग-अग नस नस मे गुदगुदी हो जिससे उनके बाल आसमान के उडते पछियो के पखो की तरह लहराने लगें . !"

'फिर ?"

'फिर क्या ! ऐसा होता नही है। दोस्त ! ये सब जादुई पर्दे है इन्हें खुद-ब खुद छोटा-बडा होना आता है ! महीने की पहली तारीखो म य पर्दे या तो उतार दिए जाते हैं, या न के बराबर छोटे हो जाते हैं। और फिर जैसे-जैसे दिन गुज़रते जाएगे ये पर्दे बढते जाएगे। आखिर अतिम तारीखो मे ये पर्दे जैसे पूरी खिडकियो को ढक देते है !'

वह बोला—' मजूमदार ! यह क्या कह रहे हो तुम ? मुझे कुछ समझ म नही आता।"

'आ जाएगा !" गभीरता से मजूमदार बोला 'आ जाएगा समझ मे ! कुछ दिन और रह लो, सब समझ मे आ जाएगा !'

वह वापस चला आया।

उसकी उत्सुकता और बढ गयी थी। वापस आते आते उसने देखा करीम के घर पर भी पर्दे लग रहे है—ऐसे पर्दे जिनमे कई जगहो पर छोटे छोटे सूराख हो गए थे। करीम को वह बहुत पहले से जानता है। दो-चार साल तक उन्होने एक ही अनुभाग मे काम किया था। उसने आगे जाकर करीम का द्वार खटखटाया। दरवाजा खोलकर करीम बाहर आ गया। उसे आया देख करीम बोला 'आओ, आओ यार ! अन्दर आओ

आज कैसे रास्ता भूल गए हो ?"

वह बोला—"हा, करीम भाई ! मैं रास्ता भूल गया हू भटक गया हू तुम मुझे एक बात बताओ..."

'पूछो, दोस्त ! पूछो !"

"तुमने देखा है तुम्हारी खिडकियो के पर्दों मे छोटे छोटे सुराख हो गए हैं ?"

'हा, हो गए है !"

"फिर तुम उन्हें उतार क्यो नही फेंकते ?"

फीका सा मुसकराकर करीम बोला— 'यही तो मजबूरी है यारव ! पर्दों मे छेद हो गए हैं इसका दु ख नही है खुशी है इस बात की, कि ये सुराख इन्सान की आखो से छोटे हैं, इन्सान इनम ठीक से झाक नहीं सकता !"

'तो क्या करीम भाई ! इन्सान की आखो से बचने के लिए तुमने घुटन स्वीकार कर ली है ?"

न चाहते हुए भी करीम ने एक ठहाका मारा। बोला—'दोस्त ! यहा आकर हरेक को घुटन स्वीकार करनी होती है। कई बार हमे हालात से समझौते करने होते हैं। अब तुम इसे समझौता समझ लो या घुटन को स्वीकार करने की मजबूरी ! कोई फर्क नही पडता दोस्त ! '

'यह क्या कह रहे हो करीम ! मेरी तो समझ म कुछ नही आ रहा है !" वह बोला।

'आ जाएगा ! अब तो आखिरी तारीखें आ रही है सब समझ म आ जाएगा !"

असमजस की स्थिति मे, वह वहा से भी चला आया।

अब वह 'डी' ब्लॉक के पास से गुजर रहा था। उसने सुना—गुप्ता के घर मे कोई बच्चा कह रहा था, "मा, आज क्या सब्जी नही बनायी तुमने ?'

फिर अन्दर से शायद उसकी मा की आवाज आयी, धीरे बोल रे ! तुझे कितनी बार कहा है कि ऐसी बातो को पूछने से पहले देख लिया कर कि पर्दे बद है कि नही !"

'पर्दे तो बद हैं, मा।" बच्चा बोला।

'हा, अब पूछ। सब्जी के लिए पूछ रहा था? नही बनायी।" शायद उसकी मा की ही आवाज थी।

'क्यो नही बनायी?"

'देख बेटे! सच तो यह है कि अनाज ही खत्म हो गया था। तेरे बापू कही से दस रुपये उधार लेकर तो अनाज लाये थे फिर सब्जी कहा से ?

बच्चा चुप हो गया। उसके लिए शायद यह कोई नयी बात नही होगी, या फिर यहा के अन्य लोगो की तरह वह बच्चा भी समझौतो का आदी हो गया होगा।

और उसे भी लगा कि यह कोई ऐसी विशेष बात नही थी। हम सब क्लर्क लोग हैं ऐसी परिस्थितियो से तो करीब करीब हम सबको गुजरना होता है तो फिर ऐसी बातो से पदा क्यो ?

वह आगे बढ गया। लेकिन कुछ सुनकर फिर रुक गया। यह मीरचदानी का घर था। वैसे वह वहा नही रुकता। लेकिन उसे कुछ जोरो के ठहाके सुनायी दिये थे। उसने देखा, यहा भी खिडकियो पर पर्दे लगे हुए थे।

अदर से शायद मीरचदानी की आवाज आयी सुनो! सुबह तुमने गोपाल को तलरेजा के घर भेजा था ना पाच रुपये लेन के लिए तो उसकी बीवी ने क्या कहा था कि कल ही तो उनके एक दोस्त उनसे सौ रुपये उधार ले गय हैं हा हा हा ! अरे सब झूठ था वह ! आज मैंने ऑफिस म देखा एक सरदार तलरेजा को डाट रहा था कि उसने टाइम पर ब्याज क्यो नही पहुचाया ? हा हा हा ! अब तुम ही सोचो, डीयर! जो आदमी खुद ब्याज पर पैसा ले रहा है वह भला क्या किसी दोस्त को सौ रुपये उधार दे सकता है ? झूठ कही के!'

तब एक स्त्री-स्वर सुनायी दिया वह तो ठीक है लेकिन हमारी बात भी तो नीची हो गयी। तलरेजा की बीवी क्या सोच रही होगी कि बड बने फिरते है लेकिन पस म है तो पाच रुपये भी नही!

तब मीरचदानी बोला तुम भी भोली हो रानी! ऐसा कैसे होन देता मैं ? अरे अभी वही तो गया था मैं! मालूम है मैंने उसे क्या

कहा ?"

"क्या कहा ?"

"कहा—अरे यार ! हमारी बीवी भी मूर्ख है। मैं उसे कह गया था कि काली पैंट की जेब मे पचास-साठ रुपये रख जाता हू, जरूरत पडे तो ले लेना. लेकिन उसने शायद सुना नही !...फालतू ही मे आपको तकलीफ दी !"

"लेकिन यह तो झूठ बोल आये न आप !" फिर वही स्त्री स्वर।

'झूठ ?...हा. हा.. हा ..अरे रानी ! दुनिया झूठे बुर्कों और सफेद कपडो के पर्दों मे ही तो ढकी हुई है। और फिर, जो झूठ सहारा बन जाए, वह सच से भी बढकर होता है, डीयर !"

.. उसने आगे सुनना नही चाहा। वह मन-ही-मन सोचने लगा कि उसने मकान बदलकर बडी गलती की, इससे वह घुटन अच्छी थी। अब वह कहा आकर फस गया है, जहा सफेद कपडो के पीछे झूठ इन्सान का सहारा बना हुआ है.. जहा पर्दों के पीछे झूठे दिखावे और मजबूरिया पल रही हैं।

नही, नही, नही ! —यह सब उसे स्वीकार नही था। उसकी इच्छा हुई कि वह जाकर कैंची ले आए, और सब लोगो की खिडकियो पर लगे हुए पर्दों को चीर-फाड दे। और फिर अदर जाकर सब लोगो के सफेद कपडे फाड डाले और चिल्ला चिल्लाकर कहे, 'फाड डालो इन सफेद कपडो को, जिनके पीछे झूठ पल रहा है...इससे हम नगे अच्छे हैं.. सच्चाई से बढकर सफेद कपडा नही है।"

लेकिन वह चुपचाप अपने घर की तरफ चला आया।

उस रात, और उसके बाद कुछ रातो मे, वह ठीक मे सो नहीं पाया।

फिर कुछेक दिनो तक वह शात रहा। शायद वह किसी चरम सीमा की प्रतीक्षा मे था। वह देखना चाहता था कि कब तक इन झूठे पर्दों की सच्चाई पर जीत होती रहेगी।

उसे इस बात पर भी आश्चर्य हुआ कि जैसे-जैसे आखिरी तारीखें आती गयीं, लोगो की खिडकियो के पर्दे ऊचे होने गये। तब उसे मजूमदार के शब्द याद हो आए कि ये जादुई पर्दे हैं...' मजूमदार की उस बात का अर्थ उस

वक्त वह समझ नही पाया था, लेकिन आज उसे लगा कि मजूमदार ठीक ही कह रहा था।

...तब बिलकुल आखिरी तारीखें आते-आते उसने देखा, कि पर्दे इतने ऊंचे हो गये, कि इन्सान का झाकना तो दूर, सूरज की किरण भी अदर नही झाक पा रही थी।

वह सोचने लगा--इस तरह तो हम सब लोग नयी रोशनी से वचित रह जायेंगे...घुट-घुटकर मर जायेंगे।

उसने देखा, पूछ फुदकाती हुई चिडिया हर खिडकी के पास आती और पर्दों को ऊचा हो आया देख, किसी पेड की टहनी पर चढ जाती, और उदास-उदास-सी शायद उनके खुलने का इतजार करने लगती। उसे यह सब अच्छा नही लगा।

दूसरे दिन, जब शाम को वह ऑफिस से लौटा, तो उसने देखा, कि उसके और साथी हाथो मे मिठाइयो के पैकेट, दोने, बिस्कुट, यह-वह लेते आ रहे थे, और अपनी साइकिलो की घटिया बजाते हुए, खुशी-खुशी अपने घर मे जा रहे थे। मद-मद मुसकानें उनके होठो पर खेल रही थी।

सब लोगो को खुश देख, वह भी खुश होने लगा। यही तो वह चाहता था कि कुछ भी हो जाए, लेकिन अपनी मुसकानें छीनने का हम किसी को अधिकार न दें।

फिर उसके आश्चर्य की सीमा ही न रही, जब उसने देखा कि सबो की खिडकिया खुली थी, जिन पर पर्दे नही थे। हवा 'जूजू' करती कमरो मे जा रही थी। चिडिया अपनी पूछ फुदकाती हुई सलाखो के बीच बैठी, चुन-चुनकर कुछ न कुछ खा रही थी।

उसे बहुत खुशी हुई—यही तो ..हा, यही तो!

तब उसने मेहता से पूछा, "मेहता! एक बात तो बताओ! . आज ऐसी क्या बात हो गयी है कि तुम लोगो ने अपनी-अपनी खिडकियो के पर्दे उतार दिये हैं?"

सहज भाव से मेहता बोला, 'कुछ नही!...वैसे ही...आज पहली है...हर पहली या दूसरी को हम लोग पर्दे उतार देते है ..या धुलवाने भेज

देते हैं।" उसे साफ लगा, कि यहां मेहना ने झूठ का सहारा लिया है।

यह उसे अच्छा नहीं लगा। लेकिन वह बोला कुछ नहीं। केवल फीका-सा मुसकरा दिया।

उस रात वह ठीक से सो नहीं पाया। उसे लगा कि शायद आज का आदमी जी नहीं पायेगा। या फिर बिना पर्दों के कुछ ही देर को, या कुछ ही दिनों तक जी पायेगा। उसके बाद पर्दे फिर उसकी कमजोरी या उसकी मजबूरी बन जायेंगे।

वह रातभर सोचता रहा।

सुबह उठकर उसने अपनी बीवी से कहा, 'सुनो! हम भी अपनी *खिड़कियों पर पर्दे लगायेंगे।"*

क्या ?" उसकी पत्नी ने आश्चर्य से उसकी तरफ देखा।

'इसलिए कि अब मुझे लगने लगा है, कि आज का इन्सान बिना पर्दों के रह नहीं सकता—जी नहीं सकता। होने को हम भी तो इन्सान हैं . और फिर और फिर पूरी कॉलोनी में एक ही बिना पर्दोंवाला घर हो तो अच्छा भी नहीं लगता !"

बीवी को यह बात शायद गहरी-सी लगी। वह चुपचाप पति की तरफ बस देखती रही।

अगले दिन कॉलोनी के लोग जब वहां से गुजरे तो खुश हो रहे थे कि कॉलोनी में बिना पर्दोंवाला जो एक घर था अब वह पर्दों के महत्त्व को समझ गया है और उसने अपनी खिड़कियों पर पर्दे लगा लिये हैं।

लोग उसकी खिड़कियों पर लगे पर्दों को देख-देखकर मुसकरा रहे थे। लेकिन उसे लग रहा था कि पर्दे लगाने के बाद वह जैसे अनायास ही गंभीर हो गया था।

तब उसे लगा कि इन पर्दों ने जैसे उसकी मुसकान छीन ली थी।

उसे पसीना आने लगा। रूमाल से पसीना पोंछता हुआ वह बाहर चला आया। बाहर आकर उसने एक लंबी सांस खींची तो उसे बड़ा अच्छा लगा।

तब फिर उसने आसमान की तरफ देखा। उसे लगा—आसमान कितना साफ था।

अपने ही घर में...

वसुधा अपने बच्चे के साथ तागे मे पीछेवाली सीट पर और पिता तागेवाले के पास बैठे। समीप ही सामान भी रखवा लिया। तागा चलने लगा तो वसुधा को लगा कि शहर कितना बदल गया है। पाच साल के लबे अतराल के बाद वह उस शहर मे आयी है, जहा उसने बचपन मे किलकारिया भरी थी। जहा बडी होते-होते उसने कई फूल खिलते-मुरझाते देखे थे। जहा हसो के जोडो को देख-देखकर उसने कई सपने सजोये थे। जहा एक दिन उसके हाथो पर मेहदी लगायी गयी थी। जहा से एक दिन सजी-सवरी डोली मे बैठकर वह चली गयी थी—एक अनजाने, पराये घर!

पाच साल बीत गये। तब और अब मे कितना परिवर्तन आ गया है!

उसने रास्तो के इधर-उधर देखा। सडकें चौडी हो गयी है। टाउनहॉल के पास से गुजरते हुए उसे लगा—अरे, कितना अतर हो गया है! दुकानें सब पक्की हो गयी है। टाउनहॉल के आगे एक बगीचा लग गया है। रग-बिरगे फूल मुसकरा रहे हैं। चौराहो पर सिगनल-लाइट्स लग गयी है। बीमार धुधले बल्बो की जगह ट्यूब-लाइट्स फिट हो गयी हैं। पीछे की ओर मुडकर वसुधा बोली, "पिताजी, कितना बदल गया है अपना शहर!"

"हा, बदल गया है।" सक्षिप्त-सा उत्तर देकर वे चुप हो गये। उनका यह उत्तर वसुधा को अच्छा न लगा। उसने सोचा, पिताजी शायद कुछ सोच

रहे हैं।

लेकिन पाच साल के अदर उसने न जाने कितने प्रश्न अपने मन की स्लेट पर सजा-सजाकर लिख रखे थे। भला वह कैसे चुप रहती ! पिताजी की तरफ देखकर फिर बोली, ' सजय बडा हो गया होगा ? कौन सी क्लास मे पढता है ?"

"सातवी मे।"

"सात्वना कैसी है ? अब तो बडी हो गयी होगी ! कही बात-बात चलायी है ?"

"हा, एक-दो जगह चलायी तो है।"

वसुधा को यह अच्छा नही लग रहा था कि पिताजी उसकी हर बात का ऐसा सक्षिप्त-सा उत्तर दे रहे हैं। लेकिन फिर उसने सोचा कि उम्र बढते-बढते कई लोगो का स्वभाव बदल जाता है। किंचित गभीरता आना स्वाभाविक है।

वसुधा ने फिर इस बात की तरफ से अपना ध्यान हटा लिया। वह इधर-उधर शहर की बढी रौनक देखने लगी। फिर अचानक उसे लगा कि बच्चा तागे मे बैठा-बैठा झपकिया ले रहा है। ट्रेन की थकान और ठडी हवा लगने से उसे शायद नीद आ रही थी।

वसुधा सोचती रही—ऐसे चार सावन बीत गये थे, जबकि वह हमेशा किसी ऐसे पत्र की प्रतीक्षा करती रहती थी जिसमे उसे पीहर बुलाया जायेगा, लेकिन उसे हमेशा निराश होना पडा था।

सहसा उसे लगा कि वह तग गली आ गयी है जहा सहेलियो के साथ उसने कितने ही खेल खेले थे। कभी भी धूल, बरसात, गरमी की परवाह नही की। वे दिन भी कैसे थे ! उसका मन भर आया।

पडोस के बच्चे तागे की आवाज सुनकर बाहर निकल आये। वसुधा को याद आया कि वह भी बचपन म ऐसे ही बाहर निकल आती थी, जब कोई तागा या कार उनकी गली म आ जाती थी।

दरवाजे के आगे तागा रुका। मा पहले से ही द्वार पर खडी थी। वसुधा ने बच्चा पिता की गोद मे दिया और खुद झट से तागे से कूदकर मा के गले जा मिली। फिर उसे खुद अपने पर ही अचरज होने लगा कि कैसे वह तागे

से कूद पडी थी । उसकी नसो मे ऐसी फुर्ती आज कहा से आ गयी थी ?

नये वातावरण मे आकर बच्चा रोने लगा। नानी ने उसे गोद मे ले लिया। उसे धीरे से चूमती हुई बोली, "कितना कमजोर है बेचारा ! क्या बीमार था इन दिनो ?"

वसुधा कोई उत्तर दे, उससे पहले सात्वना आकर उसके गले लग गयी। वसुधा ने भी उसे अपने आलिगन मे ले लिया, "अरे, कितनी बडी हो गयी है सतू !" फिर इधर-उधर देखकर पूछा, "सजय कहा है ?"

'ट्यूशन पर गया है। बस आता ही होगा !"

उसने देखा, इस बीच पिताजी ने सामान अदर रखवा लिया है और तागेवाला भी अब जा चुका है।

सब लोग अदर जाने लगे। वसुधा को लगा कही कोई फर्क नही आया है। खाटें उसी जगह रखी हैं, जहा पहले रहती थी। कोने मे वही मेज थी, जिस पर कुछ किताबें रखी थी। शायद सात्वना की थी, या सजय की ! टेबुल-लैंप वही था केवल उसका रग बदल गया था। शायद दीपावली पर सजय ने रग लिया हो। कुल मिलाकर उसने देखा, वही कोई अतर नही आया है।

कुछ देर वह घर को ऐसे ही देखती रही। फिर सात्वना को बुलाकर कहा, "सतू, चाय तो पिला। ट्रेन की थकान है न ! और देखना, मुन्न के लिए थोडा दूध भी गरम कर लेना।"

सात्वना चौके की तरफ चली गयी। पिताजी चुपचाप बाहर निकल गये तो मा बोली, "वसु, कितनी कठोर है री तू ! महीने-दो महीने बाद जाकर कही एक चिट्ठी लिखती है। अरे मेरा तो बुढापा है। मैं सुस्ती कर भी लू, लेकिन तुझे समय पर भेजनी चाहिए न ! कभी-कभी तो बडी चिंता हो जाती है।"

उसका कोई उत्तर दे, उससे पहले वसुधा ने देखा, पडोस की रुक्मा चाची आ रही है। अदर आते ही वसुधा के सिर पर हाथ फेरकर बोली, "आ गयी, वसुधा ?"

"हा, चाची ! कैसी हो ?"

'अच्छी हू। अभी-अभी कमला ने आकर बताया कि तू आयी है। वैसे

गभीरता से मा बोली, "बेटी ! घर तो बहुत ध्यान मे हैं, लेकिन आजकल पैसा परमात्मा हो गया है। सच पूछो तो अभी तक तेरी शादी का ही कर्ज ठीक से नही उतरा है। वरना तू ही सोच, पूरे पाच साल का बिछोह मैं कैसे सहती ! दोहते को देखने के लिए आखें तरसती रही। इनसे कहती तो झल्ला उठते। बिना पैसे के बेगाने-से हो गए हैं। घर मे किसी से ढग से बात तक नही करते।"

वसुधा को एक झटका-सा लगा—तो पिताजी का ऐसा व्यवहार क्या इसी कारण है ?

तभी सजय आया। किताबें फेंककर झट लिपट पडा "कब आयी, दीदी ?"

"अभी आयी हू। अरे, मैं तेरे लिए एक बढिया पेन लायी हू।"

"अच्छा ! मेरी अच्छी दीदी !" उसका चेहरा खिल उठा।

वसुधा ने उठकर अपना बैग खोला। पेन निकालकर सजय को दिया। फिर एक नयी साडी निकालकर सात्वना को बुलाया, "सतू ! सतू ! यहा आओ जरा !"

गीले आटे से सने हाथ धोती हुई सात्वना अदर आयी, "तुमने बुलाया, दीदी ?"

'हा, देख ! यह साडी कैसी है ?"

'अच्छी है, दीदी !"

'तुझे पसद है ?"

"हू ऽ।"

'रख ले। तेरे लिए लायी हू।"

सात्वना ने कोई उत्तर नही दिया। उसके चेहरे से खुशी साफ झलक रही थी।

तभी पिताजी आ गये। बोले, "वसु, तुम्हारे लिए मच्छी लाया हू, बेटी ! तुम्हे बहुत पसद है न !"

कोई उत्तर न देकर वसुधा केवल मुसकरा दी। वह पिता की तरफ देखन लगी। उसे खुशी हुई कि चलो, पिताजी ने उससे कोई बात तो की।

सजू की मा न बता तो दिया था, कि उसने तुझे चिट्ठी लिखवा दी है। क्यो, कुवर साहब नही आये ?"

'नही, इन दिना उनके कारोबार का सीजन है। सा फुरसत कहा मिलती है !"

'अच्छा, अच्छा। और सुखी तो हो बिटिया ?'

'हा। कमल नही आया, चाची ?"

'अरे, वह तो शरमाने लगा। मैंने कहा कि आ जा रे! मिल ले अपनी वसुधा से, तो बोला, 'पता नही मुझे पहचानेंगी भी या नही !' लेकिन बटी, तुझे बहुत याद करता है। तेरे जाने के बाद रोज पूछा करता था कि वसुधा दीदी कब लौटेंगी ?"

वसुधा ने देखा कि रुक्मा चाची की आखें भर आयी है। फिर साडी के पल्लू से आखें पोछती हुई बोली, 'जब से उसे पता चला कि सजू की मा न तुझे आने के लिए चिट्ठी लिख भेजी है बस रोज पूछता रहता है तेरे लिए।"

"क्यो नही पूछेगा कमल की मा! इत्ता सा था जब से गोद मे लिये-लिये फिरती थी मेरी वसुधा!' वसुधा की मा बोली।

सात्वना चाय ले आयी। प्याला छोडकर जब वह जाने लगी तो वसुधा बोली, मा कितनी बडी हो गयी है अपनी सतू! कोई घर वर देखा है इसके लिए ?' तश्तरी म चाय उडेलकर वसुधा ने रुक्मा चाची की तरफ तश्तरी बढा दी, 'लो चाची, तुम लो!"

'अरी बिटिया! दूर हटा इस निगोडी चा को। चा पीत पीते हमारा खून पतला हो गया है। नही, तू पी ल, बेटी! मेरी अभी इच्छा नही।" कहकर वह उठने लगी, अच्छा, बाद म आऊगी।

जरूर आना, चाची!'

हा-हा, बटी! अब तो आऊगी ही।

'कमल को भी लेती आना हा।"

'अच्छा, अच्छा!"

रुक्मा चाची चली गयी तो वसुधा बोली हा, मा! मैं सतू क लिए पूछ रही थी।"

गभीरता से मा बोली, "बेटी ! घर तो बहुत ध्यान मे हैं, लेकिन आजकल पैसा परमात्मा हो गया है। सच पूछो तो अभी तक तेरी शादी का ही कर्ज ठीक से नही उतरा है। वरना तू ही सोच, पूरे पाच साल का बिछोह मैं कैसे सहती ! दोहते को देखने के लिए आखें तरसती रही। इनसे कहती तो झल्ला उठते। बिना पैसे के बेगाने-से हो गए हैं। घर मे किसी से ढग से बात तक नही करते।"

वसुधा को एक झटका-सा लगा—तो पिताजी का ऐसा व्यवहार क्या इसी कारण है ?

तभी सजय आया। किताबें फेंककर झट लिपट पडा, "कब आयी, दीदी ?"

"अभी आयी हू। अरे, मैं तेरे लिए एक बढिया पेन लायी हू।"

"अच्छा ! मेरी अच्छी दीदी !" उसका चेहरा खिल उठा।

वसुधा ने उठकर अपना बैग खोला। पेन निकालकर सजय को दिया। फिर एक नयी साडी निकालकर सात्वना को बुलाया, "सतू ! सतू ! यहा आओ जरा !"

गीले आटे से सने हाथ धोती हुई सात्वना अदर आयी,' तुमने बुलाया, दीदी ?"

'हा, देख ! यह साडी कैसी है ?"

'अच्छी है, दीदी !"

'तुझे पसद है ?"

"हू ऽ।"

"रख ले। तेरे लिए लायी हू।"

सात्वना ने कोई उत्तर नही दिया। उसके चेहरे से खुशी साफ झलक रही थी।

तभी पिताजी आ गये। बोले, "वसु, तुम्हारे लिए मच्छी लाया हू, बेटी ! तुम्हे बहुत पसद है न !"

कोई उत्तर न देकर वसुधा केवल मुसकरा दी। वह पिता की तरफ देखने लगी। उसे खुशी हुई कि चलो, पिताजी ने उससे कोई बात तो की।

"हा, सुनाओ, बेटी ! कुवर साहब का कारोबार कैसा चल रहा है ?" पिताजी फिर बोले।

"अच्छा चल रहा है।"

"कई दिनो से इच्छा हो रही थी उनसे मिलने की, लेकिन..." कहते-कहते वह रुक गये। फिर कुछ देर बाद बोले, "वैसे एक बार दिल्ली जाते हुए उधर से गुज़रा तो था।"

"तो आ जाते .." वसुधा बोली।

"आ तो जाता, बेटी ! लेकिन पहली बार सबधियों के यहा जाना तुम ही सोचो, कितना खर्चा..." फिर जैसे बातो का रुख बदलकर बोले, "हा, तुम्हारी ससुरालवालो का स्वभाव कैसा है ?"

"अच्छा है।"

"सुखी तो हो न ?"

"हा !" वसुधा को लगा, पिताजी का स्वर भारी हो आया है।

इस बीच मुन्ना जग गया था। वह रोने लगा। सजय ने उसे गोद में उठा लिया। पिताजी भी उठकर दूसरे कमरे मे चले गये। सजय बच्चे को पुचकारता बाहर निकल आया।

तब मा बोली, "सच पूछो तो, वसु, इस बार भी इनकी इच्छा तुम्हें लिखने को नही थी, लेकिन मैं ही जिद करने लगी। पडोसिनें बार-बार पूछती रहती कि वसुधा को इस सावन मे भी नही बुलवाओगी ? कितने साल हो गये है ! हम तो उसे देखने को तरस रहे हैं !"

वसुधा सुनती रही।

"फिर मैंने कहा—चाहे कुछ ही दिनो के लिए सही, बुला तो लीजिए।" वसुधा भाप गयी कि यहा अस्पष्ट रूप से मा ने सकेत कर दिया है, कि उसे थोडे ही दिनो के लिए बुलवाया गया है।

वसुधा ने अपना बैग बद कर लिया। फिर पर्स मे से कुछ रुपये निकालकर, मा को देती हुई बोली, 'लो, रख लो।"

मा एकटक वसुधा को देखती रही, "नही, बेटी ! यह मैं नही लूगी। लडकी की तरफ से . "

"अरे मा, रखो तो ! मैं कोई तुम्हे थोडे ही दे रही हू। यो समझ लेना

कि मैंने सजू और सतू को दिये है।"

मा फिर भी नही लेती, लेकिन जब देखा कि वसुधा की सहेली प्रिया अदर आ रही है तो उन्हे रख लिया।

हाय, वसु ! सो तुम आ गयी हो .गुड ! आइ एम ग्लैड टु सी यू अरे तुम ऐसे क्या देख रही हो ? '

'कैसी हो ?' वसुधा ने सक्षिप्त-सा प्रश्न किया।

नाइस ! कितने बच्चे है ?"

'अभी तो एक ही !"

"गुड ! डॉक्टर की सलाह लेने मे तो अभी काफी देर है न !" वह हसती हुई बोली, "अच्छा, फिर मिलेंगे। अभी कही जाना है। ओ के ... सी यू !"

अचरज से वसुधा प्रिया को देखती रही। कैसे आयी और चली गयी ! कैसा दिखावा था यह ! मा से पूछा उसने, 'यह प्रिया कितनी बदल गयी है ? अभी तक इसकी शादी नही हुई ?'

'नही, बेटी ! तेरी यह सहेली बहुत बिगड गयी है। पडोस की नाक कटवा दी है मुई ने ! मैं तो अपनी सात्वना पर इसकी छाया भी नही पडने देती।"

'लेकिन मा ! प्रिया ऐसी थी तो नही। यह सब अचानक "

"अचानक नहीं बेटी ! दोष परिस्थितियो का है। बाप को लकवा मार गया है। करीब तीन साल हुए है, भाई घर से भाग गया है। आज तक पता नही चला कि जिदा भी है या मजबूरी क्या नही करवाती, बेटी !"

कुछ देर तक वे आपस मे बातें करती रही। वसुधा नहा-धोकर पास-पडोस के घरो म सहेलियो से मिलने चली गयी।

शाम को जब वापस आयी तो देखा कि घर मे सबो के चेहरे उतरे हुए है। उसे बडा अजीब-सा लगा। बीडी लें आने का बहाना बनाकर पिताजी बाहर चले गये और मां चौके मे। सजय मेज़ के पास जाकर पढने लगा। वसुधा को लगा कि जरूर कोई झगडा हुआ है।

'क्या बात है, सतू ? सब लोग यों मुह चढाकर क्यो बैठे हो ?" उसने सात्वना से पूछा।

'कुछ नही, दीदी ! ऐसे ही रुपये-पैसे के मामले मे पिताजी कुछ गुस्सा हो रहे थे।"

वसुधा अचरज से इधर-उधर देखने लगी। मा कमरे मे आकर संजय से बोली, 'देखना बेटे, तेरे बापू कहा जा रहे हैं ?"

क्या बात है, मा ! कहा जायेंगे ? बीडी लेने गये हैं शायद।"

"नही बेटी, तू नही जानती। तेरे जाने के बाद इस घर मे क्या-क्या नही हुआ है !" वसुधा ने देखा कि मा की आखें भर आयी थी।

"क्या हुआ है, मा ?"

'क्या बताऊ, तेरे बापू रुपये पैसे के मामले मे ऐसे ही झगड लेते है। सुन-सुनकर मैं भी तग आ जाती हू। कभी कुछ कह देती हू, तो वे घर छोडकर चले जाते है तीन बार उन्होने आत्महत्या की कोशिश की, लेकिन शायद इन बच्चो की ही किस्मत है कि लोगो ने हर बार उन्हे बचा लिया !"

वसुधा का चेहरा उदास हो आया। कुछ क्षण रुककर उसने पूछा, 'आज फिर क्या बात हो गयी थी, मा ?"

भरे कठ से मा बोली, "आज तू जो आ गयी है।"

वसुधा के पैरो तले जैसे जमीन खिसक गयी 'मै ! मैने क्या कर दिया है ?"

'कुछ नही किया है बेटी.. !"

'नही...बताओ तो क्या बात है ?"

"क्या करोगी सुनकर ! इससे तो अच्छा था कि मैं मर गयी होती ! फिर कोई मोह-ममता की डोर तो न रहती। खत तो मैंने ही लिखवाया था तुझे।"

वसुधा अब भी ठीक से बात नही समझ पायी थी। असमजस से मा की ओर ताकती रही।

मा फिर बोली, 'तुम आज तो आयी हो और वे आज ही पूछने लगे हैं कि वसुधा आ तो गयी है, लेकिन जाएगी कब ?" उसकी आखें भर आयी थीं।

उससे कुछ कहा न गया और जहर की घूट-सी पीकर रह गयी।

कुछ देर वसुधा चुपचाप सोचती रही। फिर उसे लगा जैसे अपने ही घर मे वह एक अजनबी की तरह चली आयी है। उसे कुछ भी अच्छा नही लग रहा था।

रात को काफी कोशिश के बावजूद उसे नीद नही आ रही थी। पिताजी की उस बात पर काफी देर तक सोचती रही। फिर मन ही मन विश्लेषण करने पर उसे लगा कि ये शब्द एक बाप के मोह ने नही उसकी मजबूरियो ने कहे थे, परिस्थितियो ने कहे थे सच आदमी आज कितना विवश हो गया है !

उसे लगा कि जैसे वह किसी पराये घर म सो रही है।

आखो म भर आये आसू पोछकर उसने करवट बदल ली और सारी रात सोने का असफल प्रयास करती रही।

कुछ भी नहीं

बाप को अचानक आया देख कुछ देर के लिए वह भौंचक्का-सा रह गया, लेकिन तुरत ही अपने-आप को सभालकर उसने बाप के हाथ से अटैची ले ली और प्रश्न-भरी दृष्टि से उनकी ओर देखने लगा। सिर से टोपी उतारकर कमरे मे अदर आता हुआ बाप बोला, *'तुम्हे ज़रूर आश्चर्य हुआ होगा* कि मैं अचानक कैसे आ गया ! शायद तुम्हे ऐसी उम्मीद भी नही होगी कि मैं इस तरह फिर दुबारा. " बाप ने शायद यह सोचकर बात अधूरी छोड दी कि आगे बेटा खुद समझ गया होगा।

बाप के हाथ से वाकिंग-स्टिक ले अपनी आवाज़ मे ज़रूरत से ज्यादा नर्मी लाता हुआ बेटा बोला, 'नही, वैसे तो सब ठीक था, लेकिन अगर आप मुझे पहले से सूचित कर देते तो मैं स्टेशन पर ही आ जाता। वैसे यह भी ठीक था, लेकिन मेरे कहने का मतलब था कि ..नया-नया घर बदला है मैंने। कही आपको घर ढूढने मे कोई तकलीफ न हुई हो, इसलिए .."

"नही-नही, ऐसी कोई खास तकलीफ नही हुई। फिर मैं तुम्हे इसलिए भी पहले से नही लिख पाया, कि अबकी बार मेरा इरादा इस ओर आने का था नही। ऐसे ही व्यापार के काम से दिल्ली गया था। लौटते हुए सोचा कि एकाध दिन तुम्हारे यहा भी..."

बेटे ने रेडियो खोल दिया। रेडियो की तरफ देखता हुआ बाप बोला, "यह नया लिया है क्या ?"

"हा।"

"और वह पुराना ?"

"वह कुछ ठीक नही लगा, इसलिए बेच दिया।"

"हू!" बाप वैसे ही थोडा मुसकराता-सा बोला "वहा हमारे पास तो वही पुराना रेडियो है। अभी तो चल रहा है। और हमे तो खबरो से ही सरोकार है, सो काम दे रहा है। भला अगर बूढ़ा हो गया तो घर से थोड़े ही निकाल देंगे!" बेटे को लगा कि यहा बाप ने कही ताना मार दिया है। लेकिन बाप के बोलने और देखने के ढग से उसे कुछ ऐसा लगा नही।

थोडी देर बाद बाप बोला, "वैसे मैं समझता हू, मकान तुम्हारा वह भी ठीक था, फिर क्यो बदल लिया ?"

यहा आकर बेटा कुछ निरुत्तर-सा हो गया। लेकिन महज उत्तर देने का ही वह बोला, "वहा ऊपरी मज़िल थी, और मुझे, आपको पता है, फूलों से बहुत प्यार है। वहा ऊपर होने के कारण मिट्टी वाली ज़मीन का मिलना सभव न था और गमलों म फूल लगाना मुझे न जाने क्यो अजीब-अजीब-सा लगता है। कुछ-कुछ कैद-सा...!"

"हू!" बाप एक जम्हाई लेकर अपने कोट के बटन खोलने लगा। थोडी देर बाद वह फिर बोला, "यहा अकेले रहने से तुम्हे कोई तकलीफ तो महसूस नही होती ?"

कोई उत्तर देने की बजाय बेटा केवल मुसकरा भर दिया।

बाप भी कोई विशेष रूप से प्रश्नोत्तर के मूड मे नही था। थोडा हसकर बोला, 'उस दिन तुम्हारे मामाजी आये थे। उन्हे इस बात पर आश्चर्य हो रहा था कि तुम घर से अलग क्यो जाकर रहने लगे हो ? वह रहा था कि शादी के बाद तो कई लडके अपने मा-बाप से अलग हो जाते है, लेकिन यह शादी से पहले ही " बाप ने ठहाका मारकर कहा, "वहां जरूर तुम्हे कोई तो तकलीफ रही होगी, जो तुम घर छोडकर यहा अकेले आकर रहने लगे हो। वैसे भला मा-बाप किसे अच्छे नही लगते!" कहते-कहते बाप की आखो के कोनो के पास हल्का-हल्का कुछ चमकने लगा। भारी हो आयी अपनी आवाज को सतुलित करने की कोशिश करता हुआ बाप फिर बोला, 'वैसे देखो, तुम्हे जब कभी भी ऐसा लगे कि तुम अकेलेपन से तग आ गये

हो, तब अपने घर चले आना।"

चाय बनाते हुए बेटे ने सोचा कि अब फिर एक दो दिन ऐसे ही गुज़रेंगे। इन एक-दो दिनो म कुछ जरूर होगा, जो अच्छा नही होगा। कम-से-कम उसके लिए तो अच्छा नही ही होगा। बाप अधिकार और कर्तव्यो पर लबे-लबे भाषण देगा।

वह जब चाय लेकर कमरे मे आया, तब बाप फिर बोला, "काफी दिनो से तुम्हारी कोई चिट्ठी-पत्री नही आयी। लेकिन तुम्हे तो पता ही है कि तुम्हारी पगली मा का पगला मन है। बस, पूछती ही रहती है।" फिर एक हल्का-सा ठहाका मारकर बाप बोला, 'मै तो और भी उसे कहता रहता हू कि जब कोई समाचार ही नही होगा तब वेचारा क्यो व्यर्थ ही चिट्ठी लिखेगा!" बेटे से चाय का कप हाथ मे लेता हुआ बाप फिर बोला, "सिगरेट तो तुम अब भी पीते होगे?'

"जी जी हा!"

होठो पर फीकी सी मुसकराहट विखेरता हुआ बाप बोला, "हा हा, कोई हर्ज नही है।"

कुछ भी बोलने की बजाय बेटा बस मुसकराता ही रहा। चाय पीते-पीते बाप कमरे के चारो ओर देखने लगा। कमरे की सुदर सजावट को देखकर बोला, "एक बात की मुझे सच मे ही बहुत खुशी है कि तुमने अपना कमरा बडे ही सुदर ढग से सजा रखा है, नही तो अकेले रहनेवाले इन बातो की तरफ अकसर ध्यान नही दिया करते।'

फिर कुछ देर खामोशी रही।

बेटा ही बोला, 'राजेश के इम्तहान कैसे रहे? सुना था कि राजनीति का पेपर बडा ही 'टफ' था!"

हा, राजेश भी ऐसा ही कह रहा था, लेकिन अब इसमे, तुम ही सोचो, कोई क्या कर सकता है! मै जो कुछ तुम्हारे लिए कर पाया किया। तुम्हारे छोटे भाई राजेश के लिए भी जो कुछ मुझसे हो पायेगा करूगा। अगर उसके बाद भी कोई कमी रह जाए तो फिर फिर मै समझता हू कि मुझम ही कोई कमी होगी।" कुछ देर बाद बाप फिर बोला, 'हा, अब तुम्हारी इनकम कैसी है?"

'अच्छी है ! जितना खर्च करता हू, उससे तो ज्यादा ही है । हर महीने और भी कुछ-न-कुछ बच ही जाता है ।"

"हू !" बाप फिर बोला, "अच्छा सुनो, अटैची के कोने मे एक डबलरोटी और मक्खन का पैकेट रखा होगा। ले आओ तो खाकर थोडा आराम करें। ट्रेन का सफर अब मुझसे होता नही । जल्दी ही थक जाता हू।" फिर थोडा मुसकराता हुआ बोला, "अब तेरा बाप बूढा हो गया है। नही ?"

बेटा अटैची से डबलरोटी और मक्खन निकालकर टेबुल पर ले आया। बाप चुपचाप उठकर टेबुल के पास चला गया तो बेटा बोला "मैने होटल मे खाना खा लिया था, आप ही ."

'अच्छा, अच्छा !" थोडी देर बाद बाप फिर बोला, 'वैसे देखो, इन चीजो की बजाय मेरा इरादा रोटी खाने का था। लेकिन सोचा कि कहा रात मे तुम्हे तकलीफ देता फिरूगा, इसलिए आते-आते डबलरोटी-मक्खन लेता आया।" मुह मे कौर चबाता हुआ बाप फिर बोला, "और दूसरी बात यह भी है कि घर का खाना खाते-खाते जब मै तग आ जाता हू, तब डबलरोटी-मक्खन खाने की मेरी बहुत इच्छा होती है। शायद यह सोचकर भी..."

बेटा जब तक पानी का गिलास भर लाया था। बेटे को फिर आया देखकर बाप बोला, 'आओ, आओ बैठो ! थोडा तो खा लो।" और एक ठडी सास लेता हुआ बाप फिर बोला, 'वहा जाकर जब तुम्हारी मा को बतलाऊगा कि हम दोनो ने एक साथ मिलकर कुछ खाया था तब वह बहुत खुश होगी। ऐसे ही, बस मा का मन है न !'

इच्छा न होते हुए भी बेटा बाप के साथ बैठकर खाने लगा।

खा लेने के बाद बाप फिर बोला, 'अरे, हा कुछ दिन पहले तुमने मनी-आर्डर क्यो भेजा था ?"

"ऐसे ही पैसे बचे हुए थे। मुझे कोई ऐसी खास जरूरत नही थी। सोचा, शायद आपके यहा काम आ जाए।"

"हू ! वह मनीआर्डर न लेकर, मैने तुम्हे लौटा दिया था, तुम्हे कोई बुरा तो नही लगा ?"

"हू ! शायद नहीं। मैंने यही सोचा होगा कि शायद आपको भी जरूरत नहीं होगी, इसलिए . "

बाप को शायद बेटे का यह उत्तर कोई बहुत अच्छा नहीं लगा, फिर भी बोला, 'नहीं, खैर ऐसी बात तो नहीं थी। गृहस्थी वाले घर में जरूरत तो रहती ही है। लेकिन मुझे जाने क्यों ऐसा लगा कि तुमने अब मा के दूध के पैसे चुकाने शुरू कर दिये है। वैसे बेटे द्वारा भेजे गये पैसों को लौटाना तुम्हारी मा को अच्छा नहीं लगा था, लेकिन सच तो यही है कि मैंने इसी कारण..."

"नहीं, इस सबके पीछे मेरा ऐसा कोई इरादा नहीं था।"

"या फिर शायद तुमने मेरे तथाकथित एहसानों का बदला चुकाना चाहा हो! मा-बाप और औलाद के बीच किसी एहसान का होना मुझे अच्छा नहीं लगता।"

"नहीं ऐसा भी मेरा कोई इरादा नहीं था।"

'तो फिर मेरी ही कमजोरी है, गलती है। मुझे शायद ऐसा नहीं करना चाहिए था।" इस बीच बेटे ने एक जम्हाई ली। बाप को लगा कि उसके बेटे को ऐसी बातों से कोई खास लगाव नहीं है। इसलिए बोला, "अच्छा, अब तुम सो जाओ। मैं समझता हू कि रात काफी हो चुकी है। तुम्हें भी नींद आ रही होगी। और सच तो यह है कि मैं भी बहुत थका हुआ हू।"

बाप के लिए उसी कमरे मे बिस्तर लगाकर बेटा दूसरे कमरे मे चला गया। बेटे को यह सब अजीब-सा लग रहा था। उसे याद आया कि पिछली बार भी जब उसका बाप यहा आया था, तब भी काफी कुछ भला-बुरा कह गया था। अब भी उसे ऐसा लग रहा था—जब तक बाप यहा रहेगा, तब तक रोज नये नये उपदेश, नये-नये भाषण सुनने होंगे। यही सोचता सोचता वह सो गया था।

दूसरे दिन बाप के साथ वह बाजार की ओ
व्यापारी से कोई काम था। बस स्टैण्ड
"आजकल व्यापार मे वह पहले जैसा

परिश्रम के बाद बस गुजारे योग्य ही कुछ निकल पाता है। बाकी बचत के नाम पर कुछ भी नही है।"

बेटे ने इस परिवेश से शायद अपने-आप को जुडा हुआ नही पाया। इसलिए कोई भी उत्तर देने की बजाय वह अपने जूतो की तरफ देखता हुआ चलने लगा।

बाप फिर कहने लगा, "इसीलिए सोच रहा हू, कि राजेश को मैं व्यापार मे नही फसाऊगा। भले ही पढ-लिखकर वह भी तुम्हारी तरह किसी नौकरी आदि मे आ लगे। व्यापार की झझटो से तो दूर ही रहेगा।" कुछ देर शान्त रहकर बाप फिर बोला, "हा, यह हो सकता है कि किसी भी अच्छे या बुरे कारण को लेकर वह भी तुम्हारी तरह हमारे साथ न रहना चाहे, और कही अलग जाकर रहने लगे, तो ऐसे मे जो सम्भावित कठिनाइया मेरे लिए आ सकती हैं, उनका समाधान मैंने अभी से ही ढूढ निकाला है।"

बेटा प्रश्नभरी निगाहो से बाप की तरफ देखने लगा।

बाप ने बेटे की निगाहो को भाप लिया। बोला, "मैंने सोचा है कि व्यापार मे जो थोडा-बहुत पैसा लगा है, वहा से वह निकालकर एक-दो मकान खरीद लूगा। फिर उनके किराये से, मैं समझता हू, हम दोनों पति-पत्नी का गुजारा चल जाएगा। वैसे यह तो सही है कि व्यापार जितनी आमदनी तो नही होगी। लेकिन बुढापे मे शायद मुझ से—व्यापार मे जितने परिश्रम की जरूरत है—नही हो पाएगा।"

बेटे को लगा कि उसकी इतनी लम्बी खामोशी बाप को शायद अच्छी न लगे। कुछ बोलने की ही खातिर वह बोला, "हा-हा, जैसा आपको ठीक लगे।"

बाप के लिए भी ऐसे उत्तर का शायद कोई महत्त्व नही था, इसलिए बेटे के इस उत्तर ने उस पर कोई विशेष प्रभाव नही छोडा।

बस-स्टैण्ड पर कुछ लडकिया भी खडी थी। बाप को लगा कि बेटे का ध्यान उसकी बातो से हटकर उन लडकियो पर जा केन्द्रित हुआ है। तब अचानक उसे शायद कुछ याद हो आया। बेटे से उसने पूछा, 'अरे, हा, अब की बार तुम्हारे कमरे मे वह चित्र नही था?"

"कौन-सा?" बेटे ने आश्चर्य से बाप की तरफ देखा।

"वही, जिसमे एक औरत उल्टी कर रही है और उससे सेव के कुछ टुकडे जमीन पर आ गिरे हैं। सामने डरा-डरा, सहमा-सहमा-सा शैतान खडा है।" कुछ रुककर बाप फिर बोला, "पिछली बार तुमने शायद मुझे उस चित्र का मतलब भी समझाया था। जहा तक मुझे याद है, तुमने कहा था कि यह किसी चित्रकार की एक कल्पना है कि 'काश, हव्वा वह निषेध-सेव न खाती, या फिर खा लेने के बाद उल्टी ही कर देती, तो यह गंदा ससार पैदा ही न होता। और उसकी उल्टी से शैतान के चेहरे का उतर जाना स्वाभाविक ही है, क्योकि यह पूरी शरारत उसी की तो थी।' मैं समझता हू, यही मतलब था। शायद.. वैसे तुम्हे तो पता है कि तुम्हारा बाप एक व्यापारी आदमी है, और इन बातो का उसे इतना ज्ञान नही है।"

"हा-हां, बिलकुल यही मतलब था," फिर थोडा मुसकराकर बेटा बोला, "उस चित्र को देखते-देखते अब मैं ऊब गया था, इसलिए उतारकर रख दिया।"

तुरन्त ही बाप बोला, "तो फिर अब मैं यह समझ लूं कि अब तुम उस तथाकथित गदगी को इतना गदा नही समझते ! और अब शायद तुम्हारी शादी करने की इच्छा हुई होगी। पिछली बार जब तुम्हारी शादी की बात की थी मैंने, तब तुमने वह चित्र दिखाकर, यह कहते हुए मुझे टाल दिया था, कि आदम और हव्वा की गलती को दोहरा कर तुम शैतान को महत्त्व देना नही चाहते।"

बेटा केवल थोडा मुसकरा भर दिया।

बाप ने ऐसी गम्भीर बात को यो ही उडाना नही चाहा। बोला, "नही, ऐसे मुसकराने से काम नही चलेगा। तुम फिर भी अगर नही चाहते तो मैं कुछ नहीं कहूंगा। देखो, यह तुम्हारा निजी मामला है, तुम जैसा ठीक समझो, करो। बाकी यह सच है कि वहा [illegible] के लिए को[illegible] कोई आता ही रहता है, तब मैं असमंजस मे [illegible] हूं कि [illegible] उत्तर दू।" एक ठंडी आंस भरकर बाप [illegible] कि[illegible] किसी-न-किसी झूठ का सहारा लेना पडता है [illegible] मुझे इस बात पर अफसोस-सा होता है [illegible] जो

बच्चो को हमेशा झूठ से दूर रहने के उपदेश दिया करता था, वह स्वयं झूठ बोलने लगा है। फिर कभी-कभी मुझे ऐसा भी लगता है कि क्यो न उन सब लोगो को साफ-साफ बता दू। फिर सोचता हू कि उन्हे क्या बताऊ! यही कि मेरा अपना बेटा. "

बेटे को लगा कि बाप का गला भर आया था। कुछ शब्द उसकी जबान तक आते-आते जैसे रुक गए थे। आखों का चश्मा उतारकर उसके शीशे पोछने के बहाने बाप ने अपनी आखो से भी कुछ पोछा। फिर अपने स्वर को सभालता हुआ-सा वह बोला, 'मै समझता हू कि तुम्हे यह सब अजीब-सा लगता होगा। लेकिन मै भी क्या करू। मै पुराने विचारो का हू, इसलिए "

बेटे को लगा कि अब वही पुरानी शुरूआत हुई है। अब बाप लम्बे-लम्बे भाषण देगा, बड़े-बड़े उपदेश सुनायगा। लेकिन ऐसा नही हुआ। बाजार से लौटते हुए दोनो चुप थे। केवल बाप इतना बोला, "मैने सोचा है कि आज शाम वाली गाडी से वापस चला जाऊ। जाने क्यो और अधिक रहने की "

शाम को स्टेशन तक आते-जाते भी बेटे को लगा कि अब, जब तक गाडी छूटेगी, तब तक बाप जरूर कुछ न-कुछ समझाएगा, औरो के उदाहरण देकर कोई उपदेश देगा। और न जाने क्यो बेटे को दुनिया मे और किसी भी चीज से इतनी नफरत नहीं थी, जितनी कि उपदेशो से।

लेकिन स्टेशन पर भी बाप चुप रहा। केवल इतना भर ही कह पाया, "वैसे मै तुम्हें स्टेशन तक आने की तकलीफ नही देता। लकिन सोचा, कि वहा जब जाऊगा तब तुम्हारी मा जरूर ऐसा प्रश्न पूछेगी। और फिर अगर उसे यह पता चलता कि बेटा बाप को स्टेशन तक भी छोडने नही गया, तो व्यर्थ ही रोना शुरू कर देती। सच तो यह है कि तुम्हारे इस बूढे बाप का मोह अब तुम्हारी मा का रोना नही सह पाता।"

बेटा बोला, "आपके लिए चाय ले आऊ ?"

'नही, गाडी छूटने ही वाली है।" भावुक बात के बीच बेटे का ऐसा हल्का प्रश्न बाप को शायद अच्छा नही लगा।

गाडी छूटते समय बाप बोला, "वहा राजेश को जब पता चलेगा कि

मैं तुम्हारे पास भी गया था, तब जरूर पूछेगा कि भाई ने उसके लिए क्या भेजा है। लेकिन कोई बात नहीं। मैं उसके लिए कुछ-न-कुछ लेता जाऊंगा। छोटे भाई का दिल है न! हां, वह तुम्हें याद बहुत करता है। देखना, अगर इधर कोई फोटो खिचवाया हो तो उसे भेज देना।" फिर जैसे थूक निगलता-सा वह बोला, "देखकर बेचारा बहुत खुश होगा। तुम वहां सिवा अपने कमरे के कोई और निशानी भी तो नहीं छोड आए हो!"

गाडी छूटने पर भी बेटे ने देखा कि बाप आखिर तक खिडकी से उसे निहारता रहा। गाडी जब प्लेटफॉर्म छोड गयी, तब एक हल्की-सी मुसकान बेटे के होठों को छू गयी। उसे इस बात पर आश्चर्य हुआ कि इस बार बाप कितना बदल गया था, कि उसने कोई भी भाषण नहीं दिया, कोई भी उपदेश नहीं सुनाया।

उसे लगा कि पिछले दो दिन हमेशा की ही तरह बिलकुल साधारण ढग से गुजरे है, जिनमे जैसे कुछ हुआ ही नहीं था। कुछ भी नहीं।

कमजोर नसोंवाला घर

अस्पताल से ले जाने के बाद भी वह ठीक कहां रहने लगा था ! घंटों बिस्तर पर पड़ा रहता। फिर कभी जब हवाएं और ठंडी हो जातीं, या थोड़े बादल घिर आते तो घुटनों के दर्द की या 'कमर गयी. .कमर गयी' की उसकी शिकायत और बढ़ जाती।

डॉक्टरों ने तो उसके घरवालों को मना भी किया था कि अभी उसे घर मत ले जाओ, उसका इलाज पूरा नहीं हुआ है; लेकिन घरवाले ही जिद किये हुए थे कि नहीं, जब मरीज स्वयं ही कह रहा है कि अब मैं ठीक हूं, तो फिर जबरदस्ती क्यों की जाए ! घरवालों की जिद देखकर डॉक्टरों ने उसे डिस्चार्ज तो कर दिया, लेकिन उसे 'फिटनेस सर्टिफिकेट' नहीं दिया। बोले, 'अभी तो कुछ दिन मरीज को घर पर आराम करने दो, उसके बाद ही यह ऑफिस जाने लायक होगा।"

घरवाले भी राजी हो गये थे।

असल में लग तो उन्हें भी रहा था कि बूढ़े को अभी तक चलने-फिरने में तकलीफ़ हो रही है, लेकिन वे लोग अस्पताल आते-जाते थक गये थे। दिन में दो-दो, चार-चार बार अस्पताल आते, और फिर अगर डॉक्टर कहीं कोई इंजेक्शन या दवा लाने को कहते, तो शहर तक का एक चक्कर और हो जाता।

यहां तक हो तो भी ठीक, लेकिन कभी-कभी रात में भी उनके

पासवाले कर्नल साहब के घर डॉक्टर का टेलीफोन आ जाता कि उन लोगों से कहें कि मरीज बहुत नर्वस हो गया है और घरवालों को वहां बुलाने के लिए ज़िद कर रहा है। तब बुढ़िया को भी यह अच्छा नहीं लगता। फिर भी घरवाले अस्पताल पहुंच जाते। वहां जाकर देखते कि बूढ़ा पलंग पर बैठा-बैठा जल्दी-जल्दी बीड़ी के कश ले रहा है और सोये हुए अन्य मरीज़ों को ऐसे गौर से देख रहा है, जैसे वे सब मर गये हों, या जैसे वह कहीं लाशों के बीच घिर गया हो!

बुढ़िया जब पूछती कि क्या बात है, तो वह बस इतना भर ही कहता कि खिड़की के पासवाला परदा जब हिला था, तो मैंने देखा, काले भैंसे पर सवार, किसी नीग्रो-जैसा, काला-सा एवं मोटा आदमी बाहर खड़ा है।

बुढ़िया को लगता कि यह बात कहते-कहते बूढ़े का चेहरा आतंक से न जाने कैसा हो जाता है!

बार-बार ऐसी बातें सुनकर बुढ़िया डर गयी थी कि कहीं कुछ ऐसा-वैसा तो नहीं होनेवाला। लोग बताते हैं कि काल-देवता इसी तरह भैंसे पर सवार होकर आते हैं।

ऐसा ही डर बूढ़े को लगा था, और शायद इसी कारण वह सोचने लगा था कि उसे अब घर जाना चाहिए। यहां अस्पताल में ही मर जाना उसे स्वीकार्य नहीं था।

अब घर आ जाने के बाद भी वह घुटनों के दर्द और 'कमर गयी .. कमर गयी' की शिकायत करता रहता।

कभी-कभी बुढ़िया को लगता कि अपनी बड़ी बेटी को लिख भेजे कि घूमने-घामने के बहाने वह हम लोगों के यहां आ जाए और अपने बाप को कुछ ढाढस बंधवा जाए कि वे जल्दी ही अच्छे हो जाएंगे।

बाकी, बूढ़े को यह डर लग ही गया था कि अब क्या बचना-बचाना है! अब तो बस, चला-चली का खेल है! आशा सिर्फ एक रह गयी थी कि वह जीवित रहते रिटायर हो जाए और इस सुख का आनंद भी ले ले कि रिटायर होने पर लोग कैसे बैंड-बाजों के साथ घर तक छोड़ने आते हैं और एक ही बार में हथेली पर कैसे पी० एफ० के हज़ारों रुपये आ जाते हैं। उस सुख की कल्पना भर से वह उल्लसित हो उठता।

उसके रिटायर होने मे केवल चार महीने रह गए थे।

पहली बार जब उसने बीबी को आकर बताया था कि गजट मे उसके रिटायरमेट के सबध म तिथि आदि छप गयी है, तब उस इस बात से कोई खुशी नहीं हुई थी। उसे चिंता हो गयी थी, पति के रिटायर हो जान के बाद घर की कमाई का जो एक ही रास्ता है, वह बद हो जाएगा, घर म और कोई कमानेवाला तो है नहीं।

तब उस दिन बुढ़िया को अपनी बडी लडकी की बहुत याद आयी थी। वह लडकी नही, लडका थी। मैट्रिक पास करने के तुरत बाद उसने टीचरी कर ली थी और सिलाई-कढाई आदि कर दो ढाई सौ कमा लाती थी। जब उसकी शादी हुई थी तो उसे लगा था, जैसे एक कमाऊ पूत मा-बाप से अलग जाकर रहने लगा है।

आज भी बुढ़िया जब कही किसी के घर मे जवान लडकी को देखती है, तो उसे अपनी बडी लडकी की याद हो आती है, और कभी-कभी तो आखो मे आसू तक आ जाते है।

एक दिन वह बोली, "सुनिए! ऐसा नही हो सकता कि आप सरकार से लिखा पढी करें कि अभी तो मैं काम करने लायक हू, मेरी नौकरी की अवधि एक-दो साल और बढ़ा दी जाए?"

बूढे ने खीजकर कहा 'अरी, नही! सरकारी दफ्तर है, कोई मेरे काका की खेती नहीं। अट्ठावन तो अट्ठावन! उससे एक दिन ज्यादा नौकरी करने नही देंगे।"

बुढिया बोली, 'कमाल है! उम्र का हिसाब क्यो रखते हैं? आदमी की सेहत के हिसाब से नौकरी मे रखें। अब अपने लालाजी को देखो, कितने बूढे दीखते हैं, तो भी लखन की मा बता रही थी, कि अभी तीन-चार साल और नौकर रहेगे।"

बूढा बोला, "उसने तो अपनी उम्र झूठी लिखवायी है।"

'तो आप भी गलत लिखवा लो ना! जब सरकार के सामने झूठ-सच म कोई अतर ही नहीं है, तो आप भी झूठ बोलकर फायदा क्यों नहीं उठाते?"

बूढे को लगा कि औरतें कितनी लालची होती हैं!

अब जब अस्पताल से बूढे को घर ले आये हैं, तो वह बैठा-बैठा व्यर्थ की बातें सोचने लगा है। वह देख रहा है कि उसका एकमात्र बेटा यो ही इधर-उधर के धक्के खा रहा है। बडे सपने सजोये थे उसने अपने बेटे को लेकर कि इसे इतना पढवाऊगा, ऐसी-ऐसी नौकरी की कोशिश करूगा। कोई अच्छी-सी नौकरी नही मिली, तो विदेश ही भिजवा दूगा।

लेकिन बूढे को अब लग रहा है कि सब धरा का धरा रह गया है। बेटा हर क्लास मे एक-दो साल फेल होता रहा है। उसने अपने कई खर्चो मे कटौती कर, उसे होस्टल मे रखवा दिया, लेकिन उसने वहा भी एक लडके का पॉकेट-ट्राजिस्टर चुरा लिया। फादर ने उसे स्कूल से निकाल दिया। तब से वह आवारा छोकरो के साथ घूमता रहता है। सिगरेट और चरस पीता है। रात मे देर देर से घर लौटता है, फिर जब देखता है कि घर के सब लोग सो रहे है, तब कोई न कोई 'ब्लू-बुक' पढने लगता है।

यह सब देखकर बूढे ने आशा छोड दी थी कि लडका उसके जीते-जी उनके किसी काम आ सकता है।

अब ले-देकर उसकी अगर आशा बधी हुई है, तो दूसरी लडकी से, जिसने इस वर्ष बी० एस-सी० कर लिया है।

इससे पहले तो बूढे या बुढिया दोनो मे से किसी ने भी यह नही सोचा था कि छोटी लडकी को कही नौकरी करने के लिए कहा जाए।

लेकिन अब, जबकि बूढे का रिटायरमेट नजदीक आ गया है, बुढिया की समझ मे यह बात आ गयी है, कि छोटी लडकी को नौकरी ही करवायी जाए, ताकि आय की अगर एक राह बद हो जाए, तो दूसरी खुल जाए।

वैसे छोटी लडकी को नौकरी करवाने की बात अचानक ही बुढिया के मन मे नही आयी थी। हुआ ऐसा था, कि पीछेवाली कॉलोनी के काका मगतूराम की रिटायर होने से कुछ दिन पहले ही मृत्यु हो गयी थी। घर मे कोई और कमाने लायक नही था, तो सरकार ने बाप की जगह बेटी को नौकरी मे रख लिया था।

कीर्तन मे गयी थी, तब बुढिया यह बात सुन आयी थी। घर आकर उसने अपने पति से पूछा कि क्या ऐसा नही हो सकता कि आपके रिटायर होते ही, छोटी को आपकी जगह नौकरी मे रख लें? पहले राजा-

महाराजाओ के जमाने म क्या ऐसा नही था ? और फिर अग्रजो के जमाने म भी तो ऐसा ही हुआ करता था।

बूढ ने कहा क्या पता ! मैंने ऐसा कभी पूछा नही है।

तो पूछ दखिए ना ! और तब ही बुढिया ने उसे बता दिया कि किस तरह काका मगतूराम की जगह पर सरकार ने उसकी लडकी को नौकर रख लिया है।

बीवी के कहने म आकर तब उसने सरकार से लिखा पढी शुरू कर दी लकिन जवाब म उसके बड साहब ने केवल इतना भर लिखा कि नौकरी म रहते किसी की मृत्यु हो जाने पर सरकार उसके परिवार म से किसी को अगर योग्य पाय तो नौकरी म रख सकती है। बाकी रिटायर हो जाने के बाद उसके किसी लडके या लडकी को नौकरी मे रखने का फिलहाल कोई प्रवध नही है।

उसे सरकार की यह बात गलत लगी थी कि कोई रिटायर हो जाए या मर जाए क्या फक पडता है ! एक घर की आय तो खत्म हो जाती है !

घर आकर उसने बुढिया को साहब के उत्तर का मसविदा बता दिया कि मेरे जीते जी तो छोटी लडकी को मेरी जगह रख नही सकते—चाहे रिटायर हो जाऊ तो भी।

बुढिया तभी से सोच मे पड गयी थी। उसे लगने लगा जैसे उसके पति के बुढापे के साथ इस घर के भविष्य का भी बुढापा नजदीक आ रहा है।

लडका अगर बुरी साहबत और आवारागर्दी म न फस गया होता तो भी आग आशा की कोई किरण दिखायी दे जाती। लेकिन अब तो

घर के भविष्य की चिंता अब बूढ को भी लग गयी थी।

बड साहब के उस उत्तर के तुरत बाद ही बूढा बीमार पड गया था। हुआ यो कि काका मगतूराम की लडकी को जो नौकरी मिल गयी थी तो बूढे को छोटी लडकी के प्रति कुछ आशा बध गयी थी कि शायद उसके रिटायर होने के बाद उसको उसकी जगह पर नौकरी मे रख लेंगे। लेकिन बड साहब का उत्तर आ जाने के बाद वह रही-सही एक उम्मीद भी जैसे टूट

गयी। तब से, अपनी हर सुस्त घडी मे बूढा अपने परिवार के भविष्य के प्रति सोचता रहता। ऐसा सोचते-सोचते, कभी-कभी उसके सिर म चक्कर भी आ जाता। तभी एक दिन ऑफिस की सीढिया उतर रहा था कि सिर चकरा गया, और बूढा काफी सीढियो से लुढकता हुआ नीचे आ गिरा था। गिरते ही बेहोश हो गया। ऑफिस के लोग उसे उठाकर घर ले गये थे। घर पर भी जब बूढे को होश नही आया, तो उसे अस्पताल ले गये। वहा अस्पताल मे जब होश आया, तो उसने बता दिया कि कैसे उसका सिर चकरा गया था, और कैसे अब उसके घुटनो और कमर मे बहुत दर्द हो रहा है।

बस, तभी से उसे घुटनो मे दर्द और कमर मे पीडा की शिकायत हो गयी थी।

बुढिया अपने पति की देखभाल तो करती, लेकिन उसे लगने लगा था कि न जाने क्यो बूढे की बीमारी या उसके ठीक हो जाने से जैसे उसे कोई मोह ही नही रहा।

एक दिन घर पर बैठे-बैठे ही, न जाने क्या सोचकर बुढिया ने पति से पूछा, ' .एक बार आप बता रहे थे कि आपको एक काला भैसा दिखायी दिया था और उस पर नीग्रो-जैसा एक काला सवार भी दीखा था। कैसा था उसका हुलिया—यानी वह कैसा लग रहा था ? '

बूढा बोला था, ' उसकी लाल-लाल-सी आखें थी। सिर पर एक टोप था। हाथ मे एक मोटा रस्सा था...और . और वह मेरी तरफ घूर-घूरकर देख रहा था। '

"फिर ?" बुढिया बोली।

' फिर फिर उसने मुझे अगुली से इशारा किया।" बूढे का आतक्ति चेहरा जैसे सिकुड सा गया।

'तो ?"

"तो क्या मैं नही गया। मैं बोला, नही आऊगा। '

बुढिया आगे नही बोली। थोडी देर बाद, उसे खुद ही लगा कि उसने बडा ही बेहूदा और बेतूका सवाल पति से पूछा था। लेकिन वह खुद ही उस गुत्थी को नही सुलझा पा रही थी कि उसने ऐसा सवाल क्यो पूछ

लिया था।

अचानक एक दिन बूढ़े की तबीयत फिर बिगड़ गयी। हुआ ऐसा कि बत्ती जलने के बाद उसने कोई ठंडी-सी चीज पी ली थी, जिसके कारण वह ठंड खा गया था और रातभर बुखार मे बहकता रहा। एक बार तो उसने अपनी आखें फेर ली। उसके ऐसा करते ही घरवाले घबरा गये।

जल्दी से कर्नल साहब के यहा से डॉक्टर को फोन पर बुलाया गया। डॉक्टर आया, तो मरीज की हालत देखकर उसका भी चेहरा उतर गया। केस बहुत सीरियस था—डॉक्टर ने ऐसा ही कहा। वह मरीज के पास बैठ गया। कुछेक दवाए और इजेक्शन लिखकर उसने उनकी सूची बुढ़िया के हाथ में थमा दी, कि ये जल्दी से, बिना किसी देर के, मगवायी जाए।

बुढ़िया ने तब इधर-उधर देखा कि उसका लड़का कहा है, जिसे भेजकर वह दवाए मगवा ले। लेकिन छोटी लड़की ने बताया कि वह तो अभी किसी लड़के के साथ बाहर निकल गया है। बुढ़िया को गुस्सा आया कि यह भी कैसी औलाद है! इधर बाप को तो कुछ ऐसा-वैसा हो रहा है और बेटे को आवारागर्दी से फुरसत नही है!

तभी फिर पासवाले कर्नल साहब के लड़के को जल्दी से स्कूटर पर दवाइया लाने के लिए शहर भगाया गया।

दवाइया अभी आयी ही नही थी, कि बूढ़े ने फिर छटपटाना शुरू कर दिया। उसके हाथ-पैर ठडे होने लगे। शरीर ऐंठने लगा। कपकपी-सी उठने लगी। डॉक्टर खुद परेशान हो गया। वह बार-बार दरवाजे की तरफ देखने लगा, कि कब कर्नल का लड़का दवाइया आदि ले आये और कब वह मरीज को इजेक्शन लगाकर उसकी कपकपी शात करवाये।

डॉक्टर ने एक दो बार आशा निराशा के बीच की दृष्टि से बुढ़िया की तरफ देखा।

लेकिन बुढ़िया चुपचाप खड़ी अपने पति की छटपटाहट और कपकपी देख रही थी। उसे कुछ सूझ ही नही रहा था कि वह रोये या ऐसे ही चुपचाप खड़ी, जो कुछ हो रहा है, उसे होता देखती रहे।

तभी दूसरे क्षण, बिजली के हल्के करेंट-सा एक विचार उसके मस्तिष्क को छू गया।

उसे लगा, कही छोटी लडकी की नौकरी का रास्ता तो नही खुल रहा है।

एक हल्की-सी मुसकान बुढिया के होठो पर आयी और फिसल गयी। तभी डॉक्टर को भी शायद यह अजीब-सा लगा, जब उसने देखा कि बुढिया के होठो पर कुछ देर पहले एक मुसकान उभर आयी थी।

कर्नल का लडका अभी तक नही लौटा था, और इधर बूढे की छटपटाहट बडती जा रही थी।

सख्त चेहरेवाला आदमी

पहले तो एक क्षण को वह डर गया।

थका मादा, पसीने मे तर बरामदे मे साइकिल रखकर जैसे ही वह अदर घुसा तो देखा—सफेद दाढीवाला एक बूढा सा आदमी उसके कमरे म आखें मूदे ईजी चेयर पर पडे पडे बीडी पी रहा था।

वह डर गया कि यह कौन आदमी है जो उसके घर मे ऐसी लापरवाही के साथ आकर बैठ गया है और पडा पडा मजे से बीडी फूक रहा है।

हाथ के एक-दो थैले उसने मूढे पर रख दिये। उसके कमरे मे घुसने और थैलो को मूढे पर रखने से थोडी बहुत आहट हुई थी, उससे भी सफेद दाढीवाले उस बूढे की आखें न खुली लेकिन दो उगलियो के बीच पकडी हुई बीडी बराबर धुआ फेंक रही थी।

तब वह आगे बढ गया और बडे गौर से उसने बूढे के चेहरे की तरफ देखा। अब वह उसे पहचान गया—अरे, यह तो उसका बाप है! दाढी बढा ली, या बूढा हो गया, तो क्या हुआ अपने ही बाप को पहचानने म क्या देर लगती है!

बाप अब भी आंखें बद किये पडा रहा, तो उसने पूछ ही लिया 'क्यो आये हो?'

बड आराम से धीरे धीरे बाप ने पलकें उठायी बीडी का एक लबा कश लिया और फिर बहुत ही सयम भरी धीमी आवाज मे कहा, तुमने

कुछ पूछा ?"

बेटे को गुस्सा आया और साथ-ही-साथ वह हैरान भी रह गया कि उसका बाप कितने आराम से आकर उसके घर मे बैठ गया है और जैसे फिल्मो मे खलनायक पूछा करते है, वैसे पूछ रहा है, "तुमने कुछ पूछा ?"

'हा ! पूछ रहा हू, क्यो आये हो ?" बेटा फिर बोला।

वैसी ही धीमी आवाज़ म बाप ने फिर कहा, "तुम शायद गलत सवाल कर बैठे हो ! पूछना शायद तुम्हे यह है कि कब आये हो ?"

'नही मैं यही पूछ रहा हू कि क्यो आये हो ?"

"क्यो.. ? इस घर मे क्या ऐसा कोई भी नही है, जिसे मै अपना कह सकू ?"

'नही ऐसा कोई नही है !" बेटे ने तल्खी से कहा।

बेटे के मुह से ऐसी बात सुनते ही कोई भी बाप चौंक सकता है, लेकिन सफेद दाढीवाला वह बूढा नही चौका। न उसके चेहरे पर कोई हेर-फेर हुआ। उसने तो बस बीडी का एक कश लिया और एक-एक शब्द पर ज़ोर देता हुआ फिर बोला, 'थोडा बैठो। तुम पसीने मे तर हो रहे हो। पसीना सूखते ही तुम ठीक से बात करने लायक हो जाओगे।"

बेटे को तब लगा, जैसे बाप की ऐसी बात से उसके शरीर स और पसीना वह निकला है। लेकिन फिर भी उसने कहा, "नही-नही, इस पसीने-वसीने को बीच मे न लाओ ! बात करने लायक मैं अब भी हू। बोलो !"

बाप वैसे ही ईजी चेयर पर अधलेटा-सा पडा था। बोला "चलो, यही सही ! तो फिर ऐसा करो.. ये तुम्हारे थैले, जो तुमने मूढे पर लाकर रख दिये हैं, चौके मे रख आओ और बहू से भी मिल आओ। तब तक तुम्हारा पसीना भी सूख जायेगा और हम बात भी कर लेंगे।"

एक बार बेटे की इच्छा तो हुई कि वह यहा भी बूढे की बात को काट, लेकिन फिर जैसे यन्त्रचालित-सा वह उठा, मूढे पर से उसने थैल उठाये और चौके की तरफ चला गया।

चौके मे आकर उसने बीवी से पूछा कि बूढा कब आया है और उसने उसे क्यो घर मे बैठने दिया ?

था।"

तब बेटे को यह कहते हुए थोडी-सी भी झिझक नही हुई कि उन लोगो ने तो उसे मरा हुआ ही मान लिया था।

इस बात पर भी बूढा नही चौका। बोला, "हा, सही है। तुम लोगो ने जो मुझे मरा हुआ मान लिया, अच्छा ही किया, वरना मेरे आने की प्रतीक्षा मे तुम लोग कुछ कर नही पाते।"

बेटे ने कहा, "करने को तो अब भी क्या कर पाये है। जिस घर मे कमानवाला बाप हो, वहा बच्चो का अपना कोई भविष्य होता है। अपने सपने यह सोचकर हमने न्योछावर कर लिये कि छोडो, बेबाप की औलाद का तो ऐसा ही भविष्य होता है।"

'मैं सब समझता हू कि तुम क्या कहना चाहते हो, लेकिन अब न तो मेरे बीते दिन वापस आ सकते है और न तुम्हारा ही कोई भविष्य रह गया है।" एक-दो क्षण को चुप रहकर बूढा फिर बोला, 'मालती मर गयी होगी ?"

'हा, मा तो आपके चले जाने के दो-तीन वर्ष बाद ही चल बसी। वैसे मर तो वह उसी दिन गयी थी, जिस दिन काफी कोशिशो के बावजूद हम आपका पता नही लगा पाये थे। लेकिन उसके बाद भी तीन साल उसने यो ही जीकर निकाल लिये। आपके चले जाने के बाद से मा के मरन तक हम लोग मा की मुसकान देखने को तरसते रहे। लेकिन एक लबी प्रतीक्षा के बाद हम मा की मुसकान केवल तब ही देख पाये, जब वह मर रही थी और हम उसके पास बैठे रो रहे थे। केवल तब ही मुसकराकर उसने हम लोगो को ढाढस दिया था कि क्यो रो रहे हो, मै कोई मर थोडे ही रही हू। बस, उसके तुरत बाद मा हम छोड गयी।"

यह कहते-कहते बेटे की आखें भर आयी। लेकिन उसने देखा कि बाप के चेहरे पर इस बात का थोडा भी दुख उभरकर नही आया कि उसकी बीवी मर गयी है। बूढा केवल इतना बोला, "हा, मैंने भी यही अनुमान लगाया कि मालती शायद मर गयी है, वरना मुझे आये हुए दो-तीन घटे हो गये, वह अगर जिंदा होती तो जरूर भागी-भागी मुझसे मिलने आती।"

बेटे को बडा अजीब-सा लगा—कैसी होती है यह बुढापे की उम्र, कि

बीवी की मौत को कितनी आसानी से बूढे ने स्वीकार कर लिया और कैसे बूढे को खुद को भी इस बात का अब डर नही रहा, कि मौत एक भयानक चीज होती है।

बाप को तब अपनी लडकी की याद आयी, 'वसुधा नही है ?"

' मा की मृत्यु के दो-एक वर्षों बाद उसकी मैंने शादी कर दी।" बेटे ने कहा।

बाप ने केवल गरदन हिलायी, जैसे वह सतुष्ट हो, कि चलो, अच्छा किया।

बेटे ने फिर बूढे से पूछा,"क्या करते रह आप आसाम मे ? और वह भी इतने वर्षों तक ?"

"कुछ नही । वहा एक औरत के चक्कर मे फस गया था। कुछ मैं फस गया था, कुछ वह फस गयी थी। और फिर मैं उसके जाल म ऐसा उलझ गया, कि पहले का सब कुछ भूल-सा गया —मालती को भी, तुम लोगो को भी।"

बेटे को इस बात पर बहुत गुस्सा आया कि बूढा कितनी लापरवाही और बेशर्मी से वह सब बता गया, जो एक बाप को अपने बेटे को नही बताना चाहिए।

वैसे पिता को ढूढने की कोशिश तो उन लोगो ने बहुत की थी, लेकिन कही पता नही चला था। तब एक हल्का सदेह उठा था सबके मन मे कि शायद आर्थिक सकट के कारण पैदा हुई परिस्थितियो के दायित्व से मुह मोडकर, पिता कही भाग गया है। और इधर मा थी कि उसके मन मे अपने पति के प्रति बडे अजीब-से सदेह उठ रहे थे कि कही कोई दुर्घटना न हो गयी हो, या किसी दुश्मन ने उनके साथ कुछ ऐसा-वैसा न कर दिया हो।

तब बेटे को याद आया कि उनकी मा की मृत्यु के बाद उनका एक पडोसी आसाम गया था और एक दिन उसने जाकर इन लोगो को बताया था कि उनके बाप जैसा एक आदमी उसे एक शहर म मिला था। उसने उससे बात करने की कोशिश भी की थी, लेकिन उनके बाप जैसा वह आदमी नकार गया था कि उसने गलत आदमी से बात कर ली है। तभी से बेटे को भी हल्का-सा विश्वास हो गया था कि बाप जिदा है और शायद अपनी

ज़िम्मेदारियो से मुह मोडकर दिल्ली जाने के बहाने घर छोडकर चला गया है। अब जब बाप सामने था, तो बेटे ने पूछ ही लिया, "अपने एक पडोसी एक बार आपको आसाम मे मिले थे ?"

उसकी बात को बीच मे ही काटकर बूढा बोला, "हा, मिला था लेकिन मैंने उसे कह दिया था कि तुम गलत आदमी से बात कर बैठे हो!"

एक क्षण को बेटे को अच्छा लगा, कि चलो, जवानी मे बोले हुए किसी झूठ के प्रति बाप अब सच बोल रहा है। बेटे ने पूछा, फिर अचानक ही आज कैसे हम लोगो की याद आ गयी ?"

बाप बोला, "हा, अचानक ही समझ लो। अचानक ही याद आयी। हुआ ऐसा था कि वहा आसाम मे उस औरत के साथ मैंने शादी कर ली थी। बहुत खबसूरत औरत थी। फिर हम दोनो वर्षों साथ रहे। उस औरत के पास बहुत पैसा था। वह मेरे पीछे जैसे पागल हो गयी थी। उसने मुझे ढेर-सा पैसा दिया कि वही, आसाम में ही, कोई धधा पानी कर लू, लेकिन वापस अपनो के पास न जाऊ। मकान-वकान सब उसने मेरे नाम कर दिये थे और मैं भी लालच मे. "

तभी बाप की बात को बीच में ही काटकर बेटे ने कहा, "अपनो से बढकर आपको वे मकान-वकान और वह खूबसूरत औरत अच्छी लगी ?'

बाप को लगा कि बेटे ने व्यग्य मे 'खूबसूरत' शब्द पर अधिक जोर दिया है। वह बोला, 'हा, ऐसा ही कुछ हो गया। मैंने कहा न कि मैं उसके जाल में उलझ गया था।"

बेटे को भी लगा, कि हा, उसका बाप किसी के चक्कर मे फस गया होगा। वैसे भी जवानी मे उसका बाप काफी खूबसूरत लगता था। उसने कहा, "चलो, छोडो, जो हुआ, सो हुआ ' अब आप हमसे क्या लेने आये हैं ?"

उसी शून्य भाव से बूढा बोला, 'लेने नही, देने आया हू। मैं अपनी पूरी जायदाद तुम्हारे या तुम्हारे बच्चो के नाम कर देना चाहता हू। मेरी आसाम वाली बीवी से अगर कोई बच्चा हुआ होता, तो शायद उस जायदाद पर तुम्हारा या तुम्हारे बच्चो का अधिकार न रहा होता और न मैं तुम्हे कहता ही, क्योकि वह सभी कुछ मेरी उस बीवी का ही दिया हुआ है। लेकिन अब

तो वह खुद भी मर गयी। और हम दोनो के कोई बच्चा हुआ ही नही। बच्चा होता भी कैस ! तब भी हम दोना कोई बहुत जवान तो थे नही यो ही बस !" इतना कहकर बाप ने एक बार दिल पर हाथ रख दिया। कुछ क्षणो की चुप्पी के बाद बाप फिर बोला, और फिर जब वहा कोई बच्चा नही था तो मुझे याद आया कि तुम लोग ता अभी हो। वैसे मैंने सोचा यह भी था कि मालती अभी जिंदा होगी। वह नही रही। चलो छोडो, तुम हो तुम भी उसकी निशानी हो।'

'नही ! हम आपकी उस जायदाद वायदाद का मोह नही ! आपके मन मे आये जिसे दे दो।' यह कहत हुए बेटे को लगा कि बाप कितना निर्मोही या कठोर हो गया है कि उसन इतना तक भी नही पूछा कि अब मेरे कितने बच्चे है या बच्चे कहा हैं ? एक नजर मैं उन्ह देख तो लू ? कहने को वह कितनी आसानी से कह गया है कि जायदाद वह उसके या उसके बच्चो के नाम कर देना चाहता है। बेटे को याद आया कि जब पिता घर छोडकर चला गया था तब उसके एक भी बच्चा नही था। बस, उसकी शादी हुई ही थी कि कुछ महीनो बाद बाप फरार हो गया था।

फिर गुस्से ही गुस्से मे बेटे ने बाप को अच्छा बुरा सब कह डाला कि जब उनका अपने घरवालो के प्रति कोई कर्तव्य था तब तो वह इश्क विश्क के चक्कर मे फसे रहे और अब जबकि वे जैसे-तैसे दाल रोटी कमाने या अपने पैरो पर खडे होने लायक हुए है, तो उन्ह याद आयी है कि हम लोग जैसे अभी तक उनके सहारे बैठे है या जैसे हम बाट जोह रहे थ कि कब पिताजी ढेर सारा धन कमाकर हमारे लिए ले आते हैं।

बूढा सब सुनता रहा। उसने देखा उसकी बीडी बुझ गयी है। एक बार पुन बीडी सुलगाकर बाप ने कहा जब तुम इतना कुछ कह गय हो तो एक बात तुम्हे बता दू। अपनी जायदाद वगैरह वैसे मैं शायद तुम लोगो को नही भी देता वे सब चीजें मेरे बुढापे का सहारा थी। और फिर यह भी बता दू कि आज के आदमी को जितना स्वार्थी होना चाहिए उतना मैं भी हू। लेकिन सच तो यह है कि मुझे एक साथ दो बीमारिया लग गयी है एक तो कैंसर है, दूसरे रह रहकर मुझ दिल का दौरा पडता है। कई बार ऐसा हुआ है कि अब गया, तब गया। लेकिन फिर न जाने क्या बात है कि

मैं मर नही पाता। अब तो खैर डॉक्टरो की बातो से भी मुझे भरोसा हो गया है, कि मैं कुछ ही दिनो का मेहमान और हू। मैं नही जानता कि मेरी मौत कैंसर से होगी या दिल के दौरे से, लेकिन होगी जल्दी, यह निश्चित-सा है।"

बेटे को लगा कि बूढा बहुत साफ या सपाट ढग से अपनी बात कह रहा है। उसके चहरे पर ऐसी कोई रेखाए नही थी, जो कि एक साधारण आदमी के चेहरे पर हो, जिसे यह पता चल गया हो कि वह अब कुछ ही दिनो का मेहमान और है।

तभी बेटे ने बाप के चेहरे और शरीर को बारीकी से देखा। हालाकि बाप पहले दाढी नही रखता था, लेकिन फिर भी दाढी मे ढका बाप का चेहरा उसे बहुत कमजोर लगा। बेटे को लगा कि बाप की बाहों और शरीर म सलवटें सी पड गयी थी। उसकी पहलेवाली खूबसूरती भी न जाने कहा उड गयी थी।

वैसे नफरत तो बाप से उसे तभी हो गयी थी, जब बाप के चले जाने के कुछ वर्षों बाद उनके पडोस के आदमी ने आकर इन लोगो को बता दिया था कि आसाम के एक उपनगर मे उसने उनके बाप जैसे एक आदमी को देखा था और उस आदमी ने बूढे से बात भी करनी चाही, लेकिन बूढे ने तब उस आदमी को पहचानने से इनकार कर दिया कि उसने किसी गलत आदमी से बात कर ली है।

नफरत तो बाप से वह उसी दिन से करता आ रहा है कि उसका बाप कैसे अपने दायित्व से पलायन कर गया है, लेकिन अब उसे दया सिर्फ इस बात पर आ रही थी, कि बूढा कितनी आशाए लेकर आया होगा, कि उसकी बीवी उसे वापस आया देख कितनी गद्‌गद होगी और कैसे आकर उसके गले मिलेगी, या खुद बेटा ही कैसे पैर छूकर बाप की इज्जत करेगा। लेकिन न तो उस बूढे की मालती जिंदा है और इधर उसका बेटा पैर छूना तो दूर, उसकी औपचारिक इज्जत भी नही कर पा रहा है।

फिर बेटे ने पूछ लिया, 'कुछ खाया पिया है आपने ?'

'नही।" बाप न एक शब्द म सक्षिप्त उत्तर दिया।

"खाओगे ?'

"हा, खा लूगा। भूख भी लगी है। पहले सोचा कि बहू से माग लू लेकिन फिर लगा कि तुम्हारे खाने का भी शायद वक्त हो गया है साथ बैठकर खा लेंगे।'

'हू' कहकर बेटा चुप हो गया। अनायास ही बेटे को लगा कि न जाने क्यो बाप के प्रति उसके मन म थोडी नर्मी आती जा रही है। बेटे को तब कुछ सूझ ही नही रहा था कि बाप के साथ वह और कैसी या क्या क्या बातें करे। तभी ऐसे ही उसने पूछ लिया यह दाढी वाढी क्यो रखवा ली है आपने ?

पहले जैसी ही गभीर मुद्रा म बूढा बोला अब किसके लिए बनाता ? जवानी म तुम्हारा यह बूढा बाप अच्छा खासा खूबसूरत था। तब रोज शव बनाता था। अब तो बस ' वाक्य को अधूरा छोडकर बाप चुप हो गया।

बेटे को भी और कुछ बोलने को नही सूझा तो वह उठकर दूसरे कमरे म चला गया। बाप ने उसे फिर बुला लिया और एक गिलास पानी लाने को कहा।

बेटा पानी ले आया, तो बाप फिर बोला मुझे आज फिर दिल की तकलीफ हो रही है। कही ऐसा न हो कि मैं यहा मर जाऊ और जायदाद वगैरह की वसीयत होने के पहले ही सब कुछ चौपट हो जाये।

अगर बहुत ज्यादा तकलीफ हो रही हो तो डॉक्टर को बुला लू ?'

नही नही! मेरी जेब म गोलिया हैं। तुम गिलास मुझे दे दो।

बूढे ने अलग अलग आकार की दो-तीन गोलिया पानी के साथ निगल ली। गोलिया निगलते हुए बूढे की गरदन जब उठी तो उसकी दृष्टि दीवार पर लगी अपनी मालती की तसवीर पर उठ गयी। वह कुछ देर तक एकटक तसवीर की तरफ देखता रहा। देखा तो यह सब बेटे ने भी लेकिन वह उसे अनदेखा कर दूसरे कमरे मे चला गया।

उसके बाद चौके म जाकर उसने बीवी को खाना बनाने के लिए कहा। साथ ही यह भी कह दिया कि उसके पिता के लिए परहेज का खाना बनाये क्योकि उसे कैंसर के रोग के साथ साथ दिल के दौरे भी पडते है। हालाकि

बूढ़े ने बेटे से ऐसा कुछ भी नहीं कहा था, लेकिन उसने ही बीवी से कह दिया कि बूढ़े के लिए परहेज का खाना बना दे। और फिर वहीं बेटे ने बीवी को बता दिया कि कैसे उसका बाप आसाम की किसी औरत के चक्कर मे फस गया था और कैसे उस औरत ने अपने मकान-वकान पिता के नाम कर दिये थे। अब वह औरत मर गयी है और बूढ़े को भी डॉक्टरो की बातो से लग रहा है कि वह अब कुछ ही दिनो का मेहमान और है और अत मे कोई रहस्यभरी बात सुनाने के अदाज म उसने कहा कि कैसे उसका बाप अब अपनी पूरी जायदाद उसके या उसके बच्चो के नाम कर देना चाहता है। बीवी सुनती रही, उसने अपनी तरफ से कोई राय नहीं दी। केवल एक हलकी-सी मुसकान उसके होठो पर आयी और फिसल गयी।

बेटा फिर उस कमरे म चला आया, जहा बाप बैठा था। बाप फिर बीडी पी रहा था। बेटे को लगा कि बाप बीडी का कितना आदी हो गया है कि एक के बाद एक बीडी पिये ही जा रहा है। आखिर उसने बाप स कहा, 'कैसर-वैसर मे डॉक्टर लाग बीड़ी क लिए मना नहीं करते? हमने तो सुना है कि तबाकू कैसर के लिए बहुत हानिकारक चीज है। डॉक्टर लोग मना तो करते होगे?''

"हा, करते हैं। लेकिन अब क्या है! जब मरना निश्चित ही है तो मौत दो दिन पहले आये, या दो दिन बाद मे क्या फर्क पडता है।"

बाप के इस उत्तर पर बेटे को गुस्सा तो आया, लेकिन उसने मन ही-मन जैसे कुढते हुए सोचा मरने दो! जब कोई खुद ही अपनी जान की फिक्र न करे तो वह हमारा ही सिरदर्द क्यो हो?

तभी बेटे को एक अजीब-सी बात खटकी कि पूरी बातचीत के दौरान बाप के चेहरे पर कभी एक बार भी मुसकान नहीं आयी थी। वार्तालाप के बीच रह-रहकर वह खासा जरूर था कभी-कभी तो लगातार। फिर बेटे ने मन ही-मन यह भी सोचा कि वह बाप से आगे क्या कहे! उसे अब लगने लगा, जैसे बाप वाली जायदाद आदि की बात की तरफ शायद उसका झुकाव बढता जा रहा है। तभी फिर उसे मा की याद आयी, तो उसे फिर लगा कि नहीं, ऐसे बाप से कैसा समझौता, जो उसकी मा की भावनाओ

की फिक्र किये बिना, घर से मुह मोडकर कही चला गया था। मा बेचारी मरते दम तक पति को देखने के लिए तरसती रही।

बाप की तरफ देखकर थोडे कठोर भाव से बेटा फिर बोला—'दखिए ! खाना हम साथ खा लेते हैं, उसके बाद आप भले ही कही भी चले जाएँ। हमे आपकी जायदाद-वायदाद से कुछ लेना-देना नही है। आप किसी को भी दे दें। वैसे आपका दिया हुआ यह पुश्तैनी मकान ही हम लागो के लिए बहुत है।'

बूढे के चेहरे से लगा कि बेटे की इस बात से उसके लिए कोई फर्क नही पड रहा था। उसने केवल इतना ही कहा—'देखो, सोच लो ! खुद मरे बाद दुनिया मर जाती है। मेरे लिए कुछ फर्क नही पडेगा। कुछ होगा भी तो तुम लोगो के लिए। और एक तरह से मेरा थोडा कर्जा भी चुक जायेगा कि जवानी म जब तुम लोगो के प्रति मैं अपना कर्तव्य नही निभा पाया था, तो उसकी ऐसे ही कुछ पूर्ति हो जाए। रही मालती की बात, सो उससे तो मैं ।' आगे बूढा कुछ बोला नही, लेकिन उसने अपना वाक्य अधूरा छाडकर ऊपर आसमान की तरफ देखा, जैसे कह रहा हो कि मालती से ता मैं ऊपर ही माफी माग लूगा।

इस बीच बेटे को ध्यान आया कि शायद खाना तैयार हो गया होगा। यह पूछने के लिए वह उठकर चौके की तरफ चला गया।

खाना लगभग तैयार हो गया था। बस, थोडी-सी देर और थी। बीवी जब तक खाना परसे, तब तक उसने पानी-वानी भरकर बाप के सामने रख दिया। वह फिर चौके मे बीवी के पास जाकर बैठ गया। खाना परसा जा रहा था। तब उसने फिर बीवी को बूढे के साथ हुई आज की अपनी बातचीत का सार सुना दिया।

कुछ सोचकर बीवी ने बस इतना ही सुझाया कि बाप की बात टालकर वे अच्छा नही कर रहे हैं। उन्हे बाप की बात मान लेनी चाहिए। रूखा व्यवहार नही करना चाहिए। बेटे को भी लगा कि वह शायद कुछ गलत कर बैठा है।

खाना लेकर वह कमरे मे गया, तो बूढा वैसे ही आखें मूदे ईजी चेयर पर

अधलेटा-सा पडा था, जैसे शुरू-शुरू मे घर मे घुसने पर उसने देखा था। एक बीडी उसकी दो उगलियो के बीच जैसे चिपक-सी गयी थी। फर्क केवल इतना था कि अब बूढे के होठो पर एक स्थिर मुसकान थी। बेटे ने देखा कि बाप की दो उगलियो के बीच चिपकी हुई बीडी बुझ गयी थी। जल्दी-जल्दी मे खाना टेबुल पर रखकर वह बीवी को चौके से बुला लाया। बूढा अब भी पत्थर के किसी बुत की तरह आखें मूदे पडा था। कुछ देर वे दोनो घूर-घूरकर बूढे को एकटक देखते रहे। फिर वे दोनो एक-दूसरे को देखने लगे।

असल मे दाढी से ढके बूढे के सख्त चेहरे के हाव-भाव से वे यह तय नही कर पा रहे थे कि बूढा जिंदा है, या मर गया है।

बेटे को तब कुछ देर पहले का सजोया हुआ अपना कोई एक सपना बिखरता हुआ-सा लगा। उसकी इच्छा हुई कि टेबुल पर पडे बाप के लाइटर से वह उसके हाथ वाली बीडी सुलगा दे और बाप के कधो को हिलाकर उसे जगा दे और कहे कि उठो, मैं खाना ले आया हू।

बूढे के सख्त चेहरे पर अब भी मुसकान बिखरी हुई थी। और बेटे की हिम्मत ही नही हो रही थी कि बाप को जगाये, या लाइटर से उसकी बीडी सुलगा दे।

और इधर उसकी बीवी ने तो रोना शुरू कर दिया था।

आग

एकाएक शांति छा गयी, जैसे एक साथ सभी मशीनें रुक गयी हों।

न जाने कौन यह खबर लाया था कि जोगेंदर ने, फोरमैन के बच्चे के पेट में रामपुरी घुसेड़ दिया है। स्पष्ट रूप से कोई भी सही बात नहीं बता पा रहा था। लेकिन सबकी बातों से एक बात तो लगभग तय हो चुकी थी कि फोरमैन का बच्चा अपनी स्कूल-बस से उतरकर, जब बंगले की तरफ भाग रहा था, तो जोगेंदर ने उसको बीच में ही पकड़ लिया और अंधाधुंध चाकू के कितने ही वार उस नन्ही जान पर कर दिये। और जब तक लोग जोगेंदर को पकड़ें, तब तक तो वह सामने वाली दीवार फांदकर, रेलवे कॉलोनी और लाइन-लाइन होता हुआ, कहीं भाग गया था। बच्चे को लोग तुरंत ही अस्पताल ले गये थे। ऐसा कहा जा रहा था कि बच्चे की हालत बड़ी नाजुक है।

बस, इतनी-सी खबर कारखाने तक पहुंच पायी थी।

हरिकिसन को काटो तो खून नहीं। बहुत इच्छा होते हुए भी, उसका साहस नहीं हो पा रहा था कि लोगों से इस अफवाह के संबंध में कोई निश्चित जानकारी हासिल कर सके। इस अफवाह के जो भी या जैसे भी शब्द उड़-उड़कर उसके कानों तक आ रहे थे, वे उसे बहुत तकलीफ पहुंचा रहे थे। और सबसे बड़ी बात, जो उसे नागवार गुजर रही थी, वह थी—लोगों का रह-रहकर कनखियों से उसकी तरफ़ देखना।

तभी गदन झुकाकर उसने फिर हथौडा उठा लिया और अपने काम मे जुट जाने का अभिनय करने लगा।

सन्नाटे को तोडती हुई, उसके हथौडे की आवाज़ न जैसे सभी मजदूरो को सपने से जगा दिया। सबो ने फिर एक बार अपने अपने औजार सभाल लिये।

तभी एक मजदूर ने हरिक्सिन की तरफ देखकर कहा, 'देख लिया न जोगेंदर कहता न था कि ऐसे एक-एक मा के पुत्तर को देख लूगा जिन्होने हडताल मे हमारे साथ गद्दारी की है और कई लोगो स तो गिन-गिनकर बदले लूगा।"

हरिकिसन झेंप गया। लेकिन उससे बढकर झेप उस मजदूर को महसूस हुई, जिसने हरिकिसन को सबोधित कर यह बात कही थी। उस मजदूर को लगा कि वह अपनी बात किसी गलत आदमी से कह बैठा है। हरिकिसन ने तो खुद ही हडताल मे गद्दारी की थी। सबो से आख बचाकर, जब वह छिप छिपकर कारखाने मे घुसने लगा था, तभी एक मजदूरनी ने उसकी तरफ एक चूडी फेंकते हुए कहा था, 'अरे ए, गीदड की औलाद! अदर जा रिया है, तो ये चूडी लेता जा खनकेगी जब हथौडा चलायेगा।"

हरिकिसन की तब हिम्मत नही हुई थी कि आख उठाकर या मुडकर पीछे देख ले, जहा उसकी यूनिट के कितने ही साथी खडे खडे नारे लगा रहे थे। वह तो बस जैसे किसी अधेरी गुफा मे प्रवेश कर गया था और बिना आगे-पीछे देखता हुआ, आगे और आगे घुसता चला गया था। उसे कुछ होश आया तो तब, जब उसने अपने आपको नारे लगानेवाल उन लोगो से दूर, अपनी यूनिट के अदर खडा हुआ पाया। अदर पहुचकर उसन देखा कि उसकी यूनिट मे एक बूढा मजदूर चेल्लाप्पन खडा था बडे साहब खडे थे और उनका फोरमैन खडा था। उसको अदर घुसता देख फोरमैन आगे बढ आया और मुसकराकर उसे कहने लगा, "आ गये, हरिया! आओ आओ!" फिर उसने आगे बढकर बडे साहब से उसका परिचय करवाया, 'यह हरिया है हरिकिसन हरिकिसन बहुत अच्छा वर्कर है, सर!. बहुत काम करता है!"

इस पर बड़े साहब ने आगे बढ़कर हरिकिसन से हाथ मिलाया "गुड ! तुम समझदार आदमी हो देख लेना, हम तुम्हे कितना फायदा दिलवाते हैं हड़ताल मे जो हिस्सा नही लेगा, उसे बहुत कुछ मिलेगा '' हरिकिसन हैरान था कि आज यह अचानक बड़े साहब को क्या हो गया था ? जो बड़े साहब सदा ही मुह फुलाते हुए-से हमारी यूनिट मे से निकलते थे, आज अचानक वे कितने बदल गये हैं कि हसकर बोल रहे है। और सबसे बडी बात यह कि उन्होंने मेरे-जैसे एक छोटे आदमी के साथ हाथ मिलाया। हरिकिसन ने अनायास ही अपनी गर्दन झुका ली।

फिर वह जब अपने औजारो की तरफ बढने लगा, तो फोरमैन ने उसे रोक दिया, "नही-नही-नही, हरिकिसन ! आज कोई काम मत करो . आराम करो बस...आराम करो।" कुछ रुककर फोरमैन ने फिर कहा, ' हरिया ! तुम्हे .तुम्हे .अदर आने मे कोई तकलीफ तो नही हुई ?"

एक बार सूनी सूनी निगाहो से, चुप पड़ी मशीनो की तरफ देखता हुआ हरिकिसन बोला, 'जी जी नही ! बस .बस एक औरत ने चूडी फेंकी थी शायद कि पहन लो .और जोर-जोर से चिल्लाकर कह रही थी कि खनकेगी जब हथौडा चलाओगे।"

झट से फोरमैन बोला, "कहा है वह चूडी ?'

फटी-फटी आखो से हरिकिसन बोला, ' मैंने तो सा'ब ! मुडकर देखा ही नही कि किसी न सच मे चूडी फेंकी भी थी कि नही मैंने तो बस, एक औरत को जोर-जोर से ऐसा चिल्लाते हुए ही सुना था . लेकिन ..लेकिन मेरी तो उधर देखने की "

उसकी बात को बीच मे ही काटकर फोरमैन बोला, "ओफ्फो ! कितने भोल हो, हरिया ! हमे अगर वह चूडी मिल जाती तो उस औरत को नौकरी से अलग करवा देते अच्छा बताओ, तुम उसकी आवाज़ पहचान पाये कि वह किसकी आवाज थी ?"

"जी नही।"

अब जैसे अपने दात पीसता हुआ सा फोरमैन बोला 'ओह, हरिया ! तुम कितने भोले हो !"

पुलिस की गिरफ्त मे होते हुए भी नारे लगा रहा था—

मार सहोगे ? हा भई हा !
जेल चलोगे ?. हा भई हा !
भारत माता की .जय,
महात्मा गाधी की. जय !

फोरमैन ने भी आगे बढकर एक बार बाहर झाककर देख लिया था। जोगेंदर को पुलिस की पकड मे आया देख, सुकून भरी एक मुसकान उसके होठो तक आयी और फिसल गयी। लेकिन हरिकिसन और चेल्लाप्पन की, बाहर झाककर देखने की हिम्मत नही हो रही थी।

हरिकिसन को तब कुछ भी नही सूझा। एक बार बूढे चेल्लाप्पन की तरफ देखकर वह फीका-सा मुसकराया। जवाब मे चेल्लाप्पन के होठो पर भी एक फीकी मुसकान आयी। लेकिन फिर दोनो गभीर हो गये।

इतने बडे हॉल मे, सदा घड़घडाती हुई मशीनें आज शात खडी थी। हरिकिसन ने एक बार सभी मशीनो को गौर से देखा। उनके चुप पडे हुए चमडे के पट्टो को देखा, जो तेल मे भीग भीगकर काले पड गये थे। उसकी इतने वर्षों की नौकरी मे यह पहली बार थी, जब उसने मशीनो को चुप खडे हुए पाया था, वरना साधारणतया तीनो शिफ्टो मे मशीनें रुकती ही नही थी। उसे याद आया कि एक बार बडे साहब ने ट्रेनिंग के दौरान उन सब लोगो को बताया था कि अगर एक घटा भी मशीनें बद रहे, तो उत्पादन की जो हानि होती है, उसकी राशि लगभग एक लाख रुपये होती है।

हरिकिसन ने मन ही मन हिसाब लगाया कि पिछले तीसेक घटो से मशीनें बद पडी हैं। इसका मतलब कि अब तक तीस लाख का घाटा तो हो ही चुका है।

बडे साहब और फोरमैन को दूर खडा देखकर, वह चेल्लाप्पन के और नजदीक चला गया। कुछ-न-कुछ बोलने के लिए हरिकिसन ने उसकी तरफ देखकर कहा, 'तीसेक लाख का घाटा तो अब तक हो चुका है।"

चेल्लाप्पन को काफी देर से बीडी पीने की इच्छा हो रही थी, लेकिन

अपना-सा मुह लेकर एक बार हरिकिसन ने फोरमैन की तरफ देखा। इस बार फोरमैन ने फिर कहना आरभ किया, "ये देखो ! ये जो सामने बिना फीतोवाला काला जूता देख रहे हो ना, यह किसी ने चेल्लाप्पन की तरफ फेंका था। लेकिन चेल्लाप्पन ने बडी होशियारी से यह एक पैर उठा लिया और अदर आ गया। अब बस, जैसे ही हडताल खत्म होगी, वैसे ही हम इस जूते की शनाख्त करवायेगे...और फिर जिसका भी यह जूता होगा, उसे फिर से काम पर नही लिया जायेगा।"

हरिकिसन ने घूर-घूरकर, बिना फीतोवाले उस काले जूते की तरफ देखा। वह पहचान गया कि वह किसका जूता था। तुरत ही उसके मुह से निकल गया, 'यह जूता तो जोगेंदर का है सा'ब ! ...कितने ही अरसे से मैं देख रहा हू कि सोल-पर-सोल लगाता हुआ, जोगेंदर इसी जूते को पहनता आ रहा है।"

मारे खुशी के फोरमैन के मुह से जैसे चीख-सी निकल गयी, "अच्छा यह जोगेंदर का जूता है ! उसी गुडे का, जो बात-बात मे हरेक को आखे दिखाता है. !" फिर फुर्ती में बडे साहब की तरफ मुडकर फोरमैन बोला था, "सर ! यह वही जोगेंदर है, जिसके खिलाफ चार पाच केस अपने यहा पहले से ही चल रहे है। अब मौका है सर, कि इस हडताल के चक्कर म हम उसे फिर वापस काम पर न लें।"

बडे साहब कोई जवाब देनेवाले थे कि अचानक बाहर से जोर-जोर के नारे सुनाई देने लगे—

भारत माता की. जय
महात्मा गाधी की . जय
हमारी मागें. पूरी हों
भारत माता की. जय !

और फिर जैसे भगदड मच गयी हो। अजीब-सा हो हल्ला और शोर-सा सुनाई दिया। बडे साहब ने धीरे से गेट के पासवाली खिडकी खोलकर बाहर झाका। नीचे पुलिस आ गयी थी और हडतालियो पर अब लाठीचार्ज कर रही थी। औरत और मर्द, सभी मजदूर इधर-उधर भाग रह थे। पुलिस ने जिन लोगो को पकड लिया था, उनम जोगेंदर भी शामिल था, जो

पुलिस की गिरफ्त मे होते हुए भी नारे लगा रहा था—

मार सहोगे ? हा भई हा !
जेल चलोगे ? ...हा भई हा !
भारत माता की...जय,
महात्मा गाधी की...जय !

फोरमैन ने भी आगे बढकर एक बार बाहर झाककर देख लिया था। जार्गेदर को पुलिस की पकड में आया देख, सुकून भरी एक मुसकान उसके होंठों तक आयी और फिसल गयी। लेकिन हरिकिसन और चेल्लाप्पन की, वाहर झाककर देखने की हिम्मत नही हो रही थी।

हरिकिसन को तब कुछ भी नही सूझा। एक वार बूढे चेल्लाप्पन की तरफ देखकर वह फीका-सा मुसकराया। जवाब मे चेल्लाप्पन के होंठों पर भी एक फीकी मुसकान आयी। लेकिन फिर दोनो गभीर हो गये।

इतने बडे हॉल मे, सदा घड़घडाती हुई मशीनें आज शात खडी थी। हरिकिसन ने एक बार सभी मशीनो को गौर से देखा। उनके चुप पड़े हुए चमडे के पट्टो को देखा, जो तेल मे भीग-भीगकर काले पड गये थे। उसकी इतने वर्षों की नौकरी मे यह पहली बार थी, जब उसने मशीनो को चुप खडे हुए पाया था, वरना साधारणतया तीनो शिफ्टो मे मशीनें रुकती ही नही थी। उसे याद आया कि एक बार बडे साहब ने ट्रेनिंग के दौरान उन सब लोगो को बताया था कि अगर एक घटा भी मशीनें बद रहें, तो उत्पादन की जो हानि होती है, उसकी राशि लगभग एक लाख रुपये होती है।

हरिकिसन ने मन-ही-मन हिसाब लगाया कि पिछले तीसेक घटो से मशीनें बद पडी हैं। इसका मतलब कि अब तक तीस लाख का घाटा तो हो ही चुका है।

बडे साहब और फोरमैन को दूर खडा देखकर, वह चेल्लाप्पन के और नजदीक चला गया। कुछ-न-कुछ बोलने के लिए हरिकिसन ने उसकी तरफ देखकर कहा, 'तीसेक लाख का घाटा तो अब तक हो चुका है।"

चेल्लाप्पन को काफी देर से बीडी पीने की इच्छा हो रही थी, लेकिन

अपना-सा मुह लेकर एक बार हरिकिसन ने फोरमैन की तरफ देखा। इस बार फोरमैन ने फिर कहना आरभ किया, "ये देखो ! ये जो सामने बिना फीतोवाला काला जूता देख रहे हो ना, यह किसी ने चेल्लाप्पन की तरफ फेंका था। लेकिन चेल्लाप्पन ने बडी होशियारी से यह एक पैर उठा लिया और अदर आ गया। अब बस, जैसे ही हडताल खत्म होगी, वैसे ही हम इस जूते की शनाख्त करवायेंगे...और फिर जिसका भी यह जूता होगा उसे फिर से काम पर नही लिया जायगा।"

हरिकिसन ने घूर-घूरकर, बिना फीतोवाले उस काले जूते की तरफ देखा। वह पहचान गया कि वह किसका जूता था। तुरत ही उसके मुह से निकल गया, 'यह जूता तो जोगेंदर का है सा'व ! ..कितने ही अरसे से मैं देख रहा हू कि सोल-पर-सोल लगाता हुआ, जोगेंदर इसी जूते को पहनता आ रहा है।"

मारे खुशी के फोरमैन के मुह से जैसे चीख-सी निकल गयी, "अच्छा यह जोगेंदर का जूता है ! उसी गुडे का, जो बात-बात मे हरेक को आखें दिखाता है !" फिर फुर्ती में बडे साहब की तरफ मुडकर फोरमैन बोला था, "सर ! यह वही जोगेंदर है, जिसके खिलाफ चार-पाच केस अपने यहा पहले से ही चल रहे है। अब मौका है सर, कि इस हडताल के चक्कर म हम उसे फिर वापस काम पर न ले।"

बडे साहब कोई जवाब देनेवाले थे कि अचानक बाहर से जोर-जोर के नारे सुनाई देने लगे—

भारत माता की जय
महात्मा गाधी की जय
हमारी मागे पूरी हो
भारत माता की जय !

और फिर जैसे भगदड मच गयी हो। अजीब-सा हो हल्ला और शोर-सा सुनाई दिया। बडे साहब ने धीरे से गेट के पासवाली खिडकी खोलकर बाहर झाका। नीचे पुलिस आ गयी थी और हडतालियो पर अब लाठीचार्ज कर रही थी। औरत और मर्द सभी मजदूर इधर उधर भाग रहे थे। पुलिस ने जिन लागो को पकड लिया था उनम जोगेंदर भी शामिल था, जो

पुलिस की गिरफ्त मे होते हुए भी नारे लगा रहा था—

मार सहोगे ?   हा भई हा !
जेल चलोगे ?   हा भई हा !
भारत माता की जय
महात्मा गाधी की जय !

फोरमैन ने भी आगे बढकर एक बार बाहर झाककर देख लिया था। जोगेंदर को पुलिस की पकड मे आया देख, सुकून भरी एक मुसकान उसके होठो तक आयी और फिसल गयी। लकिन हरिकिसन और चेल्लाप्पन की, बाहर याककर देखने की हिम्मत नही हो रही थी।

हरिकिसन को तब कुछ भी नही सूझा। एक बार बूढे चेल्लाप्पन की तरफ देखकर वह फीका-सा मुसकराया। जवाब म चेल्लाप्पन के होठो पर भी एक फीकी मुसकान आयी। लेकिन फिर दोनो गभीर हो गये।

इतने बड हॉल मे सदा घड़घडाती हुई मशीनें आज शात खडी थी। हरिकिसन ने एक बार सभी मशीनो को गौर से देखा। उनके चुप पडे हुए चमड के पटटो को देखा जा तेल मे भीग भीगकर काले पड गये थे। उसकी इतने बर्षों की नौकरी मे यह पहली बार थी जब उसने मशीनो का चुप खड हुए पाया था वरना साधारणतया तीनो शिफ्टो मे मशीनें रुकती ही नही थी। उसे याद आया कि एक बार बडे साहब ने टेनिंग के दौरान उन सब लोगो को बताया था कि अगर एक घटा भी मशीनें बद रहें तो उत्पादन की जो हानि होती है उसकी राशि लगभग एक लाख रुपय होती है।

हरिकिसन ने मन ही मन हिसाब लगाया कि पिछले तीसेक घटो से मशीनें बद पडी हैं। इसका मतलब कि अब तक तीस लाख का घाटा तो हो ही चुका है।

बडे साहब और फोरमैन को दूर खडा देखकर वह चेल्लाप्पन के और नजदीक चला गया। कुछ-न कुछ बोलने के लिए हरिकिसन ने उसकी तरफ देखकर कहा तीसेक लाख का घाटा तो अब तक हो चुका है।

चेल्लाप्पन को काफी दर से बीडी पीने की इच्छा हो रही थी लकिन

बडे साहब और फोरमैन के सामने वह बाडी कैसे पी सकता था ! कारखाने मे काम चलते हुए बीडी पीने की सख्त मनाही थी। हालाकि अभी काम नही चल रहा था, लेकिन फिर भी उसे डर था कि उसको बीडी पीता हुआ देखकर शायद फोरमैन या शायद बडे साहब ही, उसे टोक दें। चेल्लाप्पन अभी इसी बात पर मन-ही-मन सोच रहा था कि हरिकिसन की अचानक कही गयी तीस लाख के घाटे की बात उसकी समझ मे नही आ पायी। उसने जैसे झिडकते हुए हरिकिसन से कहा, "किस बात का घाटा?"

दबी-दबी आवाज मे अपनी बात स्पष्ट करता हुआ हरिकिसन बोला, "कारखाने का...लगभग तीस घटे होने को आये है कि मशीनें बद हैं।"

"होने दो साला घाटा...यहा किसे फिकर है?"

"तो फिर, चाचा! क्यो आ गये अदर? बाहर हडतालियों के साथ ही खडे रहते?" हरिकिसन को शायद चेल्लाप्पन का उत्तर अच्छा नही लगा था, इसलिए अब थोडी कडवी बात उसके मुह से निकल गयी।

"हा-हा, खडा रह जाता। लेकिन आजकल किसी का कोई भरोसा नही है, न जाने कब नौकरी से निकाल दें...बाहर दस टक्के का ब्याज देना पडता है। काम पर न आता तो नागा होती...और अगर नागा होती, तो पगार नही मिलती ..पगार नही मिलती, तो ब्याज पर पैसे लेकर पेट को रोटी खिलानी पडती...और ब्याज देना पडता दस टक्के...कहा से लाता?...बोल, कहा से लाता?"

हरिकिसन को चेल्लाप्पन के तर्क मे स्वार्थ की बू आयी। बोला, "बाहर जो इतने लोग खडे है, वे क्या ब्याज पर पैसे नही लेते हैं?"

चेल्लाप्पन को अब थोडा गुस्सा आ गया था, "तो फिर बच्चू! तुम क्यो आ गये अदर?"

अरे, हा, मैं क्यो आ गया अदर? अब हरिकिसन को लगा कि वह खुद भी तो स्वार्थी ही है। दस टक्के ब्याज से बचने के लिए और ऊपरवालो की निगाहो मे ऊचा उठने के लिए ही तो वह भी अदर घुस आया था। उसे लगा कि उसके उठाये हुए सवाल का जवाब या तर्क, स्वय उसके पास ही नही है। वह लाजवाब बना चेल्लाप्पन को देखने लगा।

तिस पर चेल्लाप्पन फिर बोला, जूता तुमने पहचान लिया बिना सोच समझ शनाख्त कर डाली। क्या मैं नही पहचान रहा था जूते का कि वह जोगेंदर का है। लेकिन मैं चुप रहा और तुमसे रहा नही गया— कि हा मैंने तो सा ब पहचान लिया है जूता जोगदर का है। मालूम है कि अगर जोगेंदर को पता चल गया कि तुमने उसके जूते की शनाख्त की है तो वह क्या करेगा ? चीर डालेगा तेरे को ! रामपुरी पेट म डालकर थोडा घुमा दिया ना तो बाछें टढी हो जायेंगी और वही चित हो जाओग तुम्हे क्या जोगेंदर का पता नही था कि कैसा आदमी है ?

हरिकिसन की तब आख फट गयी थी। मारे डर के उसे लगने लगा कि ये चुप खडी मशीनें जैसे बड जोर-जोर से चलने लगी है और जैसे वह उन मशीनो का शोर बर्दाश्त नही कर पा रहा है। उसके जैसे कान फट रहे है मारे आतक के उसका खून सूख गया था।

हडताल तो मुश्किल से दस दिन चली थी। धीरे धीरे लोग वापस आने लगे थ। लगभग सभी लोगो को वापस काम पर ल लिया गया। जो बाहर रह गये या कह लें कि जिन्हे काम पर नही लिया गया था वे ऐसे लोग थे जिन पर तोड फोड आगजनी या मजदूरो को गलत ढग से उकसाने के आरोप थे। छूटने को जोगदर भी जमानत पर छूटकर आ गया था लकिन फोरमैन ने उसे काम पर वापस लेने स साफ इनकार कर दिया। केवल इसलिए कि उसने लोगो को हडताल पर बने रहने को उकसाया था और काम पर आते हुए बूढ मजदूर चल्लाप्पन पर जूता दे मारा था। जूत की शनाख्त हरिकिसन द्वारा हो चुकी है इसलिए जोगेंदर को काम पर नही लिया जायेगा।

जोगेंदर ने तब भी धीरज नही खोया था। गुस्से को दबाता हुआ वह वापस चला गया था। जाते-जात दबी हुई-सी धीमी आवाज म बस इतना कहता गया था कि ऐसे एक-एक मा के पुत्तर को देख लूगा जिन्होंने हडताल म हमारे साथ गद्दारी की है। लकिन जोगेंदर की इस धमकी के बावजूद कुछ दिनो तक कोई अप्रिय घटना नही घटी थी।

लेकिन करीब बीस-बाईस दिन बाद बढी हुई दाढी और मुरझाया

की मशीनो और मशीनो से चिपटे हुए पट्टो की आवाज आ रही थी। बाकी सब चुप थे। फोरमैन साहब तो सुबह खबर मिलते ही अस्पताल पहुच गये थे।

तब फिर जब कारखाने की दूसरी पारी समाप्त होने मे अभी कोई आधा घटा ही बाकी रहा होगा कि एक चपरासी यह बुरी खबर ले आया, कि फोरमैन साहब का लडका मर गया है। डॉक्टरो ने बहुत कोशिश की, लेकिन घाव बहुत थे और वे भी जग लगे हुए चाकू के थे। इसलिए बच्चे का बहुत अधिक खून बहने के साथ-साथ चाकू के जग का जहर भी उसके शरीर मे चढ गया था।

यह खबर सुनते ही हरिकिसन पीला पड गया। लेकिन उसे लगा कि दूसरे मजदूरो के चेहरो पर फोरमैन के लडके की मौत पर सहानुभूति या दुख जैसा कोई अहसास नही था।

कारखाने की सीटी बजते ही, हरिकिसन सीधा उस स्कूल की तरफ भागा, जहा उसका इकलौता लडका पढता था। वहा पहुचकर वह छुट्टी के घटे की प्रतीक्षा करने लगा। जब स्कूल की छुट्टी होने पर बच्चो का हुजूम बाहर आने लगा, तो उसकी आखें बडी फुर्ती और बारीकी से अपने बच्चे का खोजने लगी। कुछ ही मिनटो बाद, उसे अपना बच्चा खेलता-कूदता, कधे पर बस्ता लटकाये बाहर आता दिखाई दिया। झट से आगे बढकर, उसने अपने बच्चे को गोद मे उठा लिया, 'क्यो, बेटे! कोई आया तो नही यहा?"

'कौन?" बच्चे ने हैरत से पूछा।

" ..मतलब, किसी न तुझसे कोई बात-वात तो नही की? मेरा मतलब है, दाढीवाले एक आदमी न?" हरिकिसन की आखो मे जोगेंदर की आकृति तैरने लगी।

'नही तो।" बच्चे ने उत्तर तो दे दिया, लेकिन वह हैरान था कि उसके बाबा आज उससे क्या और कैसी बात पूछ रहे हैं!

"अच्छा, चलो, आओ! साइकिल पर बैठो। घर चलते हैं।" इतना कहकर उसने एक बार बच्चे को चूम लिया और जल्दी-जल्दी साइकिल

चलाता हुआ घर आ गया।

रात को चूल्हे के नजदीक बैठे-बैठे जब वे लोग खाना खाने लगे, तो अचानक हरिकिसन अपनी बीवी से बोला, 'सुनो! कल से हम अपने मुन्ने को स्कूल नही भेजेंगे।"

'क्यो?" बीवी खाना भी बना रही थी और बातें भी कर रही थी।

'अरे, क्या करना है। हम मजदूर लोग है हमारे बच्चे भी मजदूर ही होगे हम कौन से पढे-लिखे हैं जो इनको पढाना-लिखाना जरूरी हो गया है।"

बीवी को हरिकिसन की यह बात अच्छी नही लगी। बोली, 'तब की बात और थी आज की बात और है। आजकल तो आदमी का पढा-लिखा होना जरूरी है। बच्चा पढा-लिखा होगा, तो कोई अच्छी नौकरी भी लग सकती है।"

"लग गयी!" बीवी की बात पर व्यग्य-सा करता हुआ हरिकिसन बोला, "अरी, आजकल बी० ए०, एम० ए० पास तो सडको की धूल छान रहे हैं तेरा लौडा अफसर बन जायेगा? हू!"

बीवी को फिर भी जैसे कोई विश्वास था, सो बोली, "क्या पता, बन भी जाए। शारदा बहन उस दिन बता रही थी, कि सरकार अपने लोगो के लिए बहुत कुछ कर रही है। हम छोटी जात के लोग है सरकार हमे ऊचा उठाना चाहती है। हो सकता है, अपने बच्चे को पढा-लिखा देखकर, किसी अच्छी जगह नौकर रख लें।"

'रख लिया!" हरिकिसन ने फिर भी वैसे ही व्यग्यात्मक स्वर मे कहा "अरी, तू सरकार की चुपडी बातो पर मत जा और फिर तुझे क्या पता कि आजकल के छोरे पढाई करने जाते हैं या दिनभर नारे लगाते फिरते हैं। तू तो घर मे पडी रहती है तुझे कुछ पता नही है। हम तो शहर मे घूमते रहते है ना, हमने सब दुनिया देख ली है। आजकल के इन लडको के दिमाग म अजीब ही फितूर भर गया है। कहते है—इम्तहान नही होने चाहिए। परीक्षाओ को, आजकल के ये लौंडे, दकियानूसी बात मानते हैं। इनके लिए तो बस फिल्मों मे कसेशन दो। यहा-वहा की नेतागीरी दो।

तुझे क्या पता कि आये दिन, वात-व्रात पर ये छोरे आदोलन छेड देते है। काले भडे लेकर इधर-उधर डोलते फिरते हैं। ऐसे मे फिर पुलिस के साथ उनकी टक्कर हो जाती है। कई लौडे तो इसी चक्कर मे गोलियो के शिकार हो चुके है .और फिर छोर-नो-छोरे, कुछ नेता लोग भी आदोलनो मे घुस आये हैं ।"

"अच्छा! . नेता लोग भी ? तो इसका मतलब कि अपने हलके के केसवलाल भी ऐसा करने लगे है ?" बीवी ने सवाल किया।

"अरी नही वह नही! अपने केसवलाल को पूछे ही कौन है!" हरिक्सिन बोला, "अरी, बडे-बडे नेता लोग हैं, जो ऐसे आदोलनो की अगवानी कर रहे हैं।"

"कौन है वे बडे-बडे नेता ?" बीवी ने फिर सवाल किया।

जैसे पीछा छुडाता हुआ सा हरिकिसन बोला 'अरी, छोड! तू नही समझेगी कुछेक नेता लोग हैं। बडे भले आदमी है। लौडो से कहते हैं—तुम ही कुछ कर सकते हो तुम ही देश का नव-निर्माण करोगे . तुम ही देश को सही रास्ते पर ले जाओगे और इन लौडो को क्या है—आ जाते हैं भभके मे—भिड पडते है सरकार से .और फिर खाते हैं खामखाह गोलिया! हम नही चाहते कि हमारा लौडा भी वडा होकर दूसरे छोरो के साथ नारे लगाता फिरे...नही भेजना अपने को हा, हमारा मुन्ना स्कूल नही जायेगा। बस, तय कर लिया है—नहीं जायेगा।"

बीवी फिर भी आश्चर्य से उसकी तरफ देखने लगी। तब हरिकिसन भी मन-ही मन सोचने लगा—अरी! तुझको कैसे बताऊ कि जोगेंदर ने फोरमैन के लडके को मार डाला है, और पता नही उसके मन मे धधकती हुई बदले की वह आग कब मेरे बच्च की भी जान ले बैठे। इसी डर से तो मैं मुन्ने का स्कूल भिजवाना बद कर रहा हू।

लेकिन दूसरे ही क्षण उसे इस बात की खुशी महसूस होने लगी कि बडे-बडे नेताओ और छात्र-आदोलन को आरोपित करके, या छात्र-आदोलन की आड मे, कितनी सफाई से, उसने अपने मन के आतक को दबा दिया और बीवी के सामने अपने असली डर को जाहिर तक नहीं होने दिया।

घुन

१

यह पहली बार थी जब ऐसा कोइ पत्र उसके पास आया था। डाकिया हरे रग का एक लिफाफा दे गया था जिस पर उसका पता टकित था। पत्र पढते ही वह काप-काप गया।

लिखा था—

'कमीने'

यह सब तुम्हारी झूठी गवाही का परिणाम था कि हमारे आदमी को जल हो गयी थी।

हम तुम्हे ढील दिये हुए थे।

लेकिन याद रखना अगस्त के बाद तुम जिंदा नही रहोगे।

इसे महज कोई खोखली धमकी मत समझना। हम जो कहते हैं कर दिखाते है। अगस्त की किसी तारीख को हमारा आदमी आयेगा। और उसके बाद तुम इस जहान म नही होगे।

बस इतना भर ही लिखा था उस पत्र मे। पत्र टाइप किया हुआ था। नीचे किसी का नाम या कोई हस्ताक्षर कुछ भी नही था।

वह काप-काप गया। काफी देर तक तो वह कुछ सोच ही नही पाया कि ऐसा कौन आदमी था जिसको उसकी झूठी गवाही के कारण जल हो गयी थी और जिसका कोई हिमायती अब उसकी जान लेने पर आमादा है। पत्र की भाषा से भी उसे स्पष्ट लगा कि कोई ऐसा पक्का खिलाडी है

जो सच मे ही कुछ कर दिखायेगा, या जो उसकी जान लेने मे थोडी भी हिचकिचाहट महसूस नही करेगा।

असल मे यह उसका पेशा था।

पैसे लेकर वह किसी भी आदमी के खिलाफ झूठी गवाही दे देता था। अब तक कितनो ही के खिलाफ वह झूठी गवाहिया दे चुका था। और परिणामस्वरूप कितने ही लोगो का जेल हो गयी थी।

यही तो कारण था, कि वह तय नही कर पा रहा था कि ऐसा कौन आदमी होगा, जिसके हिमायती ने उसे ऐसा पत्र लिखा है।

यह पेशा अपनाते हुए पहले-पहल उसे थोडा डर अवश्य लगा था। वह भी इस कारण कि पहली गवाही उसने किसी एक दादा के विरुद्ध दी थी जिसे उसने पहले कभी देखा तक नही था। और न उसने यही देखा था कि पसारी पर उसने कैसे चक्कू चलाया, या कैसे उसकी पीठ मे चक्कू घुस जाने के बाद भी वह दादा उस पसारी को लातें मारता रहा, जिससे उस पसारी की मृत्यु हो गयी थी।

लेकिन उसने वह झूठी गवाही ऐसी सफाई से दी थी, कि सबको लगा था कि हा, इस आदमी ने सच मे ही सब देखा है। गवाही देते हुए, उस वक्त उसने ऐसा मुह बना लिया था, जैसे दादा का वह चक्कू पसारी की पीठ मे न घुसकर उसकी पीठ मे घुस गया हो, और मारे पीडा के उसका बुरा हाल हो। उसके ऐसे सफल अभिनय से ही अदालत मे उपस्थित सभी लोगो को लगा था, कि निश्चित रूप से इस आदमी ने वह सब अपनी आखो से देखा है, जिसकी वह गवाही दे रहा है।

उस दादा को तब चार-पाच साल की जेल हो गयी थी। और तभी कठघरे से निकलते हुए दादा ने उसे ऐसी कातिल निगाहो से देखा था कि वह सिहर उठा था। उसे लगा था यह दादा जब रिहा होकर बाहर आ जायेगा, तब अवश्य ही उसकी ऐसी की तैसी कर देगा। और कुछ करे, न करे, थोडी-बहुत मार-पीट तो जरूर करेगा।

लेकिन उस दादा ने उसके साथ ऐसा कुछ भी नही किया।

वह दादा तो कब का जेल से छूटकर भी आ गया था। और उसके बाद भी कितनी ही बार वह उसे रास्तो पर मिला था। लेकिन उसने उसे

एक शब्द तक नही कहा ।

इस घटना के बाद तो उसकी हिम्मत और बढ गयी थी । वह पैसे लेता और झूठी गवाहिया देता । किसी को जेल हो या फासी उसकी बला से । उसे तो पैसे से मतलब था सा उसे मिल जाता था ।

उन्ही दिनो उसने अपने एक पडोसी से पैसे लकर एक और झूठी गवाही दी थी कि उसन अपनी आखो से देखा है कि कोई एक गैर आदमी उसके पीठ पीछे उसकी बीवी के पास आता है । और वे दरवाजा बद किए घटा अदर बैठे रहते हैं ।

असल म उसके पडोसी के किसी असमिया लडकी के साथ सबध हो गये थे और वह खुद ही अपनी बीवी को छोडना चाहता था । अपनी बीवी पर कोई आरोप उसे लगाना था । इसलिए उसन इस आदमी से झूठी गवाही दने को कहा था । और उसकी झूठी गवाही के आधार पर ही उसके पडोसी को तलाक मिल गया था ।

तब और कुछ तो हुआ नही था—बस, इतना भर ही हुआ कि उसके पडोसी का साला एक बार उसके घर आया था और उसे आखें दिखाता हुआ बोला था— तुमने मेरी बहन की खुशिया छीन ली है । तुम्हारी झूठी गवाही के कारण उम तलाक हो गया है । लेकिन याद रखना, जिंदगी म तुम भी कभी खुश नही रह पाओगे ।'

इतना कहकर उसके पडोसी का साला चला गया था । लेकिन उस लगा था कि उस आदमी ने कोई धमकी न देकर केवल अभिशाप ही दिया था । और बीसवी सदी के इस आधुनिक दौर मे कितने लोग है जो किसी के शाप से डर जाते हो !

और फिर उसके पडोसी का साला उसे इस हद तक खतरनाक नही लगा था, कि वह कभी उस खून की धमकी देगा या उसका खून कर देगा । वैस भी इस पत्र के मसविदे का उसके पडोसी के साले स कोई सरोकार नही लग रहा था । और उधर उस दादा वाली बात को भी एक खासा अरसा बीत चुका था ।

तो फिर यह पत्र किसकी तरफ से आया है वह कुछ तय नही कर

पाया। असल मे उसे खुद भी याद नही है कि अब तक वह कितनी झूठी गवाहिया दे चुका है। या उसकी झूठी गवाहियों से कितने लोग दडित हो चुके हैं।

तो फिर यह पत्र किसका हो सकता है?

उसने अपने-आपको सतुलित करने की बहुत कोशिश की। लेकिन काफी कोशिश के बावजूद, धमकी-भरे उस पत्र के मसविदे को वह भुला नही पा रहा था।

काफी सोच-विचार के बाद उसने एक परिचित पुलिस इन्स्पैक्टर से सलाह ली। उसने उसे वह धमकी-भरा पत्र दिखाया कि शायद वह कोई समाधान ढूढ सके या यह पता लगाने में उसकी कोई मदद कर सके कि वह पत्र किसने लिखा है या लिखा होगा।

लेकिन पत्र पढ लेने के बाद इस्पैक्टर ने तो केवल उसे इतना ही सुझाया कि—हा, खून की धमकी तो है ही, और पत्र लिखनेवाला भी कोई खतरनाक आदमी है, क्योकि उसने लिखा है कि हम जो कहते हैं, कर दिखाते हैं। तो आदमी तो कोई खतरनाक ही है। तुम ऐसा करो, इसकी रिपोर्ट लिखकर उसकी एक-एक कॉपी सिटी मजिस्ट्रेट और एस० पी० को दे दो।

तब उसे लगा कि पुलिस इस्पैक्टर ने तो केवल एक औपचारिक-सा ही उत्तर दिया था।

वास्तव मे झूठी गवाहिया देते देते वह कानून का इतना जानकार तो हो ही गया था कि सिटी मजिस्ट्रेट या एस० पी० को लिखकर दे सकता था। लेकिन उससे क्या होगा? उसने सोचा, मारनेवाला जब कानून के सब हाथो से नही डरता, तो वह मजिस्ट्रेट या एस० पी० की फिक्र क्यो करने लगा!

लेकिन फिर भी उसे लगा था कि हा, रिपोर्ट लिखकर दे ही दे। इसमे बुराई ही क्या है? थोडी और सुरक्षा हो जाएगी। या यह भी हो सकता है कि उसकी रिपोर्ट के आधार पर इटेलीजेंस वाले थोडा यह जानने की कोशिश करें कि कौन ऐसा आदमी है, जिसने ऐसी धमकी लिखी है।

लेकिन तभी उसे एक और विचार आया कि पत्र की भाषा को देखकर एस० पी० वगैरह उससे इतना तो पूछेंगे ही कि भई, तुमने किसके खिलाफ झूठी गवाही दी थी। या तुम्हारा अपना शक किस पर है, कि यह पत्र तुम्हे किसने लिखा होगा।

तब वह किसका नाम लेगा ?

यहा आकर वह एक गहरे असमजस मे पड गया था कि कैसे वह एस० पी० को यह कह पाएगा कि मैं तो कितनी ही झूठी गवाहिया दे चुका हू। न जाने यह कौन आदमी होगा जिसने उसे पत्र लिखा है। न जाने किसका हिमायती होगा। उसकी झूठी गवाहियों के आधार पर तो कितने ही लोगो को जेल हो चुकी हैं। किस-किस को वह याद करे, या किस पर उसका शक हो ? यह सब सोचकर उसने रिपोर्ट नही लिखाई।

एक झूठे गवाह की यह कितनी बडी मजबूरी थी।

लेकिन यह एक डर उसकी नस-नस मे रेंगने लगा कि अगस्त महीने की किसी भी तारीख को कोई ऐसा व्यक्ति आनेवाला है, जो उसके लिए मौत का सदेश लेकर आयेगा।

उसे हर क्षण अपनी मौत दिखाई देने लगी। उसे लगा, जैसे मौत एक जोक बनकर उसके शरीर की नस-नस का खून पी रही है। अगस्त तक वह खून पी चुकेगी, और वह मर जायेगा।

कुछ दिन फिर सामान्य ढग से गुजर गये।

तभी एक दिन फिर उसके पास एक पत्र आया। वैसा ही हरे रग का लिफाफा था। वैसा ही उसका टाइप किया हुआ पता।

कापते हृदय से उसने लिफाफा खोला। टाइप किये हुए केवल कुछ ही शब्द पत्र मे थे—

'कमीने! तुझे याद है ना कि तू बस मुश्किल से अगस्त तक ही जिंदा है!"

वह एक बार फिर काप काप गया।

उसने फिर लिफाफे को उलट-पलटकर देखा। कही कोई ऐसा चिह्न नही था जिससे लगता कि वह उस आदमी को पहचान पा रहा है जिसका

यह दूसरा धमकी भरा पत्र आया है।

उसके बाद अगले ही हफ्ते फिर वैसा ही पत्र आया—

'कमीने ! तुझे याद है ना कि तू बस, मुश्किल से अगस्त तक ही जिंदा है।"

वही वाक्य वैसा ही टकित लिफाफा, वैसा ही लिफाफे का रग सब कुछ वैसा ही।

. और फिर नियमित रूप से हर तीसरे दिन ऐसा एक पत्र आता। पत्र लेते हुए एक बार उसका दिल धडकता हाथ कापता। और वह चुपचाप सिर पर हाथ रखकर कुछ सोचने लग जाता।

अब तो लगभग यह उसे निश्चित-सा लगने लगा था, कि मौत चाहे कछुए की चाल से ही सही धीरे-धीरे उसके नजदीक आ रही है। हर तीसरे दिन हरे रग के एक लिफाफे म वह अपना सदेशा भेजती है। और वह हर क्षण अपने अदर रेंगते हुए किसी घुन को महसूस करता है और हर क्षण मौत की एक यातना भोगता है।

उसने महसूस किया कि पिछले कुछेक दिनो से वह कमजोर होता जा रहा है। वह चुपचाप-सा रहने लगा है। उसकी कोई एक ऐसी मजबूरी है कोई एक ऐसी पीडा है, कोई एक ऐसा दुख है, जो सब मिलाकर उसका अपना खुद का पैदा किया हुआ है, जिसका वह किसी के साथ जिक्र तक नही कर पा रहा है। उसकी यह कितनी बडी ट्रेजैडी थी !

एक दिन तो यहा तक हुआ, कि बैठे-बैठे वह रो दिया, कि क्यो मैंने ऐसा पेशा अपनाया ? क्यो मैंने इतनी झूठी गवाहिया दी ? क्यों मैं दूसरो के जीवन या भविष्य से खेलता रहा ? क्यो ?

उसे लगा कि ऐसे किसी भी 'क्यो' का जवाब उसके खुद के पास नही है।

उसने यह पशा जानकर नही अपनाया था। वह पढा लिखा था। कितने ही वर्षों तक उसने यह कोशिश की कि उसे कोई नौकरी मिल जाए। नौकरी ही नौकरी के चक्कर म वह अपने घरवालो से बहुत दूर इस प्रान्त मे चला आया था। वहा उसने अपने प्रात म उसे लगा था कि कोई

विशेष स्कोप नही है। उसने देखा था, कि वहा की लडकिया तक, अपना प्रात छोडकर, अन्य प्रातो म जाकर नौकरिया करने लगी हैं। कुछ तो विदेशो मे बिक गयी थी बिक रही थी।

तब उसे लगा था कि युग नही बदला है, केवल नारे बदले है। आदमी आज भी पहले के गुलामो की तरह बिक रहा है। तभी वह भी बार-बार बिकने लगा। पैसे लेकर झूठी गवाहिया देता, पैसे लेकर अपने ईमान को, अपने-आपको बेचता। उसे लगा था, जहा आदमी बिकता हो, वहा कोई भी चीज बिक सकती है। ईमान, शराफत वहा महज थोथे नारे बनकर रह जाते है।

उधर धमकी भरे उन पत्रो का आना जारी रहा। हर तीसरे दिन का एक रुटीन। हरे रग का वही एक लिफाफा। वही एक टकित पत्र। वही घिसा-पिटा-सा मसविदा।

अब तो उसने लिफाफा खोलना तक बद कर दिया। डाकिया लिफाफा उसे देता, तो एक क्षण को उसके हाथ काप काप जाते, फिर वह डाकिये के सामने अपने-आपको सतुलित करता हुआ कमरे मे चला जाता। और लिफाफे को खोले बिना, वह उसी क्रम के अन्य लिफाफो के साथ, उस लिफाफे को भी रख देता, और मौत के किन्ही काल्पनिक क्षणो मे अपने-आपको मरता हुआ महसूस करता।

एक ही बार मरना एक अलग या सहज बात होती है। किसे क्या मालूम, कितना मुश्किल होता है यह क्षण क्षण का, पल-पल का मरना—यह हर पल की मौत—उसने सोचा।

तभी फिर अपने मन से उस डर को निकालने की कोशिश मे, थोडा साहस रखकर वह सोचने लगा, कि यह उसकी कायरता है। क्योकर वह आदमी मुझे इस तरह डरा-धमका रहा है? वह आदमी मेरे सामने आ जाए। दो-दो हाथ कर ले। वह मर जाए, या मैं मर जाऊ। कुछ बहादुरी की मौत तो मरें। यह कैसी अजीब और धीमी मौत है, या मौत की यह कैसी अजीब कल्पना है कि मर नही रहे हैं, और मर भी रहे हैं। आदमी जैसी महान् हस्ती के भीतर कोई एक मौतनुमा बौना घुन है, जो रेंग रहा

है और एक अनजाना भयानक अहसास करवा रहा है।

हरे रग के उन लिफाफो ने उसे इतना आतकित कर दिया था कि हरे रग की हरेक चीज अब उसे मौत का प्रतीक-सी लगती—यहा तक कि वह पड-पौधो तक से कतराने लगता।

तभी एक बार तो उसके मन मे आया कि वह उन सभी लिफाफो सभी पत्रो का फाडकर फेंक दे। लेकिन फिर उसने सोचा कि उससे भी क्या फर्क पडता है! हर तीसरे दिन ऐसा हरा लिफाफा आयेगा ही—और उसमे वही मजमून लिखा होगा।

तब उसे फिर से लगता कि उसके अदर के घुन ने अपना रेंगना तेज कर दिया है, और वह मौत के और करीब जा रहा है या मौत उसके और नजदीक आ रही है।

कितने ही सोच विचार के बाद, तब फिर उसने लिफाफो को बडी सावधानी से, सहेजकर रखना शुरू कर दिया। लिफाफो पर पोस्ट-ऑफिस की मोहर की तारीख देख-देखकर उसने पत्रो को क्रम से रख दिया। ऐसे जैसे कि मौत से उसने समझौता कर लिया हो, या उसे स्वीकार कर लिया हो।

तभी अचानक एक दिन, जब उसने आईने को घूर घूरकर देखा तो उसे लगा कि उसका शरीर पहले से काफी कमजोर पड गया था। उसकी आखो म कुछ गडढे-से पड गये थे। गाल पिचक गये थे। शरीर से नसें अपना क्षीण अस्तित्व दर्शाने लगी थी। उसे अपनी चाल ढीली लगने लगी थी। उसे लगा था, जैसे वह मोम की तरह धीरे धीरे पिघलने लगा है। तभी उसे लगता आदमी मोम होता है। जैसे आग मोम को पिघला देती है, वैसे ही आतक—मौत का आतक—आदमी को पिघला देता है।

नही!

उसने तय कर लिया कि ऐसी मौत उसे स्वीकार नही है। अगर मरना ही है, तो फिर ऐसे नही। मौत को आना ही है तो खुद आए। आदमी के हाथो आदमी की मौत उसे स्वीकार नही थी। मरना तो लगभग निश्चित था ही, लेकिन ऐसी मौत—हर पल, हर क्षण की मौत—वह नही

मरेगा। उसने सोच लिया कि नहीं-नहीं, इस घुन को वह अब और अपने शरीर में रेंगने नहीं देगा। वह एक झटके में उस घुन का खात्मा कर देगा, जो धीरे-धीरे उसके शरीर में रेंगता हुआ, उसे खत्म करने पर तुला हुआ है।

उसने फैसला कर लिया, कि वह आत्महत्या कर लेगा। जिस तरह जीने का रास्ता उसने अपनी इच्छा से चुन लिया था, उसी तरह मौत भी वह अपनी ही तरह की पसंद करेगा। किसी की धमकी की मौत वह नहीं मरेगा।

सभी लिफाफे उसने एक धागे में बांध दिये और उन पर एक कागज चिपका दिया—जिस पर उसने सहजकर एक-एक शब्द इस तरह लिखा था—

'ऐ धमकी-भरे इतने सारे पत्र लिखने वाले! मैं तुम्हें हराकर जा रहा हूं। तुम्हारी योजना में मैं तुम्हें सफल होने नहीं दूंगा। तुम्हारे ही अर्थों में यह सही है कि अगस्त के बाद मैं जिंदा नहीं रहूंगा। लेकिन सुन लो, उस अगस्त को मैं अपने लिए आने ही नहीं दूंगा।

सही-झूठा गवाह।'

पत्र लिखकर, उसने पूरे ध्यान से उसका एक-एक शब्द पढ़ा। उसे अपना पत्र बड़ा अच्छा लगा, जैसे ईंट का जवाब उसने पत्थर से दिया था।

घर से निकलकर वह एक पुलिया पर आकर रुक गया। उसने घड़ी देखी। उसके बाद पुलिया के नीचे झांककर देखा। लोहे की समानांतर पटरियों को देखा। उसे पता था कि थोड़ी देर बाद वहां से एक ट्रेन गुजरेगी।

ट्रेन गुजरने को होगी, कि वह एक झटके के साथ अपने आपको उन लोहे की समानांतर पटरियों पर फेंक देगा। उस एक छलांग के बाद जो कुछ होना था, वह उसे भली भांति मालूम था।

मौत को शायद अब उसने सही अर्थों में समझ लिया था।

कभी-कभी

लगभग आठ साल बाद आज वे सहसा मिल गये। कुछ देर तक दोनो आश्चर्य से एक-दूसरे को देखते रहे और फिर आगे बढकर एक रेस्तरा मे चले गये। लडकी के साथ सात-आठ साल का एक बच्चा भी था।

अदर जाकर तीनो एक मेज के समीप बैठ गये। सामने एक ऐंग्लो-इडियन दपति बैठे थे। रह-रहकर वे दोनो अजीब ढग से ठहाके लगा रहे थे। लडके की तरफ देखकर लडकी ने कहा, "देखो, लगता है जैसे ये लोग ठहाके भी अग्रेजी मे लगा रहे हो!" लडका कोई उत्तर न देकर किंचित मुसकरा दिया।

लडकी ने इस बात की कोई परवाह न की। उसे पता था लडके मे 'सैंस ऑफ ह्यूमर' था ही नही। शुरू से ही उसका स्वभाव कुछ ऐसा ही रहा है।

यही सोचकर लडकी ने अब उसके साथ औपचारिक बातें करना ही ठीक समझा। 'मीनू' के पृष्ठ बदलती हुई वह बोली, "कब आये?"

"दो-चार दिन हुए है।"

"कैसे आना हुआ?"

"ऐसे ही। वहा मद्रास मे 'रुटीन-लाइफ' से कुछ ऊबने लगा था। सोचा—चलो, थोडा बदलाव ही सही।" इतना कहकर उसने अपने कोट की जेब से सिगरेट का पैकेट निकाला। एक सिगरेट सुलगाकर

पकेट और माचिस वही मेज पर रख दिये।

लडकी ने इस पर थोडा मुसकराकर कहा, "मैंने सोचा था कि गत वर्षों मे तुम बदले होगे। लेकिन तुम तो..."

"मतलब नही समझा ?" आश्चर्य से उसने लडकी की ओर देखा।

"बतौर औपचारिकता या महज शिष्टाचार के नाते सिगरेट पेश तो की होती!" इतना कहकर उसने स्वय सिगरेट उठायी और सुलगा ली।

लडका अचरज से देखता रहा। उसने कुछ कहना चाहा। लेकिन तभी ऑर्डर लेने के लिए बैरा वहा आ धमका। लडकी की तरफ देखते हुए उसने पूछा, "कुछ खाओगी ?"

"नही। लेकिन ऑर्डर तुम न दो...यहा आये हो—मेहमान हो। इसलिए ऑर्डर मैं ही दूगी। इसे तुम फॉर्मेलिटी न समझना। ऐसे ही, बस!" और फिर बैरा की तरफ देखकर लडकी ने कहा, 'दो प्लेन कॉफी। हा, एक पेस्ट्री भी..."

बैरा चला गया। लडकी ने फिर कहा, "बब्बू को यहा की पेस्ट्री ही पसद है।"

बब्बू की ओर एक उडती निगाह से देखकर लडके ने पूछा, "किसका लडका है यह ?"

"नही पहचाना ?" उदास स्वर मे लडकी बोली।

"नही!" लडके ने बब्बू की ओर घूरकर देखा।

"और अच्छी तरह देख लो...तुम्हारा ही तो है।" लडकी ने सहज-भाव से कहा।

लडके ने अब जल्दी-जल्दी सिगरेट के कश भरने शुरू किये। और फिर, *शायद बात का रुख बदलने के लिए, लडकी से पूछा,* "तुमने सिगरेट कब से पीनी शुरू कर दी ?"

"मम्मी की मृत्यु के बाद..." लडकी ने फिर सिगरेट से एक कश भरा।

"अच्छा...तो तुम्हारी मम्मी..."

उसकी बात बीच मे ही काटकर लडकी बोली, "हा...चल बसी..."

"इसका मतलब, अब तुम दो ही रह गये—तुम और तुम्हारे डैडी।"

'और तीसरा—बब्बू।"

लडके ने फिर बात का रुख बदलने के लिए कहा 'तुम्हारी पढाई कहा तक हुई ?"

वही तक तब मैंने तुम्हे शादी के लिए कहा था लेकिन तुमने यह कहकर टाल दिया था कि मैं एक बदनाम लडकी हू अत मुझसे विवाह कर लेने के बाद तुम सोसायटी मे मूव' करने योग्य नही रहोगे और मैंने तो तुम्हे तब बताया भी था कि अपने होने वाले बच्चे को किसी गदे नाले मे फेंकने की अपेक्षा जन्म देकर समाज के सामने उसे अपना बच्चा' कहकर स्वीकारूगी। सो मैंने किया तुम्हे शायद याद होगा—कॉलेज से तब मैं निकाली गयी थी।'

हमदर्दी सी जताता हुआ लडका बोला 'सच तो यह है कि मुझे इन सब बातो का पता नही है तुम जानती ही हो तब मुझे किस तरह जल्दी म मद्रास जाना पडा था "

हा-हा, मुझे सब पता है। तुम व्यथ ही इतने गिल्टी क्यो हो रहे हो ? जो कुछ हुआ, उस सबका दोष तुम्हे ही नही देती। गलती मेरी भी तो थी, जो तब खैर, छोडो भी।"

बात बदलते हुए तब लडके न कोट की जेब स एक पैकेट निकालकर लडकी से कहा, 'लो, इसमे से च्युइग-गम निकाल लो। जब तक बैरा कॉफी लायेगा, तब तक "

लडकी ने फिर लडके की बात काटते हुए कहा यह च्युइग-गम की आदत कब से लगी है ?"

'जब से मद्रास गया हू। पता नही क्यो उसे चबाते ही मुझे उन दिनो की याद हो आती है जो बीत गये और अब कभी भी नही आयेंगे ?'

इस बात का लडकी ने कोई उत्तर न दिया। केवल थोडा-सा मुसकराकर पैकेट से च्युइग-गम निकाले। एक बब्बू को देकर दूसरा खुद चबाने लगी।

इस बीच बैरा कॉफी और पेस्ट्री रख गया।

प्याले मे चीनी मिलाता हुआ लडका बोला हा तो अपनी बात

अधूरी रह गयी. यह तो बताओ, मेरे मद्रास चले जाने के बाद क्या हुआ ?"

'होना क्या था ? कॉलिज से निकाल दिये जाने के बाद 'पेरेंट्स' के यहा चली आयी।" सिगरेट ऐश-ट्रे' मे फेंकती हुई फिर बोली, ' वे पहले ता बहुत नाराज हुए, लेकिन फिर धीरे-धीरे सब ठीक हो गया ."

तो तुमने अभी तक शादी नही की ?"

"नही ।" कुछ रुककर वह फिर बोली, अगर शादी करना चाहू तो भी किसी लडके को मनाना आसान नही है। और दूसरी बात—किसी से शादी कर भी लू, तो इस बब्बू का क्या होगा ? मम्मी नही रही। अकेले बचारे डैडी भी कहा तक इसे सभाल पायेंगे ?. वैसे बाइ-द-वे एक जगह बात चली थी। लडका मान भी गया था, लेकिन वह बेबी को साथ रखने को तैयार न था।"

लडके ने कॉफी का प्याला लडकी की ओर बढाकर कहा, ' लो ।"

प्याला हाथ मे लेती हुई लडकी बोली, ' एक बात पूछू ?"

सहज-भाव से लडका बोला, ' हा-हा, पूछो ।"

किंतु लडकी पता नही क्या सोचकर चुप रही। चुपचाप कॉफी पीती रही।

कॉफी पी लने के बाद लडके ने रूमाल से अपना मुह पोछा और फिर दो अगुलियो से अपनी मूछ को सवारा। इस पर लडकी ने पूछा, 'तुमने मूछ कब से रखनी शुरू कर दी ?"

एक हलका-सा ठहाका मारकर लडका बोला, ' अरे, छोडा । यह तो ऐसे ही थोडा शौक लगा था. मेरा एक दोस्त मिलिट्री मे है। उसकी बडी मूछे देखकर मैंने सोचा कि अगर मैं भी रख लू तो पर्सनेलिटी शायद और अच्छी लगे ।" लडके ने फिर सिगरेट सुलगायी और लडकी की तरफ देखकर बोला, "क्यो, अच्छी नही लग रही है क्या ?"

' चलो, छोडो भी ।" लडकी बोली, "तुमसे एक सलाह लेनी थी। तुम्हारी क्या इच्छा है—आगे चलकर बब्बू को किस साइड म शिक्षा दिलवायी जाए ?"

' जिधर तुम ठीक समझो. .।"

व्यग्य से एक हलका ठहाका मारकर लडकी बोली, 'क्या तुम्हारा इस बच्चे के प्रति कोई दायित्व नही !"

तब असमजस से कुछ झुझलाता हुआ वह बोला "बार-बार एक ही बात दोहराकर तुम क्या कहना चाहती हो ? बेबी के भविष्य के बारे मे तुम्हे पूरी आजादी है। जो ठीक समझो, करो !"

कुछ देर तक दोनो मौन बैठे रहे। फिर कुछ सोचकर सिगरेट बब्बू की तरफ बढाकर लडकी ने उसे सिगरेट मे से एक कश भरने को कहा। बब्बू ने एक बार आश्चर्य से अपनी मा की ओर देखा और फिर एक कश खीच लिया। फिर वह देर तक लगातार खासता रहा।

उसकी ओर सहानुभूति से देखता हुआ वह झुझलाया, यह क्या कर रही हो ? इतने-से बच्चे को भी कही सिगरेट पिलायी जाती है ?"

'क्यो, इसमे क्या हो गया ?" शोखी से उसने देखा।

लडके ने शायद दबे गुस्से को ताड लिया, इसलिए थोडी नर्मी से कहा, "हुआ तो खैर कुछ नही लेकिन यह अच्छा नही है।"

लडकी ने फिर भी उसी लहजे मे कहा, "अच्छे-बुरे की अगर पहचान होती, तो शायद यह सब न देखना पडता। खैर, डैम ऑल दिस !...मैं जीना चाहती हू। मुझे हर हालत मे जीना है—यही मेरे लिए पर्याप्त है।"

लडका अब ऊबने-सा लगा था, शायद इसीलिए बात बदलता हुआ बोला, 'एक बात है, तुम्हारी गरदन का गड्ढा अब भी उतना ही मोहक है !" इस बात के उत्तर मे लडकी मौन रही। वह स्थिर निगाहो से लडके की तरफ देखती रही।

'तुम्हे क्या अब भी मूगफली खाने का शौक है ?" इस बार भी लडके ने ही फिर प्रश्न किया।

'मैंने कहा न...उन दिनो अच्छे-बुरे की पहचान न थी...अब मूगफली से मुझे नफरत हो गयी है। उसका ध्यान आते ही मेरे सामने.. मेरे मस्तिष्क मे...वे ठडी शामे आ घिरती हैं, जब मूगफली चबाती हुई श्मशानवाली उस पुलिया पर मैं अपना अस्तित्व भूल-सी जाती थी. .ओह, प्लीज ! मुझे विवश न करो...पिछले सात-आठ वर्षों मे मैं इन सब बातो

को भूलने की ही कोशिश करती रही हू. .प्लीज़ ! मुझे वे सब बातें भूल जाने दो।"

एक ठडी आह भरकर वह फिर बोली, 'अब तो बस मैं हू और मेरा बब्बू है, उससे अधिक ससार मे मेरे लिए और कुछ नही है...कुछ भी नही।"

लडके को लगा कि वह अब भावुक हो गयी है, इसलिए बात बदलता हुआ बोला, '.. हा, तुम्हारी आखो मे भी कोई विशेष अतर नहीं आया है।"

लडकी का उत्तर सुनने के लिए उसने जैसे ही उसकी आखो मे देखा तो लगा कि उसकी पलको मे आसू भर आये हैं। कही वह और ज्यादा भावुक न हो जाए, इसलिए लडके ने बैरा को बिल लाने का इशारा किया।

बाहर निकलकर तीनो थोडी देर फुटपाथ पर टहलते रहे। लडकी अब बिलकुल सामान्य व्यवहार करने लगी थी। थोडा आगे चलकर उसने लडके से पूछा, "तुम्हारी शादी हो गयी ?"

"नहीं, अभी नहीं हुई।"

एक हलकी हसी हसकर दबे स्वर मे बोली, "हा, तुम्हे जरूरत भी क्या है।" लडका चाहकर भी कुछ बोल न पाया।

"अभी और कितने दिन यहा रहोगे ?"

"क्यो, यह क्यो पूछ रही हो ?"

'ऐसे ही।"

"रहूगा...यहो करीब एक महीना।"

"अच्छा!" लडकी ने यह शब्द ऐसे कहा जैसे लडके की बात मे उसका कोई सरोकार न हो, लेकिन यो ही समय गुजारने के लिए यह प्रश्न पूछ बैठी थी।

कुछ देर तक वे चुपचाप टहलते रहे। लडके ने फिर बोलना शुरू किया, "जब तक यहा हू, कभी मिलना। शाम का क्या कार्यक्रम रहता है ?"

'कुछ भी नहीं।" लडकी ने उदास स्वर मे कहा, "तुम्हारे जाने के

वाद सब अजीब-अजीब-सा लगता रहा। तुम्हारी 'अच्छाइया' देखने के वाद, अब किसी की अच्छाई देखने को मन ही नहीं करता !

इस व्यग्य को लडका भाप गया इसलिए चुप रहा।

थोडी देर वाद अपनी घडी की तरफ देखकर लडकी बोली अब चलना चाहिए काफी देर हो गयी है।' इतना कहकर लडकी ने इशारे मे एक स्कूटर रोका और विदा लेने को अभिवादन किया।

'इसे प्यार नही करोगे ?' उसने बब्बू की ओर देखकर कहा।

आश्चर्य से एक बार लडके ने देखा और फिर बब्बू की तरफ देखकर कुछ देर तक निरुत्तर खडा रहा।

तब उदास स्वर मे लडकी बोली चलो, जाने दो ! तुम अभी तक सोच ही रहे हो और मैं अपने बेबी को किसी के स्नेह का मोहताज रखना नही चाहती। मैं तो सिर्फ देखना चाहती थी कि अच्छा !' और वह बब्बू के साथ स्कूटर मे बैठ गयी। उसकी आखो मे आसू आ गए। कुछ देर बाद उसने आसू पोछकर बब्बू से कहा, बब्बू ! बिटटू तुम मेरे डैडी को यह न बताना कि आज मैंने तुम्हे सिगरेट पीने को कहा " फिर स्वय ही बुदबुदायी उस समय न जाने क्या सोचकर मैंने तुम्हे ऐसा करने को कहा। कभी-कभी न जाने यह मुझे क्या हो जाता है न जाने क्या !"

मुक्ति

माला अचानक आ गयी थी। रवि को यह बड़ा अजीब-अजीब लग रहा था। काफी लम्बे अर्से के बाद आयी थी वह। इससे पहले वर्तिका से मिलने वह एक-दो बार हॉस्टिल में आयी थी। तब ही रवि का उससे परिचय हुआ था, और आज बिना कोई सूचना दिये वह आ गयी थी।

रवि ने बहुत कोशिश की कि चेहरे पर उसके कोई ऐसा आसार न दिखायी दे, जिससे कि माला को लगे कि उसके आने से रवि सहम गया है, या डर गया है। माला मुंह से एक शब्द भी नहीं बोल रही थी। वह केवल मोढ़े पर बैठे-बैठे ही सामने लगे एक अर्ध-नग्न चित्र को देखने लगी थी।

उसकी यह चुप्पी रवि को और भी खलने लगी। तब विवश होकर रवि ही बोला, "कैसे आना हुआ है, माला ?"

साधारण स्वर में बोली, "तुमसे मिलने आयी हूं।"

"मुझसे ?"

"हां।"

"सामान-वामान कुछ नहीं लायी हो ?"

"नहीं, आज ही वापस जाना है मुझे...इसलिए।" कहकर माला ने एक खुला हुआ लिफाफा रवि के हाथ में दे दिया।

लिफाफा हाथ में लेता हुआ रवि बोला, "क्या है इसमें ?"

"लिफाफा खुला है खुद ही देख लो।" कहकर माला मोढ़े पर से उठकर, पलग पर लेट सी गयी।

रवि ने फिर पूछा 'मेरा मतलब है किसने भेजा है यह ?'

'दीदी ने तुम्हारी वर्तिका ने।' उसी लापरवाही से माला ने कहा। कापते हुए हाथो से रवि ने लिफाफा खोला। उसम एक फोटो थी—वर्तिका की। एक और चिट्ठी भी। उसने चिट्ठी पढी

"रवि!

'कई-कई चिट्ठिया लिखी है मैंने उत्तर न मिला।

माला के हाथो अपनी लटेस्ट फोटो और यह चिट्ठी भेज रही हू। कुछ बातें समझाने की नही होतीं। बोलो, तैयार हो ?

तुम्हारी—
वर्तिका!"

उसने चिट्ठी का अर्थ भाप लिया, लेकिन फिर भी ऐसा अभिनय किया, जैसे वह इन दो टूक शब्दो का मतलब नही समझ पा रहा था।

फिर उसने वर्तिका की लेटेस्ट फोटो दखी। वडी भोंडी लग रही थी वर्तिका उसम। तब उसने माला से कहा 'कैसी अजीव फोटो भेजी है ?'

'ऐसे दिनों मे ता ऐसा ही लगता है। माला की वही लापरवाही!

रवि को यह अच्छा नही लग रहा था। उसने कहा माला! तुम ढग से बात करो! मैं क्या पूछ रहा हू ?"

तब जैसे हल्के गुस्से से माला बोली 'तो फिर सुन लो, रवि! दीदी को आठवा चल रहा है!"

तो ?'

'तो क्या भोले क्यो बनते हो ? बोलो, करोग दीदी से शादी ?'

'हू ?" वह असमजस म माला की तरफ देखन लगा।

तब सयत स्वर म माला फिर बोली, देखो रवि! गलती हो जाने के बाद पछताना क्या है। जब ऐसे भावनात्मक स्तर पर तुम्हारे सबध पहुच रहे थे तब बहाव म तो न बहते तुम। तिस पर दीदी ने इतनी चिट्ठिया लिखी है तुम्हे और तुम हो कि चुप्पी साधे बैठे हो किसी एक का

मुक्ति

माला अचानक आ गयी थी। रवि को यह बडा अजीब-अजीब लग रहा था। काफी लम्बे अर्से के बाद आयी थी वह। इससे पहले वर्तिका से मिलने वह एक-दो बार हॉस्टिल मे आयी थी। तब ही रवि का उससे परिचय हुआ था, और आज बिना कोई सूचना दिये वह आ गयी थी।

रवि ने बहुत कोशिश की कि चेहरे पर उसके कोई ऐसा आसार न दिखायी दे, जिससे कि माला को लगे कि उसके आने से रवि सहम गया है, या डर गया है। माला मुह से एक शब्द भी नहीं बोल रही थी। वह केवल मोढे पर बैठे-बैठे ही सामने लगे एक अर्ध-नग्न चित्र को देखने लगी थी।

उसकी यह चुप्पी रवि को और भी खलने लगी। तब विवश होकर रवि ही बोला, "कैसे आना हुआ है, माला ?"

साधारण स्वर मे बोली, "तुमसे मिलने आयी हू।"

"मुझसे ?"

"हा !"

"सामान-वामान कुछ नहीं लायी हो ?"

"नही, आज ही वापस जाना है मुझे...इसलिए !" कहकर माला ने एक खुला हुआ लिफाफा रवि के हाथ मे दे दिया।

लिफाफा हाथ मे लेता हुआ रवि बोला, "क्या है इसमे ?"

"लिफाफा खुला है खुद ही देख लो !" कहकर माला मोढे पर से उठकर, पलग पर लेट-सी गयी।

रवि ने फिर पूछा "मेरा मतलब है किसने भेजा है यह ?"

"दीदी ने. .तुम्हारी वर्तिका ने।" उसी लापरवाही से माला ने कहा। कापते हुए हाथो से रवि ने लिफाफा खोला। उसम एक फोटो थी—वर्तिका की। एक और चिट्ठी भी। उसने चिट्ठी पढी

"रवि !

"कई-कई चिट्ठिया लिखी हैं मैंने उत्तर न मिला।

"माला के हाथो अपनी लेटेस्ट फोटो और यह चिट्ठी भेज रही हू। कुछ बातें समझाने की नही होतीं। बोलो, तैयार हो ?

तुम्हारी—
वर्तिका !"

उसने चिट्ठी का अर्थ भाप लिया, लेकिन फिर भी ऐसा अभिनय किया, जैसे वह इन दो टूक शब्दो का मतलब नही समझ पा रहा था।

फिर उसने वर्तिका की लेटेस्ट फोटो देखी। बडी भोंडी लग रही थी वर्तिका उसमे। तब उसने माला से कहा "कैसी अजीब फोटो भेजी है ?"

"ऐसे दिनों मे तो ऐसा ही लगता है।" माला की वही लापरवाही !

रवि को यह अच्छा नही लग रहा था। उसने कहा, 'माला ! तुम ढग से बात करो ! मैं क्या पूछ रहा हू ?"

तब जैसे हल्के गुस्से से माला बोली 'तो फिर सुन लो, रवि ! दीदी को आठवा चल रहा है !"

'तो ?"

"तो क्या भोले क्यो बनते हो ? बोलो, करोगे दीदी से शादी ?"

'हू ?" वह असमजस मे माला की तरफ देखने लगा।

तब सयत स्वर मे माला फिर बोली, "देखो, रवि ! गलती हो जाने के बाद पछताना क्या है। जब ऐसे भावनात्मक स्तर पर तुम्हारे सबध पहुच रहे थे, तब बहाव मे तो न बहते तुम। तिस पर दीदी ने इतनी चिट्ठिया लिखी हैं तुम्हे, और तुम हो कि चुप्पी साधे बैठे हो किसी एक का

उत्तर दे देते .और कुछ नही तो इतना ही लिख देते, कि तुम उससे शादी नही करना चाहते...!"

'शादी ? .उसका सवाल ही नही उठता, माला ! .. तुम क्या समझती हो, कि तुम्हारी दीदी के पेट मे जो बच्चा है, वह मेरा ही है ?"

प्रश्नभरी निगाहा से माला रवि की तरफ देखने लगी।

रवि फिर बोला 'देखो, माला ! मैं तुम्हे बता दू, कि वर्तिका के सबध कोई एक मेरे ही साथ नही थे। कॉलिज के कई और लडके भी थे, जिनसे तुम्हारी दीदी ने ऐसे सबध रख रखे थे। वह यहा बहुत बदनाम हो चुकी थी—और 'पॉपुलर' भी ! हा, बाकी यह सच है कि कॉलिज छोडने के आखिरी दिनो मे वह मेरे साथ काफी रही है। लेकिन इसका मतलब यह तो नही है कि "

उसे बीच मे ही काटकर माला बोली, 'खैर, हो सकता है कि यह सच हो, लेकिन यह गलती दीदी की भी है, कि शादी से पहने, शादी का सुख भोगते हुए उसने कोई 'प्रीकाशन्स' नही लिये !"

कुछ देर वो दोनों चुप हो गए।

तब रवि बोला, 'कॉफी पीओगी या बीयर ?"

"वैसे अकसर मैं बीयर पीती नही, लेकिन आज बीयर ही चलेगा। *काफी के लिए फिर तुम उठोगे, बनाओगे। ऐसे कुछ समय खराब होगा..* और मुझे जल्दी जाना है, जो भी पहली ट्रेन मिल गयी...!"

बीयर की बोतल उठाकर रवि ने एक गिलास भरकर माला की तरफ बढा दिया और एक गिलास उसने खुद अपने लिए भर लिया।

फिर रवि बोला, 'बदनामी तो उधर बहुत हुई होगी वहा ?"

"वह तो हुई है। आठवा कोई छिपा थोडे ही रह सकता है।"

"हू !"

"लेकिन अब यह भी कोई बडी बात नही रही। अब ऐसी बदनामी बडी अस्थायी हो गयी है। और भी सुलझे हुए शब्दों मे कहू, कि ऐसी बदनामी अब बहुत कॉमन' हो गयी है। लोग ऐसी खबरें और ऐसी बातें सुनने के जैसे आदी हो गये हैं। वे रोज सुनते रहते हैं—आज इसने बच्चा गिराया...आज उसने बच्चे को गदे नाले मे बहा दिया . आज इसने यह

किया...आज उसने वह किया ! ...देखो, रवि ! यह सब उस समाज को सहना ही है, जिस समाज की लडकिया बडी उम्र तक कुवारी रह जाती हैं...बस, उसके बाद होता यह है, कि 'करप्शन' और बढता है। तुम्हारे जैसे लडके ऐसी लडकियो को भोगने के बाद भी उनसे शादी नही करते। जो भोगते है, वे ही जब शादी नही करेंगे, तो और कोई भला क्यो करने लगा. ."

"देखो, माला ! ...वर्तिका के सबध मे मैंने तुम्हे बता ही दिया है कि. "

"नही-नही, मैं उसके लिए नहीं कह रही। मैं तो एक जनरल बात कह रही थी कि जब उन लडकियो से कोई शादी करेगा नही, तो शारीरिक भूख तो इसान की बनी ही रहती है। फिर ऐसी लडकिया आगे होकर लडको को 'स्पाइल' करती हैं...वैसे देखो ! पहले बदनामी होती देख लडकिया आत्महत्या कर लेती थी। लेकिन अब तो लगने लगा है, कि यह भी कोई समाधान तो है नही। इसलिए जीओ, कैसे भी जीओ...बस यही बाकी रह गया है लडकियो के लिए...!"

रवि बोला, "जब तुम ऐसा खुलकर बोल रही हो, तो मैं तुम्हे बता दू कि तुम्हारी दीदी मे बहुत-बहुत शारीरिक भूख है, जिसे कॉलेज के एक-दो लडके नही मिटा सकते थे...वैसे तुम लोगो ने पहले ही उसकी शादी क्यो नही करवा दी थी ?"

"फिर वही बात ! ...मैं कहती हू, रवि ! हर मा-बाप की आखो मे जवान लडकी खटकने लगती है। दीदी की शादी हम कल कर देते, लेकिन हम लोगो मे दहेज इतना देना होता है कि हम दे नही पा रहे थे। इसलिए यह सब.. "

'तो फिर इस तरह तुम्हारी शादी मे भी देर हो सकती है। और फिर शारीरिक भूख मिटाने को एक दिन तुम भी अपनी दीदी की तरह किसी न किसी लडके से सबध बना लोगी...!"

माला भाप गयी कि रवि की बातो का रुख कहा बढ रहा है। वह बोली, "देखो, रवि ! तुम मेरे लिए कोई पादरी तो हो नही, जिसके सामने मैं अपना पाप 'कन्फेस' कर रही हू। और वैसे, इस मामले मे पाप

जैसा अब कुछ रहा भी नही है। तुम क्या समझते हो, कि मैं कोई 'कोल्ड' लडकी हू ?...ठंडी हू ?. .नो !...यह सब मैंने भी किया है, लेकिन सोच-समझकर...सम्हल-सम्हलकर !"

निरुत्तर होकर रवि चुप हो गया।

कुछ देर ऐसी चुप्पी बनी रही।

फिर माला ही बोली, "तो फिर तुम्हारा क्या उत्तर है ?.. दीदी से शादी नही करोगे तुम ?"

"फिलहाल तो मेरा इनकारी जवाब ही समझो !"

"चलो, फिर जाने दो ! . अच्छा, मेनी थैंक्स फॉर योर बीयर ! . . आओगे मेरे साथ स्टेशन तक ?"

"चलो !" कहकर रवि ने कपडे बदल लिये। वह टाई लगा रहा था कि माला बोली, 'हा, तो रवि ! यह फोटो तुम अपने ही पास रख लो। दीदी की यादगार के बतौर तुम्हारे पास रहेगी। कभी शायद तुम अपने दोस्तो को शान से दिखा पाओ कि—देखो, यारो ! ऐसा भी हम कर सकते है !"

रवि को बहुत गुस्सा आया इस बात पर, बोला, 'माला ! इतना नीच समझा है तुमने मुझे ?"

माला बोली, "गुस्सा मत करो, रवि ! अक्सर कॉलिज के लडके ऐसा ही करते हैं। सोचा, कही तुम भी..." वह मुसकरा दी।

रवि ने टाई लगा ली थी। अब वह जूते पहन रहा था। तब माला फिर बोली, "मैंने तो डैडी से कहा था कि रवि के फादर को लिख दें...!"

रवि चौंक गया—"फिर. .?"

'फिर डैडी नही माने। बोले, इसमे भी तो हमारी ही बदनामी है, कि अपनी लडकी को ऐसी ढील क्यो दे दी हमने ?...रवि ! हम लोग बडी ही 'आर्थोडाक्स' फैमिली के लोग है।...तुम ही सोचो इस युग का कितना बडा विरोधाभास है कि हमारी मम्मी दिन-भर घंटिया बजा-बजाकर भगवान के भजन गाती रहती है, और उसकी एक लडकी, शादी से पहले ही अपने पेट मे बच्चा ढोये हुए है।...सच कहती हू, रवि ! डैडी की जगह अगर मैं होती, तो तुम्हारे फादर को जरूर लिख देती।"

रवि अब काप-काप गया था। बड़ी चट लड़की है यह तो—उसने सोचा। तैयार होकर उसने अपने कमरे को ताला लगाया और माला के साथ कमरे म बाहर निकल आया।

बाहर आकर उसन एक ठडी सास ली नो सीध स्टेशन चलना है ?

टेढी नज़रो स माला न रवि की तरफ देखा और कही ले चलने का इरादा है क्या ?

नही तो। रवि सच मे ही इस लडकी की बबाकी से डर गया था।

स्टेशन कोई दूर नही था दोनो पैदल पैदल स्टेशन की तरफ जाने लगे। तब माला बोली रवि ! यह तुम्हे अजीब नही लग रहा है कि एक छोटी बहन अपनी वडी बहन के लिए प्लीड कर रही है ?''

रवि ने कोई उत्तर नही दिया।

स्टेशन आ गया था।

माला न फिर कहना शुरु किया लेकिन रवि ! तुमने मेरे लिए सच में ही मुसीबत पैदा कर दी है। दीदी की शादी अब होगी नही। और जब तक उसकी शादी नही होगी तो मेरी भी नही होगी। तुम ही सोचो रवि ! कि बडा बहन के रहते हुए छोटी बहन की शादी कैसे हो जायेगी ? '

रवि ने कोई उत्तर नही दिया। वह चुपचाप अपनी घडी के सेकण्ड के काट की तरफ देखने लगा कि समय कटते नही कट रहा है।

तब माला बोली चलो तुम दीदी से शादी नही करना चाहत क्योकि वह बहुत बदनाम है। तो फिर मुझसे शादी करोगे ?

तुमसे ?

हा हा मुझसे ! मैं तो तुम्हारे शहर की भी नही हू बदनाम भी नही हू

लकिन

लकिन क्या ?

इस बीच गाडी धडधडाती हुई प्लटफाम पर आ पहुची। रवि बोला आओ आओ ! पहले अपने लिए कोई सीट ढूढ लो वरना भीड बहुत

है। खड़े रहने की भी जगह नही मिलेगी।" माला समझ गयी कि रवि यहां उसकी बात को टाल गया।

कंपार्टमेंट मे बैठ लेने के बाद, माला फिर बोली, "हां, तो रवि! मेरी बात का जवाब ?"

'देखो! म...म...माला! शादी तो मैं तुमसे कर भी लू...लेकिन तुमने मुझे बता दिया है, कि वर्तिका की तरह, तुम्हारे भी सबध और लडको के साथ रहे हैं।"

'तो क्या हुआ ?...मैं कोई 'प्रैग्नेंट' नही हू···बदनाम नही हू क्या चाहिए तुम लडको को और ?"

"लेकिन, फिर भी, माला! तुम्हे 'करप्ट' तो कहा जा सकता है!"

"हीयर, हीयर...यऽऽऽ! तुम लोग कुछ भी कर लो, बड़े शरीफ हो तुम.. मिस्टर रवि! अब जब कि बात क्लाईमैक्स' तक आ गयी है, तो मैं तुम्हे बता दू कि मैं बहुत पवित्र हू। किसी भी गैर लडके के साथ मेरे कोई सबध नही रहे हैं। मैं तो तुम्हे परखने आयी थी, तुम्हारा दिल देखने आयी थी, तुम्हारी शराफत देखने आयी थी।" फिर एक ठडी सास लेकर माला बोली, 'शादी तो दीदी की हो जाएगी। अब भी कई बोल्ड लडके दुनिया मे हैं, जो दीदी जैसी लडकियो को अपना सकते है लेकिन रवि! तुम्हारे जैसे काउर्ड और करप्ट लडके के साथ हम उसका पल्लू बाधना नही चाहेगे—समझे!"

वह चुपचाप माला को देखता रहा।

तब माला ही बोली, "अच्छा, रवि! तुम अब जाओ!"

वह गर्दन नीची किए वहा से चला आया। आगे आकर उसे लगा कि कुछ देर पहले उसके गले मे कोई फदा डाल दिया गया था, जिससे वह अब मुक्ति पा गया है।

उसे लगा कि यह शायद अत है। इसके बाद अब शायद कभी भी वर्तिका की चिट्ठी उसके पास नही आएगी।

प्लेटफॉर्म छोडने से पहले उसने स्टेशन कैंटीन की तरफ जाकर कॉफी का एक कप पीना चाहा।

उसका सिर जोरो से दुख रहा था।

कोसा जाने वाला पल

तब फिर बाहर आकर उसे लगा कि व्यर्थ ही वह यहा चली आयी थी। वैसे दो चार दिन तक तो वह सोचती ही रही कि उसका वहा जाना ठीक भी होगा कि नही।

लेकिन उसका मन उसे इस बात के लिए बार-बार विवश कर रहा था कि चाहे एक बार ही सही उससे मिल तो आऊ। यह हो सकता है कि उसे अच्छा न लगे लेकिन ऐसी हालत मे वह कह देगी कि—कभी-कभी परिचित लोग भी तो एक-दूसरे से मिलने चले जाते है।

चलो ऐसे ही सही।

पति से अलग हुए उसे कुछ साल हो गये थे। तब से कई बार उसका मन हुआ था कि चाहे एक बार ही सही वह अपने उस पति से मिल तो ले जिसके साथ बैठकर उसने भविष्य के कई-कई सपने सजोये थे।

वैसे अलग होने पर शुरू शुरू के दिनो मे उसे लगता रहा था कि वह उसे जरूर लिखेगा या शायद कभी मिलने ही चला आए। लेकिन उसने न तो कुछ लिखा और न कभी मिलने ही आया। उसका एक मित्र एक बार उससे मिलने आया था। लेकिन वह भी उस मुलाकात मे बहुत औपचारिक सा रहा। जितनी देर तक वह बैठा बातें करता रहा उतनी देर तक उसे लगता रहा कि जरूर उसके पति के सम्बन्ध म या उनके टूटते हुए रिश्ते के बारे म वह कुछ बात करेगा। और फिर वह तब उससे पूछ लेगी कि वह

क्या कभी उसे याद भी करता है ? या क्या उसकी कभी उससे मिलने की इच्छा भी होती है ?...लेकिन उसके पति का वह मित्र बातो के अन्तिम वाक्य तक बहुत औपचारिक-सा ही बना रहा।

तब न जाने क्यो उसे लगा था कि वह जैसे उसे टीज़ करने को आया था।

शाम के करीब छह बजे वह उसके फ्लैट पर पहुची। फ्लैट के बाहर ही माली उसे दीख गया। उसे खुशी हुई कि चलो, घर के बाहर वाले बगीचे का जो उसने एक सपना सजोया था, वह बिखरा नही है। वहा वही माली काम कर रहा है, जिसे उसने ही नौकरी पर लगाया था।

आगे बढकर उसने माली को बुलाया, धर्मा!"

एक क्षण को माली चौका। लेकिन फिर झट से उसने घर की उस मालकिन को पहचान लिया जो पिछले कुछेक वर्षों से रूठकर उस घर से चली गयी थी। आश्चर्य और हर्ष से माली बोला, 'बीबीजी! आप ?"

'कैसे हो, धर्मा!" ऐसा पूछते हुए उसे खुद ही लगा कि उसके बोलने के ढग म एक अजीब-सा स्नेह भर आया था।

बडे आदर से तब माली बोला, "अच्छा हू, बीबीजी!"

वैसे वह शायद माली से कुछ और बातें करती या फिर उसकी बीबी और बच्चो के सम्बन्ध मे कुछ पूछती लेकिन उसे वह सब औपचारिक और समय खराब करने जैसा लगा। इसलिए तुरन्त ही उसने पूछ लिया, "वे घर पर है ?"

"हा, बीबीजी! है।"

"उनसे जाकर कहो—मैं आयी हू।"

"बहुत अच्छा, बीबीजी!" माली फ्लैट के अन्दर चला गया।

तब तक वह बगीचे को देखने लगी। उसे लगा, धर्मा ने काफी नये-नये प्रकार के फूल लगा दिये थे। आस-पास कुछ नये डिज़ाइन के गमले भी लगे थे, जो तब यहा नही थे, जब वह यहा की—ईस घर की—या इस फ्लैट की मालकिन कही जाती थी।

तब फिर माली ने आकर उसे कहा, 'बीबीजी! ..मालिक ने कहा है—आप अन्दर आ जाइये!"

'अच्छा !" कहकर वह अन्दर चली गई।

अन्दर गई तो देखा वह पलग पर लेटे-लेटे कोई पुस्तक पढ रहा था। बहुत ही धीमे स्वर मे वह बोली, "कैसे हो ?"

'हू ! अच्छा हू ! आओ बैठो !"

बैठने से पहले उसने इधर उधर झाका कि कहा बैठना ठीक रहेगा। फिर वह चुपचाप पलग के पास वाले सोफे पर बैठ गयी।

कब आयी हो ?'

दो-चार दिन हुए हैं ' ऐसा कहते हुए उसे थोडी हिचकिचाहट हुई कि कही वह शायद ऐसा न कह दे—कि दो चार दिन मे आज ही फुरसत मिली है मिलन की ?

लकिन उसन ऐसी कोई बात नही कही। पूछा सिर्फ इतना ही— कहा ठहरी हो ?"

पहले उसने सोचा कि झूठ मूठ ही वह किसी रिश्तेदार का नाम ले न। लकिन फिर कुछ सोचकर उसने सच सच बता दिया, 'ठहरन को ता किसी स्कूल म ठहर जाती, लेकिन कुछ अच्छा नही लगा इसलिए एक होटल म ही ठहर गई हू।'

'किसी स्कूल मे तुम्हारे ठहरने की बात मैं नही समझा !" पति न आश्चर्य से उसकी तरफ देखा।

'टीचर हो गयी हू आजकल। बच्चो का कैम्प इस शहर मे लगना निश्चित हुआ था सो उनके साथ ड्यूटी लग गयी ठहरना तो वैसे कैम्प म ही था। लेकिन झूठ-मूठ मैंने कह दिया, कि यहा मेरा एक अपना घर भी है।" ऐसा कहते हुए उसने एक बार पति के चेहरे की तरफ देखा, कि कही उस पर शायद इस बात को कोई प्रतिक्रिया हुई हो। लेकिन वह सहज ही बैठा था। केवल हाथ वाली पुस्तक को उसकी तरफ बढाता हुआ वह बोला— इसे जरा वहा टेबुल पर रख देना !"

किताब हाथ म लेकर ऐसे ही बिना किसी मतलब के वह उसे उलट-पलटकर देखने लगी। किताब के नाम और स्केचो से उसे लगा कि शायद वह कोई रामाटिक उपन्यास था।

तब कुछ न कुछ कहने के लिए वह बोली— कुछ दिन पहले मनीषजी

वहा आये थे, शायद किसी इण्टरव्यू के सम्बन्ध मे।"

उसकी बात पूरी होने से पहले ही वह बहुत सहज ढग से बोला—"हा, मनीष ने बता दिया था, कि वह तुमसे मिला था ..।"

तब बीवी की उत्सुकता जैसे कुछ और बढी— मेरे लिए क्या कहा उसने ?"

"कहता क्या—बस, ऐसे ही...ऐसे ही थोडा बता रहा था कि—तुम पहले से दुबली हो गयी हो।"

बीवी को, उसके पति को बताई गयी मनीष की वह बात बडी सुखद-सी लगी। बोली, 'क्या तुम्हे ऐसा लगता है कि मैं सच मे ही बहुत दुबली हो गयी हू. .।"

"हू ?" फिर जैसे इस सदर्भ से अलग हटने के लिए वह बोला, 'जरा मेरा सिगार उठा देना।"

वह समझ गयी कि पति जान-बूझकर बात को टाल गया। उसने चुपचाप सिगार उठाकर पति को दे दिया।

तब, उसे सिगार सुलगाते देख, बीवी को शादी के शुरू-शुरू के दिनो की एक बात याद हो आयी, जब एक बार उसके पति ने उसे कहा था कि—उसके एक सपने को साकार होने मे शायद अभी बहुत बरस लग जाएगे। उसने सोच रखा था कि जब वे दोनो बूढे हो जाएगे तब सर्दी के दिनो मे वे कश्मीर या शिमला या नैनीताल या मसूरी या ऐसे ही किसी हिल-स्टेशन जाएगे .और रात-रात मे खूब गर्म कपडो मे लैस होकर हल्के-से नशे के बतौर थोडी-सी शराब पीकर घूमते रहेगे। रास्ते मे वह बीवी की कमर के गिर्द बाह डालकर चलेगा। और बीच-बीच म, बीवी के ओवर-कोट पर लगी बर्फ की परतो को उगली के इशारे से झाडता रहेगा।

वह बोली, 'याद है तुम्हे एक बार तुमने किसी हिल-स्टेशन के बारे मे कहा था, कि हम सर्दियो मे कभी चलेंगे.. और ."

सिगार से एक हल्का-सा कश लेकर तब उसका पति बोला, "हा, याद है .लेकिन अब शायद उस सपने का इन्तजार करना नही होगा. ।"

"क्यो ?.. तो क्या आपने. ." वह फिर रुक गयी। उसे लगा कि बोलने मे वह एक शब्द की ग़लती कर गयी थी। अब तक वह अपने पति से

'तुम' कहकर बात करती आयी थी। लेकिन आज, अचानक इस क्षण, उसके मुह से 'आप' शब्द कैसे निकल गया। अपने-आपको दुरूस्त करती हुई वह बोली—"तो क्या तुमने हमेशा के लिए सोच लिया है कि " यह कहते हुए उसे खुद को ही लगा कि उसकी आवाज जैसे कुछ-कुछ कांप-सी गयी है।

उत्तर देने की जगह पति ने केवल मुह से थोडा धुआ निकाला। उसके मुह से धुए को निकलता देख उसने सोचा कि शायद अब वह कुछ बोलेगा।

लेकिन कुछ बोलने की बजाय पति ने केवल उसकी आखो मे आखें डालकर एकटक उसकी तरफ देखा। तब उसे लगा कि पति से वह आख नही मिला पा रही थी। उसने अपनी आखें नीची कर ली।

कुछ देर को दोनो कुछ नही बोले।

तब वह सोफे से उठकर थोडी देर को इधर-उधर टहलने लगी। फिर वह बालकनी मे चली आयी। यहा-वहा झाककर उसने देखना चाहा कि शायद कहीं कोई पडोसी/पडोसिन अपने फ्लैट की बालकनी मे खडा/खडी हो और वह उसे देख ले, कि वह आयी हुई है, या यो ही समझ ले कि वह फिर आ गई है।

लेकिन सभी बालकनिया खाली या सूनी-सूनी-सी थी। केवल चटर्जी वाले फ्लैट की बालकनी मे उसने एक बच्चे को खडा हुआ पाया। बच्चे के बाल कुछ ऐसे थे कि वह यह तय नही कर पा रही थी, कि वह लडका था या लडकी।

उसे ध्यान आया कि जब वह यह घर छोडकर चली गयी थी तब मिसेज चटर्जी अभी प्रैग्नेंट ही थी।

वह फिर अन्दर चली आयी। तब तक उसके पति ने फिर वह उपन्यास उठा लिया था। सिगार सिर्फ उसकी उगलियो की पकड मे फसा हल्का-हल्का धुआ उगल रहा था।

तब उसने पति से पूछा, "यह मिसेज चटर्जी की डिलीवरी कब हुई ? क्या लडका हुआ है उसे ?"

पति शायद उपन्यास के किसी ऐसे स्थल पर पहुच गया था जहा से अलग हटकर कुछ बोलना उसे अरुचिकर-सा लगा। बडा ही अजीब-सा

मुह बनाता हुआ वह बोला, "क्या पता !" फिर उसे लगा कि शायद बीवी कोई और सवाल पूछ बैठे इसलिए खुद ही आगे बोला, "देखो, मैं तुम्हे एक बात बता दू—कि तुम थी—जब तक पडोस की औरतें वगैरह इस घर मे आया करती थी। अब चूकि मैं अकेला हू इसलिए न तो कोई इस घर मे आती है या आता है एण्ड नार आई बॉदर, कि किसे क्या हुआ है और किसे क्या होना है !"

पति के बात करने के लहजे की वह कडवाहट उसे अच्छी नही लगी। उसे लगा कि उसके पति के स्वभाव मे कोई अन्तर नही आया है। आज भी वह वैसा ही अन्सोश्यिल-सा है।

ढीठ।

फूहड !

तब भी वह ऐसा ही था।

उसे याद आया कि उनके बीच, झगडो के पीछे का एक कारण उसके पति का ऐसा फूहड स्वभाव भी था।

शादी के शुरू-शुरू के दिनो मे तो वह कुछ हसमुख-सा बना रहा। लकिन जैसे-जैसे दिन खिसकते गए, वैसे वैसे बीवी को लगने लगा कि वह हसी सब दिखावा मात्र थी—एक ओढी हुई हसी।

उसे ध्यान आया, तब एक बार उसकी सास ने उसे कहा था, "बहू ! अच्छा हुआ, तुम इस घर मे आ गई हो। तुमने आकर मेरे बेटे को आदमी बना दिया है। वरना इस छोकरे का कोई ठिकाना ही नही था। सुबह आठ बजे घर से चलता था, और रात ग्यारह ग्यारह बजे तक घर लौटता था। जाने दिन का खाना भी कहा खाता था. अब तुम आयी हो, तो देखो, ऑफिस से सीधा घर तो चला आता है !"

लेकिन वह 'तब' था।

अब तो उसे लग रहा है, कि एसी बात सोचकर वह मन-ही-मन अपन पति पर जैसे अहसान जता रही है।

उसके बाद तो कितना कुछ बदल गया है। माजी ऊपर वाले को प्यारी हो गयी। देवर अब कही विदेश म है। उसने वही किसी नीग्रा लडकी से शादी कर ली है। और वह. वह भी पति से अलग रहने लगी है।

फिर वह बोली, 'अकेले मे बोरियत तो लगती होगी ?"

"क्यो ?"

'वो...वो ऐसा है, कि अब माजी भी नही है और राकेश भी अब क्या वापस आना है, जब उसने वहीं कही शादी कर ली है तो अकेले मे ता बोरियत...!"

'नही, कोई बोरियत-वोरियत नही लगती!' उसे लगा—फिर वही फूहड जवाब!

वह कुछ नही बोली। कुछ देर को दोनो ही चुप रहे।

तब फिर पति ही बोला, "इस टीचरी-बीचरी से कितना कुछ मिल जाता है ?"

'यही कोई ढाई-तीन सौ!" महज उत्तर देने के कारण उसके मुह से य शब्द निकले, वरना उसे लगा कि पति का इस तरह उसकी नौकरी को 'टीचरी-बीचरी' कहना, उसकी उपेक्षा करना ही था।

तब फिर पति बोला "हा .बुरा नही है काम तो आराम से चल जाता होगा...बाप को भी अपनी कमाई से कुछ देती होगी ?"

—"हा!"

तब वह एक ऐसे अजीब ढग से मुसकराया, जो बीवी को अच्छा नही लगा। लेकिन उसके ऐसे मुसकराने से उसकी मूछो म आये फैलाव से बीवी को लगा कि, उसके पति की मूछें भी कुछ-कुछ सफेद होने लगी थी।

जैसे बात का सदर्भ बदलने को वह बोली, 'मनीपजी जब आये थे, तब मैंने सोचा कि वे जरूर मुझसे पूछेंगे कि हम दोनो के अलग हो जाने का क्या कारण था। लेकिन काफी देर तक की बातो मे, उसने तुम्हारे और मेरे सम्बन्ध मे एक भी बात नही की तुमने उसे बता दिया था क्या ?"

लापरवाही से ही वह बोला नही, मैंने तो नही बताया वैसे बताने को उसम था ही क्या ? कोई बहुत बडी बात होती तो बता भी देता बचकानी-सी बात उसे क्या बताई जाए !"

तब फिर बीवी को लगा कि उसका पति फूहड का फूहर ही रहा। जिस बात को लेकर पति-पत्नी अलग हो गये हैं उस बात का उसके लिए जैसे कोई महत्त्व ही नही था।

वह फिर बोली, "मनीषजी के चले जाने के बाद मैंने एक चिट्ठी भी लिखी थी...!"

पति बोला, "हा, मिल गयी थी वह। लेकिन मैंने जान-बूझकर उत्तर इसलिए नही दिया, कि ऐसा करने से शायद वह बात एक सिलसिले मे बदल जाती और सच तो यही था कि तुम्हारे घर छोडकर चले जाने के बाद, ऐसा सिलसिला तुम्हारे या मेरे अहम् को कही न कही जाकर झुकाता ही।" बीवी को पति की यह बात अच्छी तो नही लगी, लेकिन बात को जिस ढग से 'पुट-अप' किया गया था, वह ढग उसे कुछ शऊरी-सा लगा।

तब अचानक उसकी दृष्टि सामने लगे, शराब बनाने वाली एक कम्पनी के कैलेन्डर पर उठ गयी। और वही उसे याद आया कि कुवारेपन से ही यार लोगो के साथ, उसके पति को पीने की आदत थी। शादी के बाद उसी ने आकर, धीरे-धीरे उसे शराब पीने के अच्छे-बुरे परिणामो का डर बताकर, पीने-पिलाने की उसकी आदत छुडवा दी थी।

और आज, कमरे मे, शराब बनाने वाली किसी कम्पनी का कैलेन्डर देखकर, उसके मन मे एक आशका-सी उठी। बहुत धीमे स्वर मे पूछा उसने, "ये क्या शराब-वराब फिर से पीनी शुरू कर दी क्या ?"

"क्यो ?...ऐसा पूछने से तुम्हे क्या मिलना-मिलाना है ?" उसे लगा कि पति ने बडे तल्ख स्वर मे यह बात कही थी। तब उसका सदेह निश्चय मे बदल गया कि—हां, पीता होगा। उसे लगा कि अपनी कमजोरी को छिपाने के लिए, और अगले का मुह बद करने के लिए, तल्खी से बोलना कुछ काम कर जाता है, और उसके पति ने भी ऐसा ही किया।

पति शायद अब भी अपने उत्तर से खुद ही सतुष्ट नही था। इसलिए फिर बोला, "मेरी समझ मे नही आता कि तुम अब भी इस घर की दीवारो मे मोह क्यों अटकाए हुए हो ?"

वह जैसे खो-सी गयी थी। इसी दीवार पर—पहले जब वह यहा थी—उसने 'मरफी' का कैलेण्डर लगा रखा था। 'मरफी' के कैलेण्डर का बच्चा, उसे अपने कुवारेपन से ही अच्छा लगता रहा था।

शादी के बाद, जिन दिनो मिसेज़ चटर्जी प्रैग्नेंट हुई थी, तब उसने भी सोचा था कि जब उसे अपना बच्चा होगा, तो वह उसके बाल 'मरफी' के

कैलेन्डर वाले बच्चे जैसे रखेगी। बालो के आखिरी हिस्सो म गोल-गोल छल्लो जैसे कर्ली—हेयर !

और आज वहा 'मरफो' के कैलेन्डर की बजाय शराब की बोतल वाला कैलेन्डर उमे अच्छा नहीं लग रहा था।

पूछा उसने, विजय भैया न इस साल 'मरफी' का कैलन्डर नही दिया ?"

"मैं गया ही नही लने।"

पहले उसकी इच्छा हुई कि वह 'क्यो जैसा कोई सवाल पूछे, लेकिन उसे पता था कि एक बार फिर कोई तल्ख जवाब ही सुनने को मिलेगा, इसलिए वह भी चुप रही।

थोडी देर बाद, पति उठकर बालकनी की तरफ चला गया। बीवी ने तब तक तिरछी निगाह से पासवाले कमरे की तरफ देखा। उसन देखा, उस कमरे की दीवार से वह पेंटिंग लापता थी, जो वह एक बार दिल्ली म हुई एक आर्ट-एग्जीबीशन से खरीद लायी थी।

वह भी उठकर बालकनी की तरफ चली गयी। उसकी इच्छा हुई कि एक बार फिर वह अपने पति के साथ वैसे ही सटकर खडी हो जाए, जैसे अलग होने से पूव। वे अकसर बालकनी मे खडे खडे इस बात की गिनती करते थे—कि देखें, पद्रह मिनट के भीतर-भीतर कितनी कारे रास्ते से गुजर जाती है।

लेकिन वह कुछ दूरी पर रेलिंग के सहारे आकर खडी हो गयी। एक बार उसने इधर-उधर दूसरी बालकनियो की तरफ देखा कि शायद अब ही वहा कोई खडा हो, और इन दोनो को बालकनी पर एक साथ खडा पाकर मन मे कोई एक गलतफहमी ही पैदा कर ले।

लेकिन कही भी उसे कोई दिखाई नही दिया। चटर्जी वाली बालकनी पर खडा बच्चा भी अब वहा नही था। केवल वहा एक गुडिया, और एक अडरवीयर पडा हुआ था।

वह थोडा और आगे बढ गयी। पति के काफी नजदीक आकर उसन पूछा, वह पेंटिंग तुमने क्या कही और जगह लगा दी है ?"

कौन सी ?"

"जो   जो मैं दिल्ली से ख़रीद लायी थी।"

"अच्छा   वह   !" उसके बाद उसने एक ठहाका मारकर कहा, 'वह तो मैंने अपने एक डॉक्टर दोस्त को दे दी   मुझे तो कुछ पता नहीं लेकिन वह ही कह रहा था कि उस चित्र पर पिकासो के किसी एक चित्र का बहुत प्रभाव था   प्रभाव क्या था, उसकी कॉपी बता रहा था   किसी का हाथ कहा, तो किसी का पैर कहा   !" बीवी ने देखा, ऐसा कहते हुए पति ने अजीब-सा मुह बना लिया था। फिर जैसे कोई व्यग्य करता हुआ पति बोला 'तो मैंने उसे कहा कि ले जाओ, अपने ऑपरेशन-थियेटर म लगा देना. और नीचे शीर्षक दे देना—'पोस्ट-मार्टम' क्यो ?' वह एक बार फिर फूहड ढग से हस दिया।

बीवी को लगा, जैसे यहा पति ने उसका, या उसकी पसद का अपमान किया है।

वही खडे-खडे बीवी का हाथ अचानक पति के हाथ से छू गया। एक अजब सी सुरसुरी उसके बदन मे उठी तो वह हैरान रह गयी। उसे लगा कि वह एक ऐसी सुरसुरी थी, जो किसी अजनबी के स्पर्श से ही उठ सकती थी। तब फिर उसे खुद पर ही आश्चय लगने लगा कि अपने ही पति के प्रति यह ऐसी अजनबी की-सी भावना क्यो आ गयी थी उसके मन म ?

तब उसने देखा, पति खुद ही थोडा दूर खिसक लिया था।

वह कही थोडा और खिसक जाए, या कही वापस कमरे म लौट जाए, उससे पहले वह खुद ही अदर चली गयी।

कमरे के द्वार के नज़दीक आकर उसके कदम स्लीपिंग रूम की तरफ खुद-ब-खुद बढ गय। उसन देखा—एक कोन म उनकी शादी की वही तसवीर टगी थी जिसम उनकी सूरत इतनी साफ नही थी, जितन कि उस तसवीर म फूलो के हार दिखाई दे रह थे। उस खुद भी वह तसवीर पसद नही थी, इसलिए उस तसवीर का किसी कोने म नगा होना उसे कोई खास बुरा नही लगा।

फिर उसन देखा, पलगो की जोडी वैस ही एक दूसरे स सटी हुई थी। तकिए पर अभी तक 'स्वीट ड्रीम्स' के व ही घिसे पिटे दो शब्द लिखे हुए थे, जो उसने खुद ही बगीद स बना-बनाकर लिखे थ और जिनका अब कोई

फ़ैशन ही नहीं था।

तब अचानक उसकी दृष्टि सामने लगी एक खूटी पर उठ गयी, जिस पर उसका वही ब्लाउज़ टंगा हुआ था, जो उसके पति को बहुत पसद था। उसे याद आया कि जब-जब भी वह पति के साथ उसके किसी मित्र के घर घूमने जाती, तो उसको हमेशा इसी ब्लाउज़ के पहनने की जिद रहती।

उसे यह अजीब भी लगा और अच्छा भी।

ऐसे कुछ देर तक वह उस कमरे को निहारती रही। तब उसे लगा कि कोई एक भली-सी गध उस कमरे मे थी, जो उसकी बहुत जानी-पहचानी-सी थी।

फिर जब वह उस कमरे से बाहर आयी तो देखा कि पति वापस कमरे मे आ गया था, और किसी पैनी चीज़ से सिगार की नली को साफ करने लगा था।

अब पति ही बोला, "तुम्हारा कब जाने का प्रोग्राम है ?"

उसे पति का यह सवाल अच्छा नहीं लगा। एक बार तो इच्छा हुई कि कह दे—कि कौन-सी तुम्हारे माथे आ पड़ी हूं, जो अभी से ही मेरे जाने की फिक्र लगी है ?

लेकिन यहां उसने महज़ औपचारिक होते हुए कहा, "कैम्प खत्म होते ही चली जाऊंगी।"

अब उसने सोचा कि पति पूछेगा कि कब कैम्प खत्म होना है ?... लेकिन उसने ऐसा नही पूछा।

वह बोली, "वैसे...तुम चाहो, तो आज मैं होटल न जाकर, तुम्हारे यहा ही ठहर लू।"

पति जैसे अचानक चौंक गया—"हूं ?"

अपनी बात को दोहराने से पहले उसने एक और सवाल कर लिया—"वो...स्लीपिंग रूम मे, खूटी पर मेरा कोई ब्लाउज क्यों टाग रखा है ?"

उसने देखा कि इस बात पर पति कुछ लाल-पीला हो गया था। वह बोला, "एक बार फिर मुझे कहना पड़ रहा है कि मेरी समझ मे नही आता, कि तुम इस घर की हर चीज मे ऐसा मोह, ऐसी रुचि क्यों रखे हुए हो, जिस

घर से तुम्हारे सम्बन्ध हमेशा-हमेशा के लिए टूट चुके हैं...!"

"हमेशा के लिए ?" बीवी को खुद ही लगा कि उसके इस प्रश्न मे बहुत नर्मी थी, और यह भी, कि वह अदर-ही-अदर काप-सी गयी थी।

तब फिर पति बोला, "देखो, मैं तुम्हे स्पष्ट बता दू कि अब हमारे कोई सम्बन्ध नही रहे हैं!"

बीवी को लगा कि अपने पर बहुत काबू पाने के बाद भी उसका मन भर आया था। अपनी भारी हो आयी आवाज को सतुलित करती हुई-सी वह बोली, "क्या कही भी कोई ऐसी गुजाइश नही कि हम जुड सकें...एक छोटी-सी गलतफहमी को सहारा बनाकर, कब तक हम दोनो की जिद, हमे एक-दूसरे से अलग किये रखेगी...?"

पति ने कोई उत्तर नही दिया। केवल एक बार अपनी बीवी की तरफ देखा। फिर उठकर अलमारी खोली। उसमे वह कुछ टटोलता रहा। बीवी ने देखा, उस अलमारी मे कुछ बिखरे हुए कागज पडे थे और दो-चार प्रकार की शराब की बोतलें।

पति ने एक शराब की बोतल निकाली। बीवी ने देखा कि उसके पति का लाल-पीला चेहरा, बोतल के बाहर निकालने के बाद, कुछ-कुछ सतुलित-सा हो गया था। एक खाली गिलास निकालकर उसने बीवी से कहा, "लो, इसमे थोडा पानी भर लाओ...!"

बीवी को यह सब अजीब-अजीब-सा लगा, और साथ मे उसे एक हल्की-सी खुशी भी महसूस हुई कि—देखो, पति अब भी उस पर अपना कोई अधिकार समझता है।

पानी भरकर वह अदर आयी तो देखा, पति ने थोडी-सी शराब एक प्याले मे भर ली थी।

गिलास टेबुल पर रखकर, वह चुपचाप सोफे पर बैठ गयी, तब उसने एक बार फिर अपनी बात दोहराते हुए पति से कहा, 'हा तो...मैं पूछ रही थी...कि अगर तुम कहो, तो आज की रात होटल की बजाय मैं तुम्हारे यहा ही ठहर सू...?"

"नही...ऐसी कोई बात...! तुम...तुम होटल मे ही रह लेना!" कहते हुए पति ने एक बार गौर से बीवी की तरफ देखा।

वस ! बीवी को लगा—अब और नही अब और नही।

उसने सोफे पर पडा अपना पस उठा लिया अच्छा ! तो मैं जा रही हू।"

वह जाने लगी तो पति ने उसे बुला लिया सुनो !

वह रुकी।

उसने देखा उसके पति की आखो म वह शरारत भर आयी थी जो अक्सर बीवी को चूमने से पहले उसकी आखो मे उभर आया करती थी।

एकटक उसकी तरफ देखता हुआ, पति पलग से उठा। तब अचानक उसका हाथ शराब की बोतल से जा टकराया।

जमीन पर गिरकर बोतल टूट गयी।

तब एक नजर से पति ने बीवी को देखा फिर एक दृष्टि टूटी हुई बोतल और फैली शराब पर फेकी। फिर कुछ सोचकर वह बीवी से बोला अच्छा तुम जाओ।'

बीवी को यह बुरा लगा कि यह क्या है ?—खुद ही उसे बुलाया। वह रुकी है तो फिर खुद ही उसे जाने के लिए कह रहा है।

बीवी को लगा कि आज यह तीसरी या चौथी बार पति ने उसका अपमान या अपमान जैसा ही कुछ किया है। उसकी इच्छा हुई कि जाते-जात वह भी कोई तल्ख बात पति से कह जाए।

लकिन तब उसने देखा कि पति जमीन पर झुककर काच के टुकडे समेटने लगा था।

पति को काच के टुकडे समेटता देख एक बार उसका मन हुआ कि वह भी झुककर टूटे टुकडे समेटने म पति की मदद करे। लेकिन फिर कुछ सोचकर उसने ऐसा नही किया।

मुह मोडकर वह बाहर चली आयी।

तब मन ही मन वह उस क्षण को उस पल को कोसने लगी जब उसका पति उठकर उसकी तरफ आने को था और शराब की बोतल ने गिरकर जैसे उसकी कोई बात बनते बनते बिगाड दी थी।

तब फिर बाहर आकर उसे लगा कि व्यर्थ ही वह यहा चली आयी थी।

सरोकार

शुरू-शुरू में वहां सिर्फ तीन-चार जने थे। एक ने अपने दोनों हाथों में साइकिल पकड़ रखी थी। एक ने चोर की बांह मजबूती से पकड़ रखी थी और एक रह-रहकर चोर को ज़ोर-ज़ोर से चांटे मार रहा था, "बोल बे! इससे पहले कितनी साइकिलें चुराई हैं?"

चोर ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसके बाद, जिस व्यक्ति के हाथों में साइकिल थी, वह बोला, "यह दूसरी साइकिल ली है मैंने!...इससे पहले भी एक नयी-नयी साइकिल कोई उठा ले गया.. उसके बाद यह ली। हूं! तो इसे फिर आज यह महानुभाव गोल करने चले आये।.. स्साला, चोर कहीं का!"

चोर ने अपनी लाल-लाल आंखों से साइकिलवाले की तरफ देखा। चोर की डरावनी दृष्टि के सामने साइकिलवाले की निगाह टिक न पायी। इसलिए उसने अपनी नज़रें झुका लीं।

उसके बाद, वह व्यक्ति, जिसने चोर की बांह पकड़ रखी थी, चोर से पूछने लगा, "बोल बे! चोर के बच्चे! इससे पहले और कितनी चोरियां की हैं इस कॉलोनी से?"

कोई उत्तर देने की बजाय चोर ने उस व्यक्ति की ओर भी लाल-लाल आंखों से देखा। चोर की डरावनी दृष्टि से वह व्यक्ति डरा नहीं। इस बार उसने अपने पूरे ज़ोर से चोर के गाल पर एक चांटा रसीद कर दिया। चोर

पर इसका कोई खास असर नही हुआ। केवल उसके सिर के बडे और इधर-उधर फैले बाल, कुछ और फैल गये। चाटा मारनेवाले ने चाटा मार लेने के बाद फिर अपनी हथेली की तरफ देखा। उसे लगा कि किसी खुरदरी चीज का उसकी हथेली से स्पर्श हुआ है। उसने चोर के चेहरे की तरफ देखा। चोर के चेहरे पर कुछ दिनो की बढी हुई दाढी थी। चोर का चेहरा अब उसे कैक्टस के किसी गमले की तरह लगने लगा।

अब कुछ और लोग भी वहा आकर खडे हो गये। सबकी दृष्टि पहले चोर के बिखरे बालो पर, फिर लाल आखो और बढी दाढी पर जाती। फिर कोई तो चुपचाप तमाशा देखना चाहता, तो किसी की कुछ बोलने की इच्छा होती, "क्या है ?" "कौन है ?" "क्या किया है ?"

खडे हुओ मे से ही कोई कह उठता, "चोर है, जी . !"

"चोर है ?. मारो साले को !" किसी ने कहा। इतना कह लेने के बाद उस व्यक्ति ने चोर के बाल पकडकर उसे एक जोरदार चाटा मार दिया। चोर कुछ नही बोला।

चोर को खामोश खडा देख, एक और दुबला-पतला-सा व्यक्ति—जो शायद गये काफी दिनो से बीमार रहा होगा—आगे बढ आया। चोर से पूछा उसने, "क्यो बे ! चोर के बच्चे ! मेरी बाल्टी कहा है ?...तुम चोर हो ! तुम्ही ने ही तो चुराई होगी।.. बताओ, बताओ, मेरी बाल्टी कहा है ?"

आश्चर्यभरी निगाहो से चोर चुपचाप उस व्यक्ति की तरफ देखने लगा। चोर को शायद उस व्यक्ति की इस हास्यास्पद बात पर आश्चर्य लगा होगा कि वह कैसा अजीब आदमी है, जो यह समझता है कि दुनिया भर मे वह ही एक चोर है, और इसी ने ही उसकी बाल्टी चुराई होगी।

कुछ देर को सब एक-दूसरे की तरफ देखने लगे। फिर एक बोला, "मत छोडना ! ऐसे बदमाशो का तो कचूमर निकालना चाहिए।...अरे सा'ब ! क्या बातें पूछते हो। आजकल तो बडे अप-टु-डेट लोग भी ऐसे धधे करने लगे हैं। उस दिन की बात है सा'ब ! एक अच्छा-खासा अप-टु-डेट आदमी हमारे घर आया। बोला, 'मैं कमीशन एजेन्ट हू। बम्बई मे मेरा फाउटेन-पेनो का बहुत बडा कारोबार है। ऐसा है, वैसा है, यो है वो

है। और अटैची खोलकर लगा हमे माल दिखाने...हमने भी सोचा—कोई इज्जतदार आदमी हमारे गरीबखाने मे आया है, क्यो न उसकी आवभगत की जाए। सो जनाब ! मैं उसके लिए चाय-पानी का बदोबस्त करने दूसरे कमरे मे चला गया। पीछे से न जाने कब उसने मेरी टेबुल की दराज खोलकर उसमें से पर्स पार कर दिया। लेकिन सा'ब ! कुदरत के रग निराले है। मुझे भी लगा कि सिर्फ चाय पिलाना ठीक नही रहेगा, क्यो न कुछ नमकीन वगैरह भी मगवा लिया जाए। सो सा'ब ! पर्स में स पैसे निकालने को जैसे ही मैंने टेबुल की दराज खोली, तो मेरे तो बारह ही बज गए। देखू तो पर्स गायब !...फिर क्या था ! मैंने भी आव देखा न ताव, उस श्रीमानजी की तलाशी ली। ..पर्स उसी ने ही उठाया था, जी ! फिर तो जनाब ! बस, पूछो ही मत ! स्साले की वह मरम्मत की, वह मरम्मत की, कि बस खून बहाता घर गया।...उल्टे ही हमने उसकी पेनो की अटैची छीनकर रख ली।" उसके आखिरी वाक्य पर वहा खडे सब लोग हस दिये। सबको हसता देख उस व्यक्ति को मानो कोई बल मिल गया। आगे बढकर उसने चोर की कमर पर जोर से लात मार दी। कोई भी विरोध करने के बजाय चोर जमीन पर बैठ गया।

अब एक बोला, 'अजी, हुजूर ! ये चोर लोग स्साले सिफ चोरी करने आए, तो भी ठीक है। लेकिन, किबला ! साथ मे वे हथियार और ले आते है। चोरी करते अगर पकडे गये तो हमला करने से नही चूकते। देखो देखो, कही इसके पास भी कोई छुरी-चक्कू न हो।"

बात वहा खडे लोगो को जच गयी। एक ने आगे बढकर चोर की तलाशी ली। लेकिन चोर की जेब मे एक फटे-से रूमाल, कुछ बीडिया और माचिस के सिवाय और कुछ नही मिला।

पहले व्यक्ति ने अपनी बात को झूठा साबित होते देख हसकर कहा "चलो, ठीक है, कोई शरीफ चोर लगता है।" उसने शायद सोचा होगा कि उसकी इस बात पर लोग हसेगे, लेकिन ऐसा हुआ नही। सब फिर कुछ देर को चुपचाप खडे खडे चोर की तरफ देखने लगे।

कुछ देर बाद वहा एक और व्यक्ति आया। इतनी भीड को देख उसने पूछा, "क्या हुआ है ?"

कोई एक बोला, "चोर पकडा गया है।"

"चोर पकडा गया है ? वाह भाई ! किस्मतवाले हो।" चोर का चेहरा देखने के लिए वह थोडा आगे बढा। गर्दन नीची किए चोर वैसा-का-वैसा जमीन पर बैठा था। नये आये व्यक्ति ने चोर की तरफ देखकर व्यग्यात्मक स्वर मे कहा, "अरे छुई-मुई ! अब, गर्दन तो ऊची कर ! ऐसे कुवारी लडकियो-सा क्यो बैठा है ?" इस पर सब जोर-जोर से हसने लगे। सबको हसते देख वह व्यक्ति भी हसता-हसता चोर के और करीब गया। उसको आगे बढता देख, चोर ने गर्दन उठाकर अपनी लाल-लाल आखो से उस नये आये हुए व्यक्ति की तरफ देखा। चोर की गर्दन ऊची होते ही मानो उस व्यक्ति को भी अपना मन ठडा करने का मौका मिल गया। उसने एक जोरदार लात चोर की नाक पर मार दी। खून की एक हल्की धार चोर की नाक से बहने लगी। हाथ बढाकर उसने नाक से बहता खून पोछ लिया और खून मे डूबा हाथ अपने बालो पर फेर लिया।

थोडी देर बाद वहा से एक शराबी गुजरा। भीड देखकर वह भी आगे आया। नशे की खुमारी मे ही बोला, "क्या बात है ? तुम लोग ऐसे क्यो खडे हो ?"

एक बोला, "चोर पकडा है।"

शराबी को मानो यह कोई बडी बात नही लगी। वह फिर वैसे ही स्वर मे बोला, "चोर पकडा है ? हू ! मैं तो समझा था कोई बहुत बडा शेर पकड लिया है।" चोर की तरफ देखकर बोला, 'अरे चोर ! तूने भी शराब पी है क्या ? देख ना, तेरी आखें लाल, मेरी आखें लाल ! .. लेकिन सुना तो, चोर ! तुम चोर क्यो हो ?" शराबी के इस अजीब सवाल पर और सब लोगो के साथ चोर को भी हसी आ गयी।

चोर को हसता देख और लोगो से सहा न गया। किसी ने जोरदार लात मारकर कहा, "हसता है ? हसता है ?" तो किसी ने घूसा मारकर कहा, ' एक तो चोरी करता है, दूसरे दात दिखाता है ?" तो किसी ने उसके बाल खीचकर कहा, "बेशर्म कही का ! शर्म से डूब मर ! हसता है ! ' और ऐसे चाटो, घूसो और लातो की चोर पर बारिश-सी होने लगी।

जमीन पर बैठा चोर अब लेट गया। नाक से खून के साथ-साथ अब

उसकी आखो से आसू भी आने लगे। ज़मीन पर पडे-पडे निरीह निगाहो से उसने वहा खडे लोगो की तरफ देखा और सोचने लगा—कितनी अजीब बात है यह कि यहा खडे लोगो मे से किसी को भी इस बात से सरोकार नही है कि मैंने क्या चोरी की है, किसकी चोरी की है, क्यो चोरी की है, की भी है या नही की है।...लेकिन इन सब लोगो को तो बस एक ही बात से सरोकार है कि एक चोर की पिटाई करनी है। चाटो, घूसो और लातो से अपने मन की आग को ठडा करना है। बाकी सच तो चोरी से किसी का कोई सरोकार है ही नही।

••